9

RAJ WELDING
&
ENGINEERING WORKS

अद्भुतम

सारी सृष्टि- सारा क्रम, प्रकृति, अन्तरिक्ष, आकाश, उत्पत्ति तथा प्रलय सब अद्भुत है किसी ने इसे लीला कह कर वर्णन से पीछा छुड़ा लिया है किसी ने इसे माया कहकर नया झमेला खड़ा कर दिया है:शायद वह अच्छे होंगे जिन्होंने नास्तिकता की शरण लेकर इस विशाल कार्यालय को न किसी का माना है न ही किसी हेतु सिरे मढ़ा है, बेमतलब का संसार, बेमतलब के व्यवहार, शून्य को शून्य में मिलाकर अपनी अक्ल का भांडा ही फोड़ दिया है। सब कुछ देखते हुए नई खोज-नित नए आयाम बढ़ते हुए ज्ञान के कोष अचम्भा पर अचम्भा की चोट मस्तिष्क वाले को खोया गया सा बनाए जा रहे हैं, सचमुच विचित्र तमाशे का बाजार एक भूल भुलैयां का व्यापार खड़ा हो गया है, सो मैंने भी अद्भुत का थोड़ा-सा दाना अद्भुत में फिसल जाने को प्रस्तुत कर दिया है ताकि शायद अदभुत की परिभाषा में हम भी अदभुत के पुजारी हो पाएं यह प्रयास है अदभुत की व्याख्या भी अदभुत के परिमाण से अदभुतम तनिक मात्र है।

स्व० प्रो० रामदेव जी देहली के इन्द्रप्रस्थ कालिज में प्रोफेसर थे, उनके सत्संग में मुझे भी लाभन्वित होने का अवसर मिला सो यह छोटा-सा प्रयास उस महानात्मा को श्रद्धाँजलि रूप समर्पित करने का सौभाग्य ले रहा हूं, भगवान की यह भी

अद्भुत क्रीड़ा है कि सद्पुरुष लाये भी जाते हैं शीघ्र ही किसी नए जन्म को चलते कर दिए जाते हैं इस खेल में, मेरी लेखिनी इधर-उधर का घुटाला यदि महान् अद्भुत का संकेत मात्र हो सके, तो अपना सौभाग्य मानूंगा—प्रिय रमेश बखशी जिसने अत्यन्त स्नेह तथा लगन से पुस्तक लिखने में सहयोग तथा सहायता दी है, का हार्दिक आभारी हूं।

भीमसेन दीवान

एक संक्षिप्त वृत्तान्त

स्वर्गीय प्रो० रामदेव जी आसानपुर जिला मुजफरगढ़ (पाकिस्तान) के रहने वाले थे, वह चार भाई थे, उनमें से ज्येष्ठ लाला रामचन्द जी पक्के आर्य समाज सेवी, साधु स्वभाव ने अपना सारे जीवन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को समर्पित कर रखा था यद्यपि राजकीय सेवा उन्हें बुलावा दे पाई पर उस संतोषी जीव ने सारा जीवन से अपना शुभ संसार बनाना उचित जाना। उन्होंने अपने छोटे भाई रामदेव जी को लाहौर डी० ए० वी० कालिज में संस्कृत की एम० ए० करा दी, श्री रामदेव जी की धार्मिक रुचि, शास्त्रों में लगन, स्वच्छ जीवन, उक्त कालिज में आजीवन पढ़ाने के लिए लाइफ मेम्बर बनने का सुअवसर प्रस्तुत हुआ पर उनकी वैराग्य वृति ब्रह्मचर्यमय जीवन, उन्हें स्वामी सियारामजी के चरणों में हरिद्वार ले पहुंचा। योग साधना द्वारा उभरती जवानी में उनको अपने जीवन के मार्ग ढालने का संदेश मिला पर टाइडफाइड बुख़ारने उनकी राह बदल डाली अतः वह पुनः पंजाब लाए गए तथा जालन्धर डी० ए० वी० कालिज में प्रोफैसर नियुक्त हुए वहां भी उनको लाइफ मेम्बर बन जाने का प्रस्ताव मिला। जालन्धर में उन दिनों गृहस्थी ही किराये पर मकान प्राप्त कर सकते थे, उनके लिए गृहस्थ का वरदान लेने का हेतु बना। पं० गंगा राम जी अनाथालय के संचालक के आशीर्वाद से प्रोफैसर जी को कन्या महाविद्यालय जालन्धर की एक सुयोग्य स्नातिका का प्रणय सूत्र मिला। उनका गृहस्थ एक सुपुत्री व दो सुपुत्रों से सुशोभित हुआ। यह कुलीन आर्य छोटा

सा घराना शान्ति व संतोष पूर्ण जीवन में ख्याति पा सका। भाग्य ने उनका प्रस्थान जालन्धर से देहली इन्द्रप्रस्थ गर्लज कालिज के लिए निर्धारित किया, जहां वह संस्कृत अर्थशास्त्र तथा हिन्दी के प्रध्यापक रहे। अपने कर्त्तव्य पालन द्वारा कालिज अधिकारी इन से प्रभावित थे। प्रत्येक वर्ष उनकी छात्राएं विश्व-विद्यालय का संस्कृत स्वर्ण पदक प्राप्त करती रहीं। आर्य समाज से उनका विशेष प्रेम था। महर्षि के नियमों में ओत-प्रोत जीवन आर्य संसार में उनकी ख्याति का कारण बना, वह हनुमान रोड आर्य समाज के अनेक वर्ष प्रधान रहे। पचपन वर्ष की आयु में रोग ने उनको आ दबोचा तथा वह प्रभु के प्यारे हो गए। स्वामी सत्यानन्द जी का उनको विशेष आशीर्वाद प्राप्त था। स्वर्गीय प्रोफेसर जी ने हिन्दी व्याकरण में योग्यता पूर्ण पुस्तकें लिख कर हिन्दी जगत की सेवा की। उनकी धर्मपत्नी श्रीमति ठाकुर देवी सहचरी तथा अनुचरी का सौभाग्य ले पाई। देहली में उन दिनों इस परिवार को एक आदर्श आर्य गृहस्थ गिना जाता था। श्रीमति जी भी हनुमान रोड आर्य समाज की उपप्रधाना रहीं। उनकी प्रभु भक्ति सुरीले गान भक्ति विभोर प्रार्थनामय जीवन उत्सवों तथा साप्ताहिक सत्संगों में विशेष आकर्षण का कारण था। स्वाध्याय पूर्ण। यह देवी अब भी समाज सेवा का सौभाग्य लेती हैं। एवं यह दम्पति आर्य जगत् में श्रेय मार्ग के पथिक, संतोष, शोभा, श्रेष्ठ जीवन के भागीदार कहे जा सकते हैं।

स्वर्गीय प्रोफैसर जी में विशेष प्रेम के कारण मैं उपरि चन्द शब्द उनकी सूची रूप प्रस्तुत करके सम्मानित होता हूं।

धर्म चन्द दीवान
प्रिंसीपल आडियल स्कूल फार चिल्ड्रन हिसार

अतो विश्वान्यद् भूता चिकित्वां अभिपश्यति ।।
कृतानि या च कर्त्वा ।। ऋ० १-२५-११

हे मनुष्य ! संसार के आश्चर्यों को देख कर चकित होना छोड़ दो। किन्तु इन को देखकर इनके कर्ता को पहचानो। उस नट को पहचानो जो कि संसार को यह अद्भुत नाच नचा रहा है।

हमारा ज्ञान और विज्ञान संसार के आदि से आत्मा परमात्मा तथा प्रकृति को नित्य मानता है। यह मध्य वाली आत्मा एक चमत्कार है जो प्रकृति के द्वारा परमात्मा तक पहुंचने की तस्वीर लेता है। प्रकृति के ईंधन से परमात्मा की चिंगारी से सत्कृत्य यह आत्मा बड़ी सारगर्भित और आनन्द-पूर्ण है। इस आत्मा की महानता को दृष्टिगोचर करने के लिए इस अद्भुत नामी पुस्तक का प्रयास केवल मात्र उद्देश्य है।

विज्ञान से मेरा अभिप्राय योग साधना से है जिसके द्वारा हमारा देश प्राचीन काल में असाधारण यश प्राप्त कर चुका

है। पश्चिम का विज्ञान प्रयत्न तो कर चुका पर हार चुका है। वह कभी भी वास्तविक योग साधना के बिना आत्म स्वरूप नहीं हो सकता, यह एक बड़ा रहस्य है जिसकी महानता केवल हमारा साहित्य हमारी आध्यात्मिकता तथा हमारा क्रियात्मक जीवन देख और दिखा सकता है। आत्मा केवल एक ज्ञान नहीं परन्तु अनुभव में आने की सत्ता है। जो एक पुनीत वास्तविकता है जिसके खिलवाड़ साधु संन्यासी और महान योगी प्रस्तुत करते हैं। इसकी पहचान एक वरदान है। अपने ऊपर बड़ा एहसान है। सृष्टि से एक बड़ा न्याय है।

परमात्मा व प्रकृति के मध्य में पुकारा गया आत्मा इस जोड़ का एक रहस्य लेता है। परमात्मा अत्यन्त चेतन, प्रकृति जड़, उसके मध्यवर्ती आत्मा को, दोनों ओर मुड़ने का, दोनों की अनन्त सत्ता को खदाड़ने का सामर्थ्य, अधिकार है, यही तथ्य बड़ा गूढ़ है। आत्मा की यही शक्ति बड़ी निराली है। जब प्रकृति ही इतनी रहस्यपूर्ण और विचित्र है तो उसे कुरेद सकने वाली सूक्ष्म सत्ता अत्यन्त महान ही हो सकती है। यह चेतनता तो बहुत प्रभावशाली है। इसी सत्य को संभालने का सौभाग्य आत्मा को प्रदान हुआ। संसार भर की महान आत्माएं इसी के रूपान्तर हैं इसी प्रकार रावण, हिटलर, ड्राक्युला-जर्मनी का नृशंस न्यायाधीश, कारपेजस, नादरशाह इत्यादि भी आत्मा के ही भिन्न रंग रूप हैं। यह आत्मा ही बुद्धि सम्पन्न व्यक्तियों को खोखला बनाकर आत्महत्या के लिए प्रेरित भी कर सकती है। यह अद्‌भुतता विचारणीय है। इसकी असीम लीला सचमुच समझने का विषय है। मानवीय सत्ता, असुरता और देवत्व दोनों से मिल कर बनी है। परमात्मा ने यह छट केवल मनुष्य को ही दी है। चाहे तो वह

दिव्य दैवी प्रवृत्तियाँ अपनाए अथवा आसुरी पाश्विक वृत्ति अपना कर नर पशु से नर पिशाच बन जाये।

मनीषियों ने इस सूक्ष्म सत्ता को आत्मतत्व जीव सत्ता का नाम दिया है और कहा है कि वह कायकलेवर तक सीमित नहीं रहती लेकिन विकसित होकर विराट चेतना से भी जा जुड़ती हैं। आत्मा का सूक्ष्म शरीर एटमिक बाडी है, स्थूल शरीर बल्ब की तरह एक खोल है यही व्याख्या दोनों शरीरों की प्रमाणिक है, वास्तविकता है और एक अद्भुत लीला है। "मैं जीता हूं" यह माना और जाना जा सकता है। "मौत मेरी नहीं है" यह नजर में आती है इस पर किसी अन्य सत्ता का अधिकार है, यही बात गांठ बाँध लेने की है। मौत आती रही हर एक उसका शिकार होता रहा परन्तु किसके आने और चले जाने से घटना घटती है, इस सफाई से आँखें मूंदते रहना बड़ा धोखा है। यही अद्भुत वास्तविकता आत्मा की सफलता विराट रूप उच्चस्तरीय अवस्था समझ में ले आने की है। जीवन का रहस्य समझने के लिए जीवन और मृत्यु की बांटदृष्टि में ले आना अत्यन्त आवश्यक है। जब यह दृष्टिकोण बुद्धि और अनुभव में बट जाती है कि शरीर आत्मा से भिन्न है तो मौत का जनाजा निकल जाता है। केवल योग द्वारा जीवन और मृत्यु का विश्लेषण बन पाता है। शरीर नाशवान है आत्मा अमर है, यह न तो थ्यूरी है न ही सिद्धान्त है, अपितु एक अमर सत्य है। जिसकी ऊंचाई हिमालय की एवरस्ट चोटी से ऊंची है, पाताल सेअधिक गहरी है, सूर्य से अधिक बढ़ कर बड़ा प्रकाश है, चन्द्रमाओं से अधिक शीतलता तथा सुन्दरता है, चकाचौंध सृष्टि तथा उपमाओं से भिन्न एक विचित्र वास्तविकता है।

चान, अपनाने मोल लेने, काबू में ले आने की क्षमता रखती है। इसलिए भी इसकी गम्भीरता गोपनीय है। सर्व अधिक विशालता का यह रूप कि अनन्त सत्ता, शक्ति, सामर्थ्य, महान से महान, संसारों के रचयिता के स्वरूप प्रतिभा को भी अपने में यह आत्मा संभाल सकता है। इससे बढ़ कर इसका गौरव और क्या ही हो सकता है? सर्वशक्तिमान परमात्मा को भी जो आत्मा प्राप्त कर सकती है यही उसके सौभाग्य की हदबन्दी बनती है। इसलिए यह मध्यवर्ती नाम बड़े दाम और बड़े शान वाला है जिसकी पहचान अत्यन्त आवश्यक है। यही रहस्य संसार का सबसे बड़ा रहस्य है जो सब चर्चाओं में महान है नित्य और अनादि है।

आत्मा से इन्कार करने वाले लोगों से संसार को सर्वाधिक खतरा है। हमारे यहाँ भी चार वाक्—जो आत्मा को नहीं मानते थे, देश में बड़ा उपद्रव कर पाये। यदि मान लिया जाए कि भीतर कुछ भी नहीं, केवल शरीर ही शरीर है, जिसका नाश हम प्रतिदिन अपने सामने इन नग्न आँखों से देखते रहते हैं, तो फिर किसी सत्ता के उद्बुद्ध होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मृत्यु आत्मा की अनन्त यात्रा की एक सीढ़ी है जो किसी को यहाँ से वहाँ और वहां से यहां लाती फिरती है। आखिर जीवन है क्या? इस रहस्य का उद्घाटन करने के लिए मर्मज्ञों की परिषद् बुलाई गई और पूछा गया कि जिसने जीवन को जैसा पाया वह अपनी मान्यता व्यक्त करे! बादल बोला—जीवन एक घुटन भर है। चन्द्रमा ने कहा आंख मिचौनी है, पवन ने बताया दिशाहीन निर उद्देश्य भटकन, समुद्र ने बताया विशालता, बूंद बोली—जीवन पतन के अतिरिक्त और कुछ नहीं, अंकुर बोला—अभिनव अनावरण, सरोवर ने कहा —

मर्यादा का बन्धन, नदी ने बताया—सतत प्रवाह ! बात बढ़ती गई, भाष्यकार बहुत थे। विवाद का अन्तर न दीख पड़ा तो मृत्यु ने कहा–तुम सब मिलकर जितना जानते हो जीवनके बारे में, असंख्य गुणा जानती हूं मैं, अपने उस जलपान के सम्बन्ध में। अर्थात् मौत आत्मा का जलपान ही ठहरा। पर यात्री तो असल में आत्मा ही है जो कि मुख्य अतिथि है, जीवन का शृंगार है, और सारी सृष्टि के अभिनय का एक ही मुख्य पात्र। मैंने भी इसीलिए इसी मुख्य पात्र को अपना मुख्य विषय चुना है। क्योंकि जब यह आत्मा जाग उठता है। अपने पन को पहचान कर लेता है तब यह करोड़ों लोगों को अपना अनुयायी बना लेता है। उनके दिलों का स्वामी बन जाता है और सदियों तक अपने नूरानी जलवे का प्रभाव कायम रख लेता है। भगवान कृष्ण, राम, महात्मा, बुद्ध ईसाई मसीह, महावीर, महर्षि दयानन्द, महात्मा गांधी, अपने-अपने समय के छोटे से दीपक थे जो अपने समय में एक सूर्य ग्रह बन कर चमके और समय के अन्धकार मिटा सकने में सफल हुए। हमारे देखते देखते महर्षि दयानन्द—एक ही श्रेष्ठ व्यक्तित्व ने अपने समय में तहलका मचा दिया कि इतनी बड़ी आंधी बनकर आये और पतित देश का उद्धार कर गए। महात्मा गाँधी सात समुद्र पार सरकार की जड़ें हिला गए, केवल एक अहिंसा नामी अस्त्र से। इसलिए स्वामी विवेकानन्द भी कहा करते थे कि उसे सौ आदमी मिल जायें तो वह अपने सारे देश का उद्धार कर लेंगे। छोटे-से अणु 'जो पहले दिन माँ के पेट में प्रवेश करता है अपने में पूरे शरीर की रूप रेखा छुपाये रहता है। आँख का रंग, शरीर की लम्बाई, उसकी मोटाई समूचा रूप, पर छिपा-छिपा" आत्माशासन से इतना निखरता है कि अनेकों का परम पूज्यनीय और सम्मानित व्यक्ति करार होता है महकवि नागोची के

ग्रनुसार "फरिश्ते ने जैसे ही इन्सान को देखा तो ग्राश्चर्य-चकित रह गया। इन्सान के मस्तक पर छिटकी पसीने की प्रत्येक बूंद में भगवान विराजमान थे।"

नजर-नजर का भेद है अपनी काया की माया मापने की रीति है जो उठ बैठे हैं वह विवेको भो ठहरे, न्यायप्रिय भो हुए, आतमबली होकर साथ ही कर्मठ भी थे, कर्ता भी थे, भोगी भी थे, परन्तु परमात्मा स्वयं एक ऐसे न्यायाधीश उनमें विराज मान हो गए जो व्यक्ति के कर्मों को देखते, यथा समय दण्डित भी करते, उद्धार में यह एक ग्रौर निराला रूप है जिस की विस्तारपूर्वक रूपरेखा हम ग्रागे देखेंगे। पापी आत्मा अपने अन्तर से इतना सताया होता है कि ग्रपने ग्राप को स्वाहा कर देना उचित जान लेता है। इसका उदाहरण भी हमें ग्रागे मिलेगा। दूसरी ग्रोर श्रेष्ठ ग्रात्मा वायु की तरह ऐसा हलका होता है कि उड़ता उड़ता प्रत्येक को समीर, जीवन, तथा उल्लास प्रदान करता जाता है। छोटा सा फूल खिलता है, दूर-दूर तक के रास्तों तक अपनी ख़ुशबू फैला पाता है। सिद्ध पुरुषों के अनुसार संसार को बदलने के लिए थोड़े से लोग ग्रात्म-स्वरूप व ग्रात्मवत् होने अत्यन्त आवश्यक हैं। इसलिए यह जो हम ग्रात्मा है ग्रपना रूप रंग, रूपरेखा, महिमा, प्रतिष्ठा, प्रवाह का अवलोकन करने का सौभाग्य लें इसी से इस पुस्तक को भाग्य प्राप्त होगा।

——

भेंट दूसरी

हम आत्मा हैं यह स्वयं में एक प्रकाश है। आत्मा होने के कारण एक स्वतन्त्र सत्ता और सार्थक इकाई है। यही पूर्ण रहस्य है। वेद मन्त्रों में साफ कहा गया है "हे आत्मन् ! तू स्व-राज्य के अनुसार साधना करता हुआ आगे बढ़, शत्रुओं का दमन कर, तेरा हथियार रोका नहीं जा सकता, तेरी शक्ति निश्चय से ही सब को दबाने वाली है, क्योंकि यह तेरा निजी बल है, राक्षसों के काम रूप व पाप रूप को मार कर अपनी प्रजाओं को जीत ले।" जीवन इसी से बनता है अर्थात् आत्मा का स्वरूप जीवन से प्रकाशित होता है। हर आत्मा के स्वरूप को समझा जाना चाहिए और उसके साथ जुड़े तथ्यों को स्वीकार किया जाना चाहिए क्योंकि यही आत्मा का विस्तार है। जीवन एक चुनौती है, एक संग्राम है, एक जोखिम है, एक रहस्य है, तिलस्म है, भूल भुलैयां, गोरखधन्धा है, एक गीत है जिसे पंचम स्वर में गाया जा सकता है, एक स्वप्न है जिसमें अपने को खोया जा सकता है उसके द्वारा रसास्वादन किया जा सकता है, जीवन है अवसर जिसे गंवा देने पर सब कुछ हाथ से गुम किया जा सकता है। जीवन कर्त्तव्य के रूप में अत्यन्त भारी किन्तु अभिनेता की तरह हंसने हंसाने वाला हल्का फुल्का रंगमंच भी है, जीवनएक प्रतिज्ञा है, एक पात्र है और कला है, इसको किस

प्रकार सफल बनाया जा सकता है जिसने, इसे जान लिया और मान लिया, समझना चाहिए वह सच्चा रत्न पारखी और उपलब्ध-विभूतियों का सदुपयोग कर सकने वाला भाग्यशाली है, इसमें संभाल भ्रान्तियों के कारण उत्पन्न होने वाले खतरों से बचा जा सकता है। जीवन सौन्दर्य है, जीवन प्रेम है, जीवन वह सब कुछ है जो नियन्ता की इस सुविस्तृत सृष्टि में सर्वोत्तम कहा जा सकता है। इस जीवन के खिलाड़ी हम आत्मा वन्दनीय हैं, सराहनीय हैं और वरेणीय हैं। यह जीवन के सारे फूल आत्मा की ही रचना हैं।

आत्म प्रकाश केवल उजाला ही नहीं अपितु एक सबल दीप्ति है। यह भी एक अद्भुतता है जिसे समझ लेना आवश्यक है। जागा हुआ आत्मा बड़ी आकर्षणीय शोभा है उसके खिलवाड़ देखने के हैं। संकल्प शक्ति सम्पन्न आत्मा एक विचित्र सौन्दर्य है। शुभ विचारों में तेज उसकी अपनी उपज है जो बाधाओं को चीर कर रख देता है। यह एक बड़ा निरालापन है। इसलिए यह आत्मा का एक बड़ा भारी गौरव बनता है। जागी हुई आत्मा परिस्थितियाँ नहीं देखा करती। समय पर नजर नहीं डाला करती। काल की ओर ध्यान नहीं देती, वह तो केवल उद्बुद होते ही आप राह संभालती है। यह एक बड़ी प्रचण्ड उपलब्धि है। ये इन्द्रियाँ हमारी अपनी प्रजा हैं। केवल हम इनकी सत्ता से बेख़बर हो रहे हैं। हमारे सिवा इन का कोई दूसरा स्वामी नहीं। हमारे संकल्प के मुकाबले में कोई ठहर नहीं सकता। स्वामी विरजानन्द को जब संकल्प बन पाया निज चेतना की उत्कृष्टता का, अपने प्रज्ञाचक्षु होने पर भी उन्होंने कितनी महान् उपलब्धि पाली जिसके कारण उन्हें व्याकरण का सूर्य कहा गया। यहाँ कल्पना हार जाती है।

सम्भावना भाग जाती है, यह समझते हुए जो व्यक्ति जीवन के साधारण ग्रायाम से वंचितहै वह किस प्रकार ग्रपने अन्दर इतना प्रकाश समा सका जिसके सामने वह दयानन्द जिसने सैकड़ों पुस्तकें पढ़ ली थीं, बन-वन छान मारे थे, ग्रनेक पहुँचे हुए व्यक्तियों के दरवाजे खटखटाये थे, वह कितना सुन्दर वेला होगा जब जौहरी ने जौहरी को पहचान लिया था। रुक सके तो यहाँ बैठ लेने का और सोच लेने का गहरा मजमून बनता है। त्याग ग्रौर तपस्या से खुद कुन्दन हुआ हुआ दयानन्द जब प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द के द्वार पर पहुंचा, ग्रपना सारा संकलित ज्ञान, खोज, जान-बूझ उसके चरणों पर स्वाहा करने को तैयार हो गया। कठिनाई से प्राप्त किये गये कई ग्रन्थ नदी में फेंक देना स्वीकार कर लिया, हद की बात है यह, कि जिसे कुछ नजर नहीं ग्रा रहा था उसके दिव्य अमृत स्रोत में घुल जाने का व्रत स्वामी दयानन्द ने धारण कर लिया। दो तारें विरजानन्द ग्रौर दयानन्द की ऐसी जुड़ीं कि एक विलक्षण विद्युत चमक गया जिसने दुनिया में एक नया नूर बरसा दिया ग्रौर एक ग्रजूबा बन कर रह गया। संकल्प बड़ा वाजी होता है आत्मा का प्रमुख उद्गार होता है, विचार क्या होता है, विचार क्यों ग्राता है, एक कायाकल्प हो जाने का गौरव होता है। मैत्री याज्ञवल्क्य के साथ पत्नी नहीं धर्म पत्नी बन कर रहीं, रामकृष्ण परमहंस की सहचरी शारदामणि का भी ऐसा ही योगदान रहा, सुकन्या ने च्यवन ऋषि के साथ किसी विलास वासना के साथ रहना स्वीकार न किया था पर उनके महान् लक्ष्य में आहुतिं देने का हाथ बटाया था। जापान के गांधी, कागावा की पत्नी दीन-दुखियों की सेवा का उद्देश्य लेकर उनके साथ दाम्पत्य सूत्र में बँधी थी, कुन्ती सामान्य रानियों की

तरह एक महिला थी, परन्तु अपने आत्मबल और तपस्या से कुन्ती ने अपने अन्दर देवत्व जगाया, आकाशवासी देवताओं को अपना सहचर बनाया और पांच देवपुत्रों को जन्म देसकने में सफल बन सकी। तपस्विनी पार्वती अपने व्रतसंकल्प के सहारे शिव की अर्धांगिनी बन सकने का गौरव प्राप्त कर सकी, बंगाल के निर्धन विद्वान् प्रतापचन्द्र राय ने अपनी सारी सम्पत्ति को बाजी लगा कर महाभारत के अनुवाद कार्य में हाथ में लिया। वे उसे अपने जीवन में पूरा न कर सके तो उनकी पत्नी ने अपना संस्कृत ज्ञानपूरा करके उस अधूरे काम को पूरा करके दिखा दिया, विद्वान् कैयट व्याकरण शास्त्र की संरचना में लगे हुए थे, उनकी पत्नी भारती मूंज की रस्सी बँट कर गुजारे का प्रवन्ध करती थी। साम्यवाद के प्रवर्तक कार्लमाकर्स भी कुछ कमा नहीं पाते थे, यह कार्य उनकी पत्नी जैनी करती थी, जो पुराने कपड़े खरीद कर उनमें से वच्चों के छोटे कपड़े बनाती और फेरी लगा कर बेचती थी, विनोबा की माता को ये श्रेय मिला जिसने अपने तीनों वालकों को ब्रह्मज्ञानी बनाया, शिवाजी की माता जीजाबाई को भी यही गौरव प्राप्त हुआ, मदालसा ने अपने सभी वालकों को बाल ब्रह्मचारी बनाया, सत्यकाम जाबाल वेश्या-पुत्र थे पर माँ की किसी दिव्यता से ब्रह्मज्ञान की ओर चल निकले, रैदास, कवीर, वाल्मीकि आदि का जन्म छोटे कहे जाने वाले परिवारों में था पर निज आत्म बल से वे महानता के उच्च पद पर पहुँचने में सफलता प्राप्त कर सके।

मनुष्य की संकल्प शक्ति इतनी बड़ी है कि वह अग्रगमन के मार्ग में उत्पन्न होने वाली प्रत्येक बाधा को पैरों तले रौंदती हुई आगे बढ़ सकती है। विहार के हजारी बाग जिले के हजारी नामक किसान ने उस प्रदेश के गाँव-गाँव में आम के

बगीचे लगाने का संकल्प लिया। हजारी किसानने उस सारे इलाके में आम के वृक्ष लगाये और उन आम उद्यानों की संख्या एक हजार तक जा पहुंची जिस कारण वही इलाका इन दिनों बिहार का हजारी बाग कहलाता है। ये हैं थोड़े-से बिन्दु जो सत्य संकल्प सागर की परिणीति पेश करते हुए व्यक्ति और समाज के लिए महान् उपलब्धियाँ पेश कर पायी हैं। किसी को कोई फला-फूला देखने में देर नहीं हुआ करती। एक योगी की तपस्या उसके इर्द-गिर्द खुशबू फैला सकती है और लोग वहाँ उसका नूर देखने चल पड़ते हैं परन्तु इससे परे एक परम योगी का दृष्टान्त भी आपके सामने है जो अपने देश का भाग्य बदल सका था। ये महर्षि दयानन्द थे जिनकी लिखित पुस्तकों ने अनेक जीवन बदल दिये। नये जहान बना दिये। किसी ने एक ही बार उनका प्रवचन सुना, एक ही बार दर्शन किये, एक ही बार प्रसाद लिया और वे मधुमय हो गये।

आत्मा देखी तो नहीं जाती यह एक सचमुच निराली बात है औरन मानने की बात है, पर है सच, जिससे दूर हुआ जाता नहीं। हमारे ही दिनों में चेतना का प्रतीक आत्मशक्ति का एक दृष्टान्त सामने आया है। प्रसिद्ध आर्य समाजी संत स्व० श्री आनन्द स्वामी के पुत्र लेखक पत्रकार श्री रणजीत ने अपने संस्मरण लेख में यह बताया था कि किस प्रकार उनके पिता ने, उन दिनों जबकि वे जीवित थे और भारत में थे तथा श्री रणजीत विदेश में प्रवास पर थे, एक बार भयानक खड्ड में गिर पड़ने से चेतावनी देकर उन्हें रोका था। अन्य कई अवसरों पर भी उनकी मदद वमार्ग दर्शन का कार्य उनके पिता ने किया था जबकि वे उनसे सैकड़ों मील दूर हुआ करते थे। ये घटनाएं विरल व अपवाद नहीं। ऐसे लोगों की कमी नहीं जो दूरस्थ

परिजनों की तीव्र संवेदना से याद करने पर, उनके पास आभासरूप में देखे जाते हैं ऐसे भी लोग हैं जो भावाकुल होकर जब किसी प्रियजन का स्मरण करते हैं, तो वे उन्हें उनके सामने इस स्थिति में दीखता है जिस स्थिति में वह उस समय होता है, बाद में पत्र मिलने पर व प्रत्यक्ष मिलने पर उस स्थिति की पुष्टि होती है। विशेषकर नारियों को दूराभास और दूर अनुभूति का सौभाग्य प्रायः मिलता है। परामनोवैज्ञानिक हैराल्ड व मनःशास्त्री हैन ब्रुक ने अनेक वृतान्त संकलन किये हैं जो आत्मा की इस चेतनता की निःसीमता का परिचय देते हैं।

वेद मन्त्र तो इस सन्देश से परिपूर्ण हैं ये कहते हुए कि यदि हमअपने संचित बल का ज्ञान प्राप्त कर लेवें, उद्बुद हो जायें, हमारे अपने अंदर एक धारा वह निकलती है, जो हमारा भाग्य बना देती है, यह स्रोत किसी की उधार नहीं, निज बल की पूंजी है। अदृश्य आत्मा का यह बल किसी बाहरी वस्तु से प्राप्त नहीं हो सकता। ये चंचल मन जिसे राजसिक प्रकृति का बना मानते हैं, जब हमारी अर्थात् आत्मा की देखभाल में आ जाता है तब यही मन एकाग्रता लेता है, सेवक बनता है, शान्त होकर चुपचाप मर जाता है, और विस्मय का कारण होता है कि कभी तो हमें यह व्याकुल किए फिरता था और वही मन हमारी पकड़ में आकर हमारा सच्चा हितैषी बन जाता है। मन से मन को मारा जाता है संस्कारों से संस्कार मारे जाते हैं। माया मरती इसलिए है कि इसका अपना बल नहीं है। अपनी आत्मा संभलती है इसलिए कि इसका निजी बलस्वाभाविक है, आत्मजात है, जब यह बल अपनी ही आत्मा का अपने ही द्वारा संभाला जाता है तब दो देश-स्वदेश व

विदेश शारीरिक व आध्यात्मिक राज्य, स्वराज्य प्राप्त करते हैं, आत्मा की बागडोर में आ जाते है और वह आत्मा इतनी समुन्नत हो जाती है जिसकी कल्पना पन्ने नहीं संभाल सकते और न ही पेश कर सकते हैं।

तीसरी भेंट

आत्मा का उद्बुद हो जाना, जागरूक हो जाना, अपनी संभाल में आ जाना, ईश्वर को सत्कृत करना, यह भी एक विचित्रता है। जिसकी पहचान आवश्यक है, क्योंकि सत्कृत हुआ भगवान् आशीर्वाद पर आशीर्वाद देता है, संरक्षक होजाता है, जन-कल्याण के लिए एक प्रतिनिधि नियुक्त कर देता है। एवं "जीवन एक ईश्वरीय अनुदान है" की रूपरेखा ले पाता है। साधु विस्वमानी ने ठीक कहा है—"जीवन ईश्वर है या ईश्वर जीवन" इस पर ताओ धर्म के दार्शनिक बहुत समय तक विचार करते रहे और अन्ततः इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जीवन मनुष्य के लिए ईश्वर का सर्वोपरि उपहार है। इसकी महिमा इतनी बड़ी है कि जितनी संसार में अन्य किसी सत्ता की नहीं, इसलिये उसे ईश्वर का सच्चा प्रतिनिधि माना जाये तो इसमें अत्युक्ति न होगी। ईश्वर की झांकी जीवन सत्ता की संरचना और सद्भावना को देखकर की जा सकती है। यदि उसकी ठीक तरह उपासना की जा सके तो वे वरदान उपलब्ध हो सकते हैं जो ईश्वर के अनुग्रह से किसी को भी मिल सके हैं। यह प्रत्यक्ष देवता है। हमारे इतना समीप है कि मिलन से उत्पन्न असीम आनन्द की अनुभूति अहर्निश की जा सके।

जीवन का उद्देश्य है अपने अन्तराल में छिपे दिव्य का,

अद्भुत का, सुन्दर का दर्शन कराना। उस ईश्वरीय ज्ञान के साथ जोड़ देना जो इस ब्रह्माण्ड की आत्मा है। पूर्ण है और वह सब है जिसमें मानवीय कल्पना से भी अधिक सुखद का, सौन्दर्य का सागर लहराता है। ईश्वर को समझना हो तो जीवन को समझो। ईश्वर को पाना हो तो जीवन को प्राप्त करो। हम जीवन रहित जिन्दगी जीते हैं इससे आगे बढ़ें, गहरे घुसें, निर्मल करें और उस महान अवतरण को प्रतिबिम्बित करें जो प्रेम के रूप में आत्म सत्ता के अन्तराल में आलोक की एक किरण जैसा विद्यमान है, आत्मा को दिव्य से ओतप्रोत करने की साधना से ही वह प्राप्त हो सकता है, जिसे जीवन का लक्ष्य और वरदान कहा गया है। यह अत्यन्त सही है कि जो आत्मा को जान लेता है उसी के लिए भी परमात्मा का जान लेना सम्भव है यही विचार अथर्ववेद में भी प्रस्तुत है और ऋग्वेद में भो आत्म ज्ञान को वास्तविक ज्ञान कहा गया है :—

"ये पुरुषे ब्रह्मविदुः ते विदुः परमेष्ठिनम्।" अथर्ववेद

कोई सोचे तो परमात्मा का प्रतिनिधित्व कितनी बड़ी भारी उप- लब्धि है, पदवी है। जिससे मानव ही अधिकृत्य होता है और भगवान भी सतकृत होता है। भेद खड़ा है केवल इस अनुभूति का, अपने सुर्खरू होने का और अपनी ऊंचाई की संभाल का। अद्भुत दृष्टान्त अद्भुतता की लड़ी बनाते हैं, उड़ानें लेते हैं, असम्भव को सम्भावना की शान देते हैं, एवं विचित्र रंग ढंग के चर्चे निकलते हैं। ये उद्बुद आत्माएं जब अपना दृढ़ संकल्प उसके चरणों में डाल देते हैं तब बाधाएं किसी की कल्पना के बाहर की चीज होती है। उनकी आत्मा

का बल कदम कदम पर अमृत वर्षा की झड़ी होता है, अद्-भुतता में शराबोर हो जाना एक निरालापन है। कहा जाता है जब दलाईलामा को तिब्बत से चल कर, चीनी शासकों से बचकर भारत का रुख लेना था, उनके चारों ओर कड़ा पहरा डाल दिया गया ताकि चीनी अधिकारियों के पंजे से वो खिसक न जायें। ये सरलता से समझा जा सकता है कि एक देश किसी विद्रोही के फंसाने की क्या संरक्षता की रूप-रेखा बनाते हैं। हवाईजहाजों की उड़ानों से हिमालय की तराई में देखभाल जाँच-पड़ताल और सावधानता बरती गई। परन्तु दलाईलामा का दृढ़ संकल्प भगवान में दृढ़ विश्वास इतना गम्भीर था कि चीनी शासकों की क्या मजाल कि उनको कुछ हाथ लग सके।

जिस दिन दलाईलामा को तिब्बत के क्षेत्र से भारत की ओर रुख लेना था, भली प्रकार सूझा-बूझा यात्रा का रास्ता तय कर डाला गया, हिमालय पर्वत पर ऐसे बादल थोड़ी बुलन्दी पर छा गये कि सारे रास्ते पर सारी घाटी पर, बिना किसी रुकावट के दलाईलामा सुरक्षित के सुरक्षित चले आये, शासकों के हवाई जहाज बादलों के ऊपर उड़ रहे थे, अपने को तसल्ली दे रहे थे कि इनका पहरा कड़ा है, सही है दलाईलामा तिब्बत में काबू है, परन्तु भगवान का पहरा मानव के पहरों से अधिक गम्भीर होता है, परमात्मा आत्मा को राह देता गया, सुरक्षा का वरदान लेता गया, बादल भी कायम रहे, उड़ानें भी कायम रहीं, परन्तु दलाईलामा सुरक्षित भारतीय हद में प्रवेश कर गये और धर्मशाला में आ बसे। हवा ने खबर दी कि दलाईलामा तो भारत पहुंच चुके हैं। उधर हवाई जहाजों ने अपनी सफल उड़ानों की रिपोर्ट पेश कीं। पर इसे इत्तफ़ाक नहीं कहा जा सकता, स्वरक्षा का प्रताप, महान पिता का संरक्षण और

जुस्तजू उस आत्मा के पाँव चूमती गई। लाभ हुआ तो केवल आश्चर्य करने वालों को कि यह घटना घट कैसे गयी। ऐसे ही भक्त पूर्णसिंह देश के विभाजन से पहले लाहौर के बाजारों और गलियों से केलों के छिलके चुनते रहते ताकि उनसे से कोई फिसल कर गिर न जाये। यह उनका स्वभाव बन गया था। उनकी दिव्य माता गुरुद्वारों के आंगन में भगवद्भक्ति का प्रसाद लिया करती और जन-सेवा के कल्याण का व्रत लेती रहती। माँ की सम्पत्ति माँ के पास थोड़ी रहनी थी, बेटे ने भाग लेना ही था।

१९३४ में एक दिन एक सड़क पर एक चार साल का बच्चा लूला, लगड़ा पड़ा हुआ भगत जी को देखना नसीब हुआ, जिसे उठा लिया गया, उस आदमी की भी क्या प्रीति-भाव, बालक भगत जी की कमर पर कसा हुआ होता और भगत जी, कोई जन कहीं गिर न जाये के लिए रास्ता साफ करते फिरते। बालक से प्यार बन गया और उसने भगत जो से प्यारासिंह का नाम प्राप्त किथा। देखने वालों ने देखा कि १९ साल का प्यारासिंह तब भी भगत जी की कमर से बंधा होता था, जब भगत जी सेवा कार्य में रत होते थे। देश का विभाजन हुआ, भगत जी प्यारासिंह को बांधे अमृतसर पहुंच गये और पिङ्गलबाड़ा संस्था का स्थापन किया। लूले, लंगड़े, कोढ़ के बीमार, दुःखी और आहतों को गली-कूचों से उठा-उठा कर, भगत जी के आश्रम की शोभा बढ़ी। जगह-जगह पर काले बक्स वृक्षों और बाजारों पर लगा-लगाकर अपनी आत्मा से, आत्म संकल्प से, आत्मा की पुकार से, आर्थिक सहायता की मांग की। मांग भी क्या बनी कि मांग में सिन्दूर लगा। श्रद्धालु लोगों का, जो इस समय प्रति मास लगभग १५०००

रुपये की राशि उन्हें मनीआर्डरों द्वारा प्राप्त हो जाती है और ८०,००० का बजट तैयार हो जाता है। जन कल्याण का यह नज़ारा अफसरान को भी उनकी सहायता करने में अग्रसर होता है, और रोगियों की दुआएं उन्हें बरकत देती हैं। मैंने स्वयं अपनी आंखों से भगतजी का बीमारों को उठाना, उनकी सेवा का सौभाग्य लेना देखा है। यह उन्नत आत्माओं की प्रतिभा और प्रतिष्ठा आत्माओं का क्रियात्मक क्षेत्र विशाल बनाती है और सफलता की असीमता नियत करती है।

आत्मा जागती है, जरूर जागती है। अपने प्रयास, अपनी आवाज़ और अपने काल में केवल इस शुभ वेला का अवसर लेने का सौभाग्य जिसे मिल जाये! मुझे तो यह अद्भुतता बड़ी विचित्र और अनुपम लगती है। ये जागे हुए लोग कैसे होते होंगे? यहाँ टिक जाने का स्थान है, इस "आकाश" को फाँटा जाये तो इसी में विशालता मिलेगी। कबीर जी ने अपने पुत्र कमाल को खेत से घास काट लाने को भेजा। देर हो गयी थी वे लौटे नहीं थे। कमाल की देरी में कबीर जी को फिक्र हुई और चन्द साथियों के साथ स्वयं खेत को चले गये। वहां जाकर देखा तो कमाल वृक्ष की तरह खड़ा ही खड़ा था, आवाज दी "अरे कमाल! कितनी देर से तू वापिस नहीं आया। कमाल भी आखिर कबीर साहब का बेटा था। पिता की आवाज़ सुनकर वह चौंका और क्षमाप्रार्थी हुआ, देर का कारण यह बताया कि खेत में भगवान् की लीला के मध्य घास का लहलहाना उनके कानों में ऐसा सुरीला गान दे पा रहा था कि कमाल की आंखों में रस छा गया और पवन के लहलहानों में अपने मन को ओत-प्रोत करते हुए वे भगवद्चरणों में खो गये थे। यह एकरूपता, राजोन्याज़ के लेखे, हम साधारण लोगों

की समझ के तो बाहर के हैं पर हैं सही ! हाँ कोई परखे, जिसका जी चाहे !

इस चाह को चाह देने के लिये भगवान् ने भी एक से एक बढ़ कर जीते जागते दृष्टान्त बना दिये हैं ताकि हो सके तो कोई उनसे शिक्षा लेने वाला बने ! कहा जाता है—जापान में एक फ़कीर हुआ है जिसने बौद्ध ग्रन्थों को एकत्र करके छापने का विचार लिया, जिसके लिये दस हजार रुपये की राशि एकत्र की । इतने में वहां अकाल पड़ गया और वह सारी रकम उसने भूखे और दुःखी लोगों में बांट डाली । फिर दूसरी बार अपने विचार को पूरा करने के लिए, दोबारा दस हजार एकत्र किये, इतने में वहाँ बाढ़ आ गयी । फिर पहले की तरह सारी राशि बाढ़ पीड़ितों में बाँट डाली । अब फिर तीसरा प्रयास हुआ उसी लक्ष्य में, फिर भी उतनी रकम मिल गई, जबकि अपने ग्रंथों का तीसरा संस्करण नाम से वे भगवान बुद्ध के ग्रंथ छपवा लिए । आत्मा इतनी ही उज्ज्वल है कि अपने प्रकाश स्वयं उत्पन्न करती है । पुरुष भी संसार के सूर्य और चांद की भांति ग्रह हैं, जिनका जलवा, इकबाल अपने में निराला और उत्कृष्ट है, इसलिए अमरीका के ऋषि एमरसन ने कहा था, अगर कोई मुझे ऐसे कुतुबनुमा का पता दे जो उस दिशा की ओर संकेत करता हो जहां महापुरुष रहते हैं, तो मैं सब कुछ बेचकर उस कुतुबनुमा को खरीद लूंगा और निर्दिष्ट मार्ग की ओर चल पड़ूंगा । दृढ़ संकल्प होना हिमालय पर्वत से भी अधिक महानता लेना है । दृढ़ संकल्पी के लिए कुछ बाधा नहीं देखा करता केवल श्रद्धा ही उनका उपहार हुआ करता है, डावांडोल होना उनके लिए असम्भव होता है । महात्मा गांधी जब जेल में थे एक दिन कस्तूरबा के सख्त बीमार होने की सूचना जेलर ने

तार द्वारा प्रस्तुत की। और जुर्माना देकर छुट जाने की सलाह भी दी। परन्तु वे बोल पड़े कि अपने देश प्रेम को धर्म का मुख्य अंग मानते हुए, वे निजी रिश्तेदारों का वियोग भी सहने को तैयार थे। यही रूप समझ में समा लेने की है, आत्मा की सबलता को मान लेने की है।



भेंट चौथी

जिसे हम जीवन नाम से पुकारते हैं वे रोते हुए जन्म लेता है और रुलाते हुए जुदा होता है, यही रहस्य हमारी आत्मा की हस्ती का है कि किसी के वियोग से, चलती फिरती काया अचल हो जाती है, यही बड़ी विचित्रता है, यही हाल हमारे जीवन का अपने समझ में ले आने का है, परन्तु यह जाग उनके भाग्य में लिखी है, जो हर प्रातःकाल की लालिमा को अपनी हिम्मत का सिंदूर समझते हैं। जागृत परिजनों ने उच्च स्वर से पुकारा है, अरुणोदय ने जागृति का सन्देश भेजा है, ऊषा की अग्रिम किरणें करवटें बदलने में विरत होकर, अंगड़ाई लेने और उठ खड़े होने की चुनौती प्रस्तुत करती हैं। हाँ ! इस पावन वेला में असामान्यों को सामान्यों की तरह समय नहीं व्यतीत करना चाहिए। स्वामी रामतीर्थ ने जापान में एक ९०वर्षीय मानव को जब चीन की भाषा (जो मुश्किल भाषा गिनी जाती है) पढ़ने का प्रयास करते हुए देखा, उस मानव से उस आयु में भी इस प्रयास के लिए प्रश्न किया तो उसने उत्तर दिया था "कि जीवन तो वास्तव में अनन्त प्रवाह है।" बृज के ग्वाल वाल, किष्किन्धा के रीछ वानर, इन्द्रप्रस्थ के पाण्डव, बुद्ध परिव्राजक, दयानन्द के आर्यवीर, गाँधी के सत्याग्रही युग धर्म को समझ सके थे, तथा जीवन के सारमय संदेश को गले लगा सके

थे, जीवन भगवान का दिया हुआ सबसे बड़ा उपहार है, मनुष्य को बनाने में उसका सारा कला-कौशल लगा है, जीव को दिए जा सकने वाले उपहारों में यही सबसे बड़ा ईश्वरीय-अनुदान है। महानता की ऐसी उपलब्धियाँ मानव जीवन में अग्रिम है जिनके सहारे स्वयं भवसागर से पार हो सकना और असंख्यों को अपनी नाव में बिठा कर पार हो जाना सम्भव हो सका है। यही रहस्य रोते हुए आना और जुदाई देते हुए रुलाना के मध्य का एक वाक्य है। मृत्यु जीवन का अन्तिम अतिथि है, वही सबसे बड़ी परीक्षा की घड़ी है, उसी अवसर पर प्राणी के दीर्घकालीन भविष्य का फैसला होता है। मुकद्दमे का फैसला अपने पक्ष में चाहने वाले काफी समय पहले से ही दौड़-धूप करते हैं और सबूत-गवाह जुटाने के लिए समय तथा धन खर्च करते हैं—मनुष्य जीवन श्रेष्ठतापूर्वक जिया जा सके इसके प्रमाण, ज्वाला एकत्रित करने के लिए हमारी चेष्टाएं आरम्भ से जुटी रहनी चाहिएं। इन दिनों हमारी भूमिका युग-दूतों जैसी होनी चाहिए। आज का युग, जड़ और चेतन की सही पहचान के पलड़ों में जूझ रहा है। केवल विवेकी आंखें हमारे प्रयास संस्कृति का सेतु बाँधने वाले नलनील जैसे होने चाहिएं। खाई कूदने वाले अंगद की तरह, पर्वत उठाने वाले हनुमान की तरह, यदि पुरुषार्थ न जगे तो भी गिद्ध गिलहरी की तरह अपने तुच्छ को महान के सम्मुख समर्पित करना सम्भव बनाना चाहिए। जागृत आत्माओं का भाव भरा प्रयास ही इसे पूरा कर सकता है। यह याचना केवल हो सकती है तो उत्सुक और उद्बुद् आत्माओं को दयनीय लोग क्या दे सकते हैं जो कृपणता के दलदल में एड़ी से चोटी तक फंसे पड़े हुए हैं। कर्ण जैसे उदार व्यक्ति मरणासन्न स्थिति में भी अपने दांत उखाड़

कर देते रहे, हरिश्चन्द्र ने भी अपनी स्त्री बच्चे बेचे ! उनके लिए प्रखर प्रतिभाएं निखरीं उनकी नसों में भाव भरा ऋषि रक्त प्रचारित होता रहा। हमारे युग के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द के बारे में भाई परमानन्द ने कहा था कि ऋषि दयानन्द उस रोशनी के मीनारों में से हैं जो संसार को सत्यमार्ग दिखाने के लिए आये थे और भटके हुए लोगों को झटका देकर चले गए। पीर मुहम्मद युनुस ने इतना कह डाला कि पश्चिमी सभ्यता के हमले से भारत वालों को चौकन्ना करने का सेहरा ऋषि दयानन्द को था।

चतुरता की दृष्टि से कौआ सबसे सयाना माना जाता है, शृगाल की धूर्तता प्रख्यात है, मुर्दे खोद खाने में बिज्जू की कुशलता देखते ही बनती है, खजाने की रखवाली करने वाला सर्प लक्षाधीश होता है, पर भावना आत्मसर्जन में तो दूसरी धातु से ढले औजारों की आवश्यकता है। आदर्शों के प्रति अटूट आस्था की भट्टी में ही ऐसे अष्ट धातु तैयार होती हैं। आदर्शों के अपनाने का शुभ मुहूर्त आज ही हो सकता है पर यदि आज का ताज हमारे सिर चढ़ने का सौभाग्य ले सके। कल की प्रतीक्षा में बैठे रहने वालों की कल तो मरण के उपरान्त आती है। मनः स्थिति बदलने को परिस्थितियाँ हजार मार्गों से अनुकूल बनने का उपाय खोज निकालती हैं। खोजने वाले ईश्वर को भी खोज लेते हैं, फिर युग पुकार के अनुरूप कुछ कर सकने के लिये कोई रास्ता न मिले यह कैसे हो सकता है ? शान्तिकुञ्ज का आह्वान और वातावरण उनके लिए भाव भरे हाथ और आंचल पसारता है जो नवयुग की अवतरण वेला में अपनी गरिमा को जीवान्त करने और प्रखरता का परिचय देने में समर्थ है। कच्ची मिट्टी से बनी ईंटें अगर मकान में लगाई जायें तो वर्षा

काल में उस मकान को खतरा होता है और वही ईंटें यदि पका कर लगायी जायें, तो वही मकान स्थायी पनाह देने का सौभाग्य लेता है। चूना सीमेन्ट भी तो पत्थरों का पका हुआ पाउडर है, जो ईंटों को आपस में बांध लेता है। लोहा, तांबा धरती से निकाल कर पकाया जाता है, 'प्रोसिस' किया जाता है, इसी तरह व्यक्तित्व भी दृढ़ संकल्प और काल के ताप से समुन्नत किया जाता है जो अपने समय में एक वरदान शक्ति का देवता बन निकलता है।

पदार्थ जड़ है उसमें हलचल उत्पन्न करने का काम शक्ति करती है। जागृत हलचलों में जो शक्ति झांकती है, उसे विज्ञान की भाषा में 'एनरजी' कहते हैं। विद्युत के अनेक रूप उसके उपभेदों का परिचय देते हैं। संसार में जो कुछ घटित हो रहा है उसका श्रेय उसी शक्ति को है जिसे वैज्ञानिक अपने यन्त्रों द्वारा और आत्मज्ञानी अपने मन्त्रों द्वारा प्रकट एवं प्रमाणित करते हैं।

जीव चेतना है, वह भी तब सक्रिय होती है जब उसे शक्ति का स्रोत मिलता है। चेतना के साथ समर्थता का समन्वय होने से वह अपने वर्चस्व को प्रकट कर पाती है। जिन्हें अपने को बनाना और उठाना है उन्हें संकल्प शक्ति को उभारने और उसका सुदृढ़ अवलम्बन ग्रहण करने के अतिरिक्त कोई मार्ग ही नहीं। द्रुत गति से आगे बढ़ने वालों को संकल्प रथ पर आरूढ़ होकर ही लक्ष्य तक पहुंचने में सफलता मिलती रही है यही एक बड़ी सावधानता और दिव्यता का सूची-पत्र है। दिशा निर्धारण मनुष्य का निर्णय है। नियति की इच्छा है कि मनुष्य ऊंचा उठे। उसे आगे बढ़ाने के लिए प्रकृति की शक्तियां निरन्तर

सहायता करती हैं। ईश्वर के राजकुमार को सुखी और सु-सम्पन्न बनाना ही प्रकृति का काम है। उसे इसलिए रचा और खड़ा किया गया है। इतने पर भी यह अधिकार मनुष्य के हाथों ही सुरक्षित रखा गया है कि वह प्रगति किस दिशा में करें ईश्वर विश्वनियन्ता है उसका पुत्र सौभाग्य निर्माता तो होना ही चाहिए। प्रकृति तो अपितु उसका दम भरने को तत्पर है। अन्तःकरण की आकांक्षा का चयन ही मनुष्य का परम पुरुषार्थ है। पतन अभीष्ट है या उत्कर्ष? असुरता प्रिय है या देवत्व? क्षुद्रता चाहिए या महानता, चुनाव हर एक का अपना अपना है। परम दयालु भगवान ने अपने संसार को केवल सुखी रखने के लिए ही निर्माण किया था वह सत्, चित्, आनन्द, मानव-मात्र का जन्म ही निज संसार में सुख समृद्धि प्रस्तुत करने के लिए करते हैं। कहते हैं उमर खलीफा बड़े नेकदिल और दुःखी जनों के हित में अग्रिम थे। एक दिन उन्होंने आकाश में उड़ते एक फरिश्ते को देखा जिसके हाथ में एक बड़ी सी पुस्तक थी। उन्होंने उसे पास बुला कर पूछा--इस पुस्तक में क्या है?" "इसमें उन लोगों के नाम हैं जो खुदा की इबादत करते हैं।" उन्होंने अपना नाम उस पुस्तक में देखा, पर वह कहीं भी न मिला, वे बड़े दुःखी हुए। कुछ दिन बाद वही फरिश्ता एक छोटी पुस्तक लिए फिर निकला, पूछने पर फरिश्ते ने बताया— "यह उन लोगों के नाम की पुस्तक है जिनकी खुदा इबादत करते हैं" यह सुन खलीफा को बड़ा आश्चर्य हुआ वह बोला— क्या खुदा भी किसी की इबादत करता है? उनके नाम देखने की उत्सुकता में खलीफा ने पुस्तक देखी तो उनको अपना नाम प्रथम दिखाई दिया। उन्होंने कहा "मैं इस काबिल कैसे बन गया कि खुदा मेरी इबादत करने लगे।" तत्क्षण ही उनकी आत्मा ने कहा—"खुदा उनकी ही इबादत में लगा रहता है

और उनका काम नहीं करता, खुदा की बनाई दुनिया को जो खुशनुमा बनाये रखे व खुदा के बनाये हर इन्सान को इन्सानियत का पाठ पढ़ाता रहे वो ही खुदा का प्यारा बेटा होता है। ये बड़ा रहस्य का सन्देश है, परमात्मा परम साधु है। उनकी साधुता संसार में सुख और शान्ति का संदेश देती है। जिनकी आत्माएं खलीफा उम्र के अनुसार संसार को सुख और शान्ति का प्रसाद देती है वे सत् आतमाएं, जागृत आत्माएं और उन्नत आतमाएं कही जाती हैं। अरविन्द कहते थे "ईश्वर दर्शन के लिए आत्मा की ज्योति का आलोक रहना आवश्यक है।" जागृत भावना युक्त आत्माएं ही ईश्वर का सान्निध्य और अनुग्रह प्राप्त कर पाती हैं, इस सम्बन्ध में सूफी कवि हफीज ने अपने एक संस्मरण में बहुत सुन्दर बात कही है। एक रात उनके गुरु ने आवाज देकर किसी शिष्य को बुलाया। सब सो रहे थे। अकेला हफीज ही जाग रहा था। वह उठकर आया, गुरु ने उसे बहुत सी महत्वपूर्ण बातें बतायीं और वह चला गया। इसके बाद फिर गुरु ने आवाज देकर किसी शिष्य को आने के लिए कहा, तब भी सब सो रहे थे। अकेले हफीज ही जग रहा था सो वह फिर जा पहुंचा और इस बार भी वह लाभदायक ज्ञान नोट करके लाये। उस रात इसी प्रकार पांच बार पुकार हुई और हर बार हफीज ही पहुंचता और ज्ञान पाता रहा, कवि ने लिखा है—गुरु के इस विशेष अनुग्रह और शिष्य के लाभान्वित होने के सौभाग्य के पीछे मेरा जगना ही कारण था अन्य छात्रों की तरह यदि वह भी सो रहा होता, उस लाभ से वंचित ही रहता जो केवल उसे ही मिल सके।

पाँचवीं भेंट

परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं बल्कि शक्ति है, यही विश्वास हमारी शक्ति बने, याचना नहीं। कवि टैगोर यही प्रार्थना करते थे—"मैं अपनी अंजलि के भाव सुमन तुम्हारे चरणों में अर्पित करते हुए इतना ही मानता हूं कि तुम मुझे अपने दुःखों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति दो। मैं इतना ही चाहता हूं कि तुम्हारा विश्वास मेरे लिए शान्ति बने, याचना नहीं, सबल बने क्षीणता नहीं, बस इतनी ही कृपा करना।" आत्म-ज्ञान ही जीवन का सबसे बड़ा पुरुषार्थ और संसार का सबसे बड़ा लाभ है। आध्यात्मिक उन्नति की ओर बढ़ने के लिये योग और तप दोनों कदम बढ़ाते हुए, लैफ्ट, राइट के परेड करते हुए, हर कदम मिलाने होंगे। ज्ञान-ध्यान की दोनों धाराएं, गंगा यमुना की तरह जब बन पाती हैं, तब प्रभु प्राप्ति का संगम खुश-नसीबी से हाथ में आता है। शरीर जब योग की अग्नि में तप जाता है तब रोग उसे नहीं आता, बुढ़ापा उसे नहीं सताता, अपितु मौत भी उससे दूर खिसक जाती है। सूर्य निकलने का जब समय होता है तब सब प्राणियों की नींद टूट जाती है और उठते ही काम-काज में लगना होता है। रात को कलियां सिकुड़ी पड़ी होती हैं वे सोयी हुई कलियाँ भी सूरज की आँख मारने से हंस देती हैं, इसी तरह मानव के

भीतर बहुत रहस्य कलियों की तरह सो रहे हैं, यदि इसे मुबालगा न माना जाये तो केवल दोष हमारा गुम हुए रहने का है, जिससे सब कुछ छिपा रहता है। तप भीतर गर्मी/ऊर्जा पैदा करता है जिसके द्वारा शारीरिक सुख और लवाजमात की रोक लगती है, मन की दौड़-धूप नियन्त्रण में आती है, मनोनिग्रह की शक्ल बनती है।

इस निग्रह में आये मन से शक्ति उत्पन्न होती है जैसे खुले मुंह की पतीली में खोलता हुआ पानी भाप बन कर ऊपर निकलता है परन्तु वह ही पतीली ढके होने की अवस्था में भीतर ही भीतर भाप से भर रही होती है यहाँ तक कि ढकना तोड़ कर बाहर की तरफ फूट निकलती है। स्टोव और प्रेशरकुकर इसी सिद्धान्त की उपज हैं। यही सिद्धान्त इन्द्रिय निग्रह, मनोनिग्रह की महानता बना पाता है। ब्रह्मचर्य की बड़ाई इसी में है जिसकी ऊर्जा को नीचे जाने से रोककर ऊपर की ओर ले जाना ब्रह्मलोक का रास्ता बनाता है। गन्दी नाली के प्रयोग के अतिरिक्त ऊपर का रुख लेना ही मानव शक्ति का वास्तविक जागरण है। सारी सृष्टि में मानव को शर्फ मिला सत्पात्र होने का, उच्च से उच्चतर बनने का इसी ऊर्जा ऊर्ध्व रेखा को हम अत्यन्त अद्भुत मानते हैं। इस ऊर्ध्व गति के अनेक पद हैं ऋक्, यजु, आदित्य, आङ्गिरा आदि महान ऋषि भी आत्माओं के चुनाव थे। भगवान् कृष्ण, भगवान् राम, हजरत ईसा, हजरत मुहम्मद, भगवान् दयानन्द, महात्मा गान्धी, गुरु नानक देव, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व के चमकते सितारे थे, जिन्होंने अधिक से अधिक शोध के कारण अपनी-अपनी पदवियां प्राप्त कीं।

क्या यह अद्भुत नहीं कि एक ग्रात्मा इतनी जाग्रत और विशाल हो सकती है कि दुनिया भर को घेर पाती है। लोक भी अनेक हैं, पदवी भी अनेक हैं। भूः, भुवः, महाः, जनः, तपः, सत्यं न तो ग्राकाश के विभाजन हैं, न कोई नक्षत्र हैं, परन्तु सीढ़ियाँ हैं, पद हैं जिन्हें हम उपासना द्वारा ग्रपने चेतन को कदम-कदम ले चलते हैं। ये ग्रवस्थाएं चेतना के फूल हैं, अनुभव के क्षेत्र हैं, जहां भ्रमण का सौभाग्य हमें प्राप्त होता है। तप का रूप मन्थन भी है। समुद्र मन्थन की पुरानी कहानियां हमने सुन रखी हैं जिनके द्वारा चौदह रत्न पाये जाने की व्याख्या मिलती है। चन्द साल पहले इसे केवल पौराणिक गाथा कहा जाता था परन्तु अब तो विज्ञान भी बोल उठा है। इसी मन्थन के द्वारा सागर के भीतर बड़े-बड़े खजाने मिल सके हैं, वहाँ एक नई दुनिया जांची जा चुकी है। विचित्र से विचित्र धातु, तेल, प्राणी, वनस्पति इत्यादि वहाँ देखे जा चुके हैं। पुराणों ने कह दिया था कि देव ग्रौर राक्षस समुद्र मंथन रचाते थे ग्रौर रत्न प्राप्त करते थे। देव ग्रपनी प्रकार के ग्रौर राक्षस अपनी प्रकार के, ग्रनुभव को प्राप्त करते थे। इसी तरह जीवन भी एक सागर है जहाँ रत्न राशि भरी पड़ी है, जिसकी कल्पना वर्णन के बाहर है, जिसकी सिद्धियां ग्रौर विधियां गिनती से परे हैं, यहां भी दारोमदार है ग्रपने मंथन की शक्ति का, शारीरिक ग्रौर आध्यात्मिक शक्ति चेतन ग्रात्मा ग्रौर जड़ शरीर को एक नया उत्साह देती है। मन की दो ग्रवस्थाएं—चंचलता व सुख की चाह खासी व्याख्या लेती है, यह दोनों ग्रवस्थाएं आवारा लड़कों की तरह मटरगश्ती में मजा लेती हैं, बन्दरों की तरह डाली-डाली पर उछलती हैं, चिड़ियों की तरह इधर-उधर फुदकती है, कल्पना के घोड़े पर

सवार होकर यह आकाश और पाताल की सैर करती हैं, जिस भटकने में इनकी शक्ति व्यय होती है, यदि इस शक्ति को बाँध लग जाये तो यहाँ पर एक बड़ा डैम बन सकता है और निज शक्तियों का नया केन्द्र बन जाता है, जो योगाभ्यास की रूप-रेखा लेता है।

आत्मा की प्यास है सांत्वना, मन की प्यास है सहूलियत, इन दोनों में रस्साकशी चलती है, यह दौड़-धूप मानव जीवन के पतन और प्रगति की अवस्थाएं लेती है। बात चल रही थी तपस्या की, जो सुयोग्यता एवं सम्पन्नता प्रदान करती है ताकि निखरा व्यक्तित्व उभर सके। आम पाल में पकाये जाने से खटपन से दूर होकर मीठे बनते हैं। दूध गर्म होने से घी के योग्य बनता है, पानी डिस्ट्रिल करने से औषधि के योग्य बनता है, सोने को आग में तपा कर सुन्दर गहने बनाये जाते हैं।

इसी प्रकार सृष्टि की हर एक वस्तु तपस्या द्वारा ही उपयोग के अनुकूल बनती है। यही एक सिद्धान्त है जो हमारे जीवन में भी काम करते हैं। पिपलाद ऋषि पीपल वृक्ष के फल खाकर गुजारा करते थे। कणाद ऋषि ध्यान द्वारा अपनी क्षुधा की तृप्ति करते थे, कई लोग केवल जौ की रोटी और लस्सी से पेट भरते हैं, भगवान् कृष्ण उत्तम सन्तान प्राप्त करने के हेतु कई रोज रुकमणी के साथ जंगलों में जंगली बेरी खाकर रहे। भगीरथ का धरती पर गंगा की शक्ल देना, पार्वती का शिव से विवाह होना, ध्रुव की तपस्या, सात आदमियों का सप्त ऋषि बनना, गांधी की भूख हड़तालें, दयानन्द का जंगलों में विचरण, चरक की पौधे-पौधे से बातचीत हमारे सामने एक अपने प्रकार का संसार प्रस्तुत कर चुकी हैं। मानव की

ऊंचाई भी एक अद्‌भुद रेखा है। एक आत्मा जागृत होकर क्या का क्या कर देता है।

नर से नारायण, नर से महात्मा, नर से देवता और नर से ऋषि का स्वरूप हमारे सम्मुख है। मानव की ऊंचाई और मानव की गिरावट का मुकाबला हिमालय की एवरेस्ट चोटी और सागर के पाताल से किया जा सकता है। ऊपर चढ़ना और नीचे गिरना अपने बस की बात है यह एक बड़ी विचित्र वास्तविकता है। हमारे ही काल में हिटलर भी सामने आये, महात्मा गाँधी भी सामने आये, परन्तु प्रकृति का भेद इन दोनों में जमीन व आसमान का भेद था। एक कुत्तों की मौत मरा और एक देवता बन कर उठ गया। महात्मा गाँधी की आखिरी शोभा यात्रा पर इन्सानी सिरों का सागर ठाठें मार रहा था, शोक से दहाड़ रहा था और हिटलर की लाश किसी गार में गुम हो रही थी। मानव की मानव के प्रति श्रद्धा की भी कोई चरम सीमा होनी चाहिए। तीस जनवरी उन्नीस सौ अड़तालीस को एक बस रुड़की से हरिद्वार की तरफ जा रही थी। चलती बस से किसी के रेडियो ने खबर दी कि महात्मा गाँधी चल बसे हैं। यात्रियों ने बस रुकवा ली, सब नीचे उतर आये जिनमें अधिक मुसलमान थे, मुसलमानों ने वहाँ ही नमाज फातेंह दी। वियुक्त आत्मा के लिए झोली फैलायी। भगवान् के विशाल दरबार में, अत्यन्त विशाल श्रद्धा से सद्‌गति के लिए बाजू फैलाये, प्रार्थना भरे हाथ मुँह और सिर पर फेरे और इसी तरह दूर से दूर तक अपनी श्रद्धा के फूल प्रस्तुत किये। इसके विपरीत हिटलर की मृत्यु की सूचना जब रेडियों पर नशर हुई, यहूदियों ने हलवे बनाये,

सकारों ने राहत की सांस ली। डर के मारे कई कौमों ने सुख की नींद देखी। आत्मा से आत्मा का भेद भी तो एक विचित्र वास्तविकता है, रहस्यपूर्ण पाठ है, प्रकृति की एक ललकार है कि उद्बुद आत्मा लाखों के दिलों को चीरती है, लाखों के दिलों में घर कर लेती है, यह अद्भुत लीला कि एक आत्मा में सर्वव्यापक का अनुभव ले लेना भी तो असम्भव से सम्भव होना है, यद्यपि यह मान लेने की बात नहीं नजर आती, मगर है बिलकुल ठीक। कोई मन्दिर में जाकर पूजा करता ह, किसी की आत्मा खुद मन्दिर बन जाती है, जिसके दर्शन करने को लोग धड़ाधड़ चले आते हैं, फूल उस आत्मा पर चढ़ने के लिए भागे आते हैं, उनके चरणों में उनके नाम पर और उनकी शान में बढ़ चढ़ कर अपना सौभाग्य मनाते हैं।

मरकज़ी नुक्ता उद्बुद आत्मा है, एक आत्मा जिसका यश गाने में लोग थकते नहीं, कवि लोग रुकते नहीं, लेखक दम नहीं लेते, लायब्रेरियों की अलमारियाँ भर दी जाती हैं, उनके जीवन-चरित्र को अपने आंगन में छिपाये हुए शान्ति पूर्वक अलमारियों की शोभा बनते हैं। पर इधर शैतान उसका भी अपना इतिहास है, जो गिरावट की थाह नहीं लेने देता, शैतान दिमाग न स्वयं सुखी रह पाता है न दूसरों को सुख लेने देता है। यह युद्ध, यह अस्त्र और शस्त्रों की होड़ भी तो कई मानव के मस्तिष्कों की रूपरेखा है। इतिहास पाँच हजार सालों में सिर्फ तीन सौ साल शान्ति के देख पाया है, हमारी धरती ने चौदह हजार छोटे और बड़े युद्ध देखे हैं, जिनमें करीब साढ़े तीन अरब लोग मर गये। भगवान् रक्षा करे इस वैज्ञानिक युग की जिसमें रक्षा योजनाओं पर इस समय प्रति दिन दस लाख डालर का खर्च किया जा रहा है।

इस क्रमबद्ध विकास की प्रक्रिया में मानव—आगमन के पूर्व की चीजें, पृथ्वी की शक्ति में अब मनुष्यों का साथ छोड़ रही हैं केवल मनुष्यों के कारण ही। भगवान के प्रति मानव क्या कृतज्ञता रखता है? पिछली शताब्दी में ७५ प्रकार के पक्षियों का खानदान समाप्त किया गया है, वर्तमान शताब्दी में ५३ प्रकार के पक्षियों के परिवार उड़ा दिए गये हैं, आज ३४५ तरह के पक्षियों का जीवन खतरे में है, हजारों जलचर जीव-जन्तु रेंगने वाले, पेड़-पौधे हस्ती के पन्ने से उड़ा दिए जा रहे हैं। कहा कुछ जाता है पर आज का विज्ञान मानव की हस्ती मिटा देने पर तुल रहा है।

पिछले दस करोड़ सालों के पूर्व के जंगल—जो वर्षा लाने का हेतु बनते थे—खुशी और खुशहाली उत्पन्न करते थे, पचास प्रतिशत काट डाले जा चुके हैं इस समय प्रतिमिन्ट २० हैकटर की रफतार से जंगल साफ किये जा रहे हैं, इस प्रकार ३ या चार ४ दशक में हमारा वातावरण इन उपकार पूर्ण जगत से साफ कर दिया जायेगा। हम तो हर प्रकार से अंधकार, दुःख और संतप्त होने में अग्रसर हो रहे हैं।

इस समय संसार में ३०० मिलियन लोग बेकार हैं। आज पूरे संसार को बारह बार पूर्णतः नष्ट किया जा सकता है। अमेरिका का प्रधान संसार में एक बड़ा माननीय व्यक्ति गिना जाता है, वह स्वयं वतला रहा है कि आज एक बच्चे को पढ़ाने में जितना खर्च होता है १९७६ के आंकड़ों के अनुसार उनसे ६० गुणा ज्यादा खर्च एक सैनिक को सजाने में लगाया जाता है। यह भी तो आत्माओं के रूप है जो देखने और समझने का विषय बनते हैं।

हम और हमारे

✡

सब तुम्हारे कष्ट, बन्धु तेरा ही प्रसाद हैं,
किस तरह बच पाओगे, जब प्राण इनके साथ हैं।
जन्म इतना ही क्षणिक है, जहाँ यह सम्भव नहीं,
इस जन्म का इस जन्म में काटना होता नहीं।
कर्मभूमि में बोये कर्मों के अनगिनत रूप हैं,
अलग है आयु सभी की वैसे फल के रूप हैं।
इस जन्म का इस जन्म में काटना होता अगर,
हर जन्म के बाद तो हर एक हो जाता अमर।
पर विधाता ने है नहीं ऐसा किया,
जन्मजन्मान्तरण को उसने यह है क्रम दिया।
इस जन्म में बो के तुम चलते बनें,
काटने को फिर जन्म लेना बने।
है नहीं कुछ याद तुमको इसलिए तुम हो दुःखी,
क्रिया की प्रतिक्रिया होती, देव नियम है यही।
है नहीं रचना किसी की इसके रचयिता हो तुम्हीं,
अपने बोये वृक्ष के फल भी तो खाते हो तुम्हीं।
सब है निश्चित और नियमित बच नहीं सकते कभी,
तुम जुटाओ शक्ति बन्धु इनके झेलने के सभी।

–दिवान 'कुलभूषण'

भेंट छठी

परमात्मा एक अदृश्य तत्व है किन्तु अन्त:करण की श्रद्धा और मन का विश्वास एकाकार होते हैं उस सत्ता का प्रभाव पूर्ण फल देखते ही बनते हैं। विद्युत एक अदृश्य तत्व है किन्तु अंधकार दूर करने के लिए एक विशेष प्रक्रिया अपनानी पड़ती है चुम्बक को तो भी देखा नहीं जा सकता है परन्तु उसे भी एक लोहे की सुई में पिरो दिया जाता है तो वही दिशा बोध कराने वाली कुतुबनुमा बन जाती है। टेग्सटन तार पर धन व ऋण विद्युत धाराओं के अभिकम होने की तरह यह ईश्वरीय अनुदान जिन दो धाराओं के सम्मिश्रण से किसी भी काल में प्रकट होते रहते हैं वे हैं श्रद्धा और विश्वास, जो कि परमात्मा और आत्मा की कलोलें बनती हैं। इसी लिये तो कहा था--

(आघा गमद्यदि श्रवत् आता है यदि वह सुन लेवे)

लारेको मार्क्वीस (मोजाम्बिक) की घटना है–एक पंगु अफ्रीकी को लकवा मार गया। पैर मुड़ जाने से वह घिसट कर चलता था। अर्नेस्टो टिटोस मुल्होव नामक यह अफ्रीकी बड़ा ईश्वर भक्त था। उसकी भक्ति और वर्तमान स्थिति पर उसके मित्र अक्सर टीका-टिप्पणी करते रहते थे। वपूतिस्मा ईसाई

धर्म में दीक्षा का एक त्यौहार) के दिन उससे रहा नहीं गया। वह भावविह्वल अन्तःकरण से अपने चर्च की ओर घिसटता हुआ भागा। जितना वह भागता उसकी प्राण-शक्ति उतनी ही सक्रिय होती गई और चर्च तक पहुंचते किस विचित्र शक्ति ने उसे खड़ा कर दिया, जिसे डाक्टर भी ठीक नहीं कर सकते थे। अनायास ठीक हो जाने पर लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ए० एफ० सी० ने यह समाचार देते स्वीकार किया कि सचमुच संसार में एक अद्‌भुत अदृश्य शक्ति है जो अपनी सर्वशक्तिमत्ता का परिचय देती रहती है।

भारत के स्वाधीन होने के पीछे कुछ महीने पहले गांधी जी विश्राम के लिए मंसूरी गये थे वहाँ उनके साथ ही महावीर त्यागी भी थे (उनका तो वह इलाका ही था) एक दिन गांधी जी धूप में चटाई पर बैठे कुछ लिख रहे थे, कि त्यागी जी ने एकान्त पाकर उनके दोनों चरण पकड़ लिए। दो क्षण गांधी जी ने त्यागी जी की तरफ देखा और कहा—"आज तुमने ऐसी बेवकूफी क्यों की ? पहले तो ऐसा नहीं करता था, त्यागीजी सहसा कुछ उत्तर न दे सके। कुछ क्षण बाद हाथ जोड़ कर बोले—"इस मानसगात को पुनीत चरण छूने का कभी साहस ही न हो सका।" गांधी जी ने पूछा—"तो आज कैसे हुआ ?" त्यागी जी ने उत्तर दिया—"मैंने एक प्रतिज्ञा की है बापू ! बरसों से प्रयत्न कर रहा था परन्तु आत्म-बल की कमी के कारण सफल नहीं हो पा रहा था। प्रतिज्ञा की थी कि झूठ नहीं बोलूंगा, सिगरेट नहीं पिऊंगा, गुस्सा नहीं करूंगा, साला कहने की आदत छोड़ दूंगा, दैनिक व्यायाम करूंगा और चर्खा कातूंगा, लेकिन आज भी झूठ बोलता हूं, सिगरेट पीता हूं,

गुस्सा करता हूं, साला शब्द कह कर सम्बोधन करता हूं, न चर्खा चलाता और न ही व्यायाम करता हूं, परन्तु आज छोटी-सी प्रतिज्ञा की है कि जिन हाथों से चरण छूए हैं उनसे किसी का अनहित न करूंगा। शुभ चरणों के प्रताप से शायद यह निभ जाये।" यह सुन कर गांधी जी ने आर-पार देखने वाली अपनी आँखों से त्यागी जी की आत्मा का ऐक्सरे कर लिया। गर्दन हिला कर बोले—"अच्छा व्रत लिया।" दो क्षण बाद फिर कहा—"अच्छी प्रतिज्ञा की। इसके बाद तो दूसरी प्रतिज्ञा की आवश्यकता नहीं। एक के साधे सब सध जाता है। तुम्हारा यह व्रत निभ जाने से सम्पूर्ण आत्मा को बल मिलेगा। सिगरेट भी छुट जायेगी। अच्छा व्रत लिया। ऐसे तो रोज चरण छू सकते हो।" यह एक लहर थी जो त्यागी जी का सागर मन्थन कर गयी। श्रद्धावान आत्मा अपना चुम्बकत्व भी रखता है। मानव अपने अन्त:सागर व जलीय सागर में भेद तो देखे।"

महायाजक शाल्वनेक का अनायास ही आगमन हुआ। श्रेष्ठि उदयन ने उनका समुचित सत्कार किया। दूसरे दिन ज्ञान दीक्षा का क्रम चल पड़ा। महायाजक नेअपनी अनेक संग्रहीत विद्याओं का परिचय देते हुए उदयन से पूछा, वे जिसमें भी रुचि रखते हों, उनके सम्बन्ध में पूछें और ज्ञान प्राप्त करें। श्रेष्ठि ने पूछा—"क्या सम्भव है, आपने जो-जो जाना है, उन सब के मूल आधार को ही मुझे प्रदान करने का आग्रह कर दिया जाय।"

महायाजक असमंजस में पड़े, धीरे-धीरे सिर हिला रहे थे, उनकी कठिनाई दूर करने के लिए उदयन ने घर में प्रयुक्त होने वाले अनेकों पात्र उपकरण प्रस्तुत कर दिये और पूछा—

"दैव ! इन सब को एक ही रथ में भर नहीं ले जाया ज सकता।" शाल्वनेक की आँखें खुल गईं। उन्होंने नव-चेतना अनुभव की और कहा..."ऐसा हो सकता है। एक ही आत्म-ज्ञान के समुद्र में ज्ञान की समस्त सरिताओं का समावेश हो सकता है। मैं अब उसी को उपलब्धी करूंगा और जब प्राप्त कर सकूंगा तो आपकी ज्ञान दीक्षा का साहस कर सकूंगा।" महायाजक चले गये। श्रेष्ठि ने श्रद्धा पूर्वक उनके प्रयाण को मस्तक झुका दिया।

पाल में जिस तरह आम पकाये जाते हैं। विश्वास और श्रद्धा की पाल में आत्मा भी बल और शोभा प्राप्त करती है, सत्कृत होती है और अन्तःप्रेरणा उसकी दिशा लेती है। उत्कृष्ट आदर्शवादिता के क्षेत्र में बढ़ चलने और महामानव स्तर की गरिमा पाने के लिए, जिस साहस की आवश्यकता होती है, वही 'शरीर में ओजस्व' मनःक्षेत्र में तेजस्व, और 'भावना क्षेत्र में ब्रह्मवर्चस्व' कहलाती है। श्रद्धालु के काम तो स्वभाविक होते जाते हैं जो देखते ही बनते हैं। कहते हैं बकिंघम वर्नहालवेहियो एक किसान के छोटे-छोटे दो बच्चे खेलते खेलते दूर जंगल में भटक गए, रात को पता चला, किसान दम्पति, बच्चों को बहुत प्यार करते थे और बड़े ईश्वरविश्वासी थे। अज्ञात भय से वह बच्चों को खोजने सड़क पर निकले, उन्होंने अद्‌भुत नील वर्ण प्रकाश देखा वे उधर ही बढ़े।

जितने ही वे आगे बढ़ते, प्रकाश भी उसी गति से एक ओर जंगल में बढ़ना शुरू हुआ और एक भयानक जीव-जन्तुओं से भरे सुनसान में जाकर स्थिर हो गया। किसान आवगमन करता हुआ, जैसे ही उस स्थान पर पहुंचा वह यह देख कर

चकित रह गया, कि दोनों बच्चे वृक्ष की जड़ के सहारे इस प्रकार शान्त पड़े हैं जैसे वे माँ की गोद में सो रहे हों। वे दम्पति बच्चों को प्राप्त करके अत्यन्त प्रसन्न हो गए और भगवान् का कोटि-कोटि धन्यवाद किया। रामायण में श्रद्धा को भवानो और विश्वास का शंकर से उपमा देते हुए कहा गया है कि इनकी सहायता के बिना अन्तर आत्मा में बठा परमात्मा किसी को मिल नहीं सकता।

"इनविजिबल हल्पर्स" नामी पुस्तक में अनेकों दृष्टान्त उद्धृत किए गए हैं। जो किसी अदृश्य दिव्य सत्ता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि भगवान् भक्तों की किस प्रकार से रक्षा करते हैं। भक्तों के सद्गुण उनकी छत्रछाया करते हैं।

विलियन जेम्स ने "दि वेरायटीज आफ रिलीजस एक्सपीरियन्स" पुस्तक में लिखा है कि विश्व के कल्याण में वे सद्गुण नितान्त आवश्यक हैं जो सन्तों में पाए जाते हैं। समर्थ गुरु श्री रामदास ने समाज में जिस आस्था को जन्म दिया, वे शिवाजी के उत्कर्ष का आधार बनीं। महात्मा गाँधी अपने देखे सुने श्रद्धा और आस्था के प्रत्यक्ष प्रमाण थे। उनको तो वचपन से ही अन्तः प्रेरणा एक शक्ति और ज्वाला प्रदान करती रही। वचपन में गाँधी जी को सब प्यार से 'मोनियां' कहकर पुकारते थे जो शब्द मोहन का घरेलू रूप था। मोनियां को भी खेलने कूदने का बड़ा शौक था, एक दिन खेलते-२ वह अपने बड़े भाई के साथ एक बाग में जा निकला और बहुत मना करने पर भी एक पेड़ पर चढ़ गया, ऊपर जाकर एक शाखा पर बैठ गया और उसकी टांग नीचे लटक रही थी, सहसा बड़े भाई ने उस की टांग खींच लीं वह धड़ाम से नीचे गिर गया।

रोते-रोते माँ के पास पहुंचा और कहा, "मुझ भैय्या ने मारा है।" माँ हंसी-हंसी में बोली उसने तुझे मारा है तो तू भी उसे मार। मेरे पास शिकायत लेकर क्यों आया है। यह सुनकर मोनियां को बड़ा अजीब लगा। वह सोचने लगा "बड़े भाई को मारूं यह कैसी बात मां कहती है।" बोला—"ऐसा सिखाती हो मा, क्या मैं मारूं? बड़ों को कहीं मारा जाता है?" मां पूर्ववत बोली "इसमें कोई बात नहीं, तू तो अभी छोटा है, छोटे बच्चे और भाई-बहिन तो ऐसी बात कर लेते हैं।" परन्तु मोनियाँ इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हुआ। दृढ़ स्वर में बोला "तू कैसी मां है। जो मारता है उसे तो समझाती नहीं, मुझे गलत काम करने को कहती है, बड़े भाई को मारना सिखाती है, वे बड़े हैं मैं उन्हें नहीं मारूंगा।" जो मां अब तक हंस रही थी, मोनियाँ का यह रूप देखकर गर्व से भर उठी उसे गोद में उठाकर बोली "बता, तू ऐसी बातें कहां से सीखता है? न जाने विधाता ने तेरे लिए क्या लिखा है" यह प्रश्न था माँ का! मोनियाँ तब तो न बोल सके पर मां के इस प्रश्न का उत्तर उनके भविष्य ने दिया। उनके भविष्य ने संसार भर को एक विचित्र पाठ पढ़ा दिया, जिसे हम स्वयं देख पाये हैं।

दृष्टान्तों के पन्ने पलटते जाएं तो विचित्र से विचित्र बातें पाठ देने को उत्सुक हो रही हैं। गंगा नगर राजस्थान के समीप सांगारिया एक शहर है जहां इस समय शिक्षा का अच्छा केन्द्र है। बहुत दिनों की बात है एक निवृत फौजी ने १९१७ में वहाँ एक मिडिल स्कूल खोला। १९३२ तक तो वह चलता रहा पर इसके पश्चात आर्थिक संकट ने

उसे बन्द करने पर मजबूर कर दिया, इस पर उस महोदय ने एक साधारण सभा बुलाई, वहाँ और साथ के लोगों को एकत्र किया, और अपनी विवशता को प्रकट किया, सभा में बैठे एक अनपढ़ साधु उठ खड़े हुए। कहने लगे किसी भी कारण आपका यह प्रयास समाप्त नहीं होने दिया जाएगा। यह प्रतिज्ञा करके लोगों से पैसा-पैसा एकत्र किया, उस क्षेत्र में शिक्षा प्रचार का इतना काम जुटाया कि उन्होंने वहाँ चार कालेज बना दिए, तीन स्कूल खोल दिये, एक बड़ी लायब्रेरी बना दी, एक अजायबघर, एक आयुर्वेदिक डिस्पेन्सरी, और लगभग २८३ गांव में पाठशालाएं चला दीं। इनका शुभ नाम स्वामी केशवानन्द था जो १२ साल राज्य सभा के सदस्य भी रहे। कोई विचार करे यह अन्तःप्रेरणा मिली भी अनपढ़ को ! पर आत्म-बल ने वो प्रकाश लिया जो समान व्यक्ति भी नहीं, सरकार भी नहीं, समाज भी नहीं जुटा पाती। भगवान् एक है, न जाने किस-किस रूप में, किस-किस के अन्दर, विराजमान है। किस-किस का आत्म बल कैसा-कैसा सौन्दर्य लेता है वह देखते ही बनती है।

श्री महेशचन्द कौल मालपुरा (मध्यप्रदेश के) १९५४ में दक्षिण में गए। रास्ते में मैसूर के कृष्णराज सागर और वृन्दावन उद्यान भी देखे। उसी रास्ते में वे चक्कर आने से पुल पर से गिर पड़े और एक तांगे वाले ने उठाकर उन्हें हस्पताल ले जाने का साहस लिया। ताँगे में लिटाने के चन्द मिनटों बाद, उन्होंने जाग ली, अपने बारे में पूछा और सौ-सौ के पांच नोट ताँगे वाले को दिए और फिर बेहोश हो गए। ताँगे वाला वही पांच नोट उनकी जेब में डालने लगा तो उसे तो जेब में बहुत रुपया

मौजूद दीखा। वे उन्हें थाने ले गया जहां डाक्टर को बुलाया गया उनकी जेबों से ५०००० के नोट निकले। डाक्टर के प्रयास से वे होश में आये और कौल महाशय ने, अपने अन्त की सूचना दी, अपना नाम और पता बताया, और तांगे वाले को पांच हजार रु० देने के लिए निर्देश दिया, इतने में उसे उल्टी आ गयी और वे दूसरे लोक सिधार गए। उनके परिवार को बुलाया गया, जिन्होंने हर प्रकार से तांगे वाले को वह राशि देनी चाही, पर वह किसी भाव माना नहीं। यह है वरदान और अनुदान। भगवद् कृपा के श्रद्धालु भक्तों के लिए और मान सकने वाले व्यक्तियों के लिए।

भेंट सातवीं

संघर्ष सृष्टि का एक महान तथा ग्रावश्यक नियम है। साधना से सिद्धि का कारण और दर्शन यह भी एक सत्य सिद्धान्त है। इस संसार में न तो कुछ ग्रनायास होता है ग्रौर न ग्रप्रतित्याश्रित। प्रकृति की विलक्षण घटनाग्रों से लेकर मानवीय उत्थान, पतन की समस्त हलचलें किसी क्रयबद्ध प्रतिक्रिया के सुनिश्चित परिणाम हैं। साधना कोई जादू चमत्कार नहीं अपितु शुद्ध विज्ञान है।

सागर में लहरें ऊपर-नीचे हो रही होती हैं, समुद्र के किनारे बड़ा शोर होता है। जहां शोरगुल हो स्वाभाविक रूप से लोग वहाँ इकट्ठे हो जाया करते हैं। सम्भवत: शोरगुल के शौकीन हमारे बहुत से लोग, समुद्र के किनारे पर ग्रानन्द लेते हैं। विशेषत: उनको दूसरों की लड़ाई में मजा ग्राता है, परन्तु वे बेचारे यह नहीं जानते कि वहां तो भगवान् ही शोर कर रहे हैं, उनका जल देवता सागर के भीतर ही भीतर उथल-पुथल कर रहा है। हमारी दृष्टि को तो लहरों के ऊपर नीचे होना नजर आता है, उठकर बेसुध ग्रासमान को हाथ लगाने का प्रयास दिखाई देता है। लहरें उठती हैं, शोर करती हैं, फिर चन्द मिन्ट में चुप हो जाती हैं। ग्रर्थात् वहां लहरों का झगड़ना, जोश लेना, शान्त होकर दब जाना यही चक्कर दीखने में ग्राता है। ऐसा भी विचार बनता है कि क्या समय नष्ट किया जा रहा है, खुद ही उठना, खुद ही ठप्प हो जाना, अजब तमाशा है।

परन्तु ग्राँख वालों की आंख पकड़ती है इस उथल-पुथल के जादू को। जैसे देवियां घर में दूध बिलोती हैं और घी निकालती हैं, भगवान् लहरों के मंथन से सागर का दूध बिलोते हैं। वनस्पति जगत् के लिए जीवन का खेल हो रहा होता है। जिसे समुद्र मंथन का नाम दिया जाता है। इससे जल से धातु, गैसें, जानवरों का भोजन, मेघ, तापक्रम, धरती का तापमान, अन्तरिक्ष का वातावरण पैदा किया जाता है। जिसके ग्रनसुने रहस्य ग्राज विज्ञान का विषय बन रहे हैं। इन सब की तह में संघर्ष का रहस्य निहित है।

ग्रात्मा ग्रौर परमात्मा के मिलन में, नाद योग में जो दिव्य स्वरें सुनी जाती हैं, इनके दो रूप हैं, एक यह कि प्रकृति के अन्तराल सागर में पांच तत्व सत्, रज, तम की जो उथल-पुथल मचती है यह उनकी प्रतिक्रिया है। दूसरी यह कि शरीर के अन्दर जो खून का दौरा, सिकुड़ना, फैलना, साँस का ग्रन्दर ग्रौर बाहर आना जाना, उन हलचलों से पैदा होते हैं, इसके ग्रतिरिक्त इस सांस के ग्रन्दर ग्रौर बाहर आने जाने की ६४ किस्मों के विधानों का वर्णन है। मंथन और ग्राकर्षण का दो रूप ही प्राण-लोक को पूरा उतरता है। साँस को ग्रन्दर रोक लेना उस क्षण में शुद्ध-संकल्प बनाना, साँस को बाहर छोड़ते-छोड़ते ग्रशुद्धता से पाक होना यह भी सागर मंथन का रूप है, जिसके द्वारा हम ग्रपने यहाँ रत्न तलाश करते हैं। साँस का संकल्प के साथ संघर्ष ही दिव्य जीवन का मार्ग है। संघर्ष बड़ी कमाल की चीज़ है। हमारा प्राण सद्भावना के संघर्ष से हमारे ग्रन्दर ग्राग बनाता है, जो योग्य व्यक्तियों के लिए प्रकाश का काम बनती है। यह बड़ी ग्रदभुत व्याख्या है

कि सत्संकल्प से बुरे विचार दब जाते हैं। अच्छे ऊपर आते हैं, यही हमारी शोभा यात्रा बनती है। ऊर्जा भी साँस क्रिया के मंथन से उत्पन्न होती है।

ब्रह्माण्ड की व्यवस्था के अनुरूप मानवीय काया को एक प्रकार से भू-लोक माना जा सकता है। उसमें दो महत्वपूर्ण केन्द्र... ध्रुव प्रदेश बनते हैं। सूर्य को धन (पोजिटिव) और पृथ्वी को ऋण (नेगिटिव) माना गया है। दोनों स्वभावतः एक दूसरे की ओर दौड़ते हैं। नर और नारी के आकर्षण की तरह ध्रुवों में आकर्षण-क्रम चलता है यह क्रिया प्रतिक्रिया सृष्टि का प्राण बनते हैं। मानवीय सत्ता के मौलिक शक्ति स्रोतों के सम्बन्ध में यही बात है। सूक्ष्म जगत एवं निखिल ब्रह्माण्ड में अखिल वैभव भरा पड़ा है। उसमें उत्तरी ध्रुव के प्रतीक सहस्रार चक्र पर अनुदान बरसते हैं। इस पूंजी से वह सूर्य की भूमिका निभाता है। सूर्य और पृथ्वी का संयोग सुचारु रूप से चलाने का उत्तरदायित्व ध्रुव प्रदेश संभालते हैं। मूलाधार और सहस्रार में भी यही लेन-देन चलता है।

भूमि को जल की आवश्यकता है। सागर में असीम जल-राशि भरी परी पड़ी है, प्यासी भूमि समुद्र पर भार है, दोनों का सन्तुलन मिलाने के लिए वर्षा करने वाले बादलों की आवश्यकता पड़ती है। बादलों की व्यवस्था चल पड़ने से धरती का भी भला हो जाता है और समुद्र का भी उपकार हो जाता है। बादलों का प्रबन्ध करने वाली व्यवस्था साधना उपचार से बनती है। आवरण के छिद्रों की संख्या बढ़ाना और चौड़ी करना ही वह कार्य है जिसके आधार पर साधना की सिद्धि में परिणित होते देखा जा सकता है जो इस परम पुरुषार्थ के लिए

साहस जुटा सके, उसने मनुष्य जन्म का सच्चा लाभ पा लिया, ऐसा समझा जा सकता है। भूमध्य भाग में आज्ञाचक्रअवस्थित है, इसी को दिव्य नेत्र व तृतीय नेत्र कहते हैं। शंकर एवं दुर्गा के चित्रों में इसी स्थान पर तीसरा नेत्र दिखाया जाता है। पुराणों के अनुसार इसी नेत्र को खोल कर भगवान् शिव ने अग्नि तेजस्व उत्पन्न करने की क्रिया की थी और उससे विघ्न-कारी कामदेव को जला कर भस्म किया था।

यह नेत्र हर मनुष्य में है। शरीर शास्त्र के अनुसार इसे पिट्यूटरी ग्रन्थि कहते हैं। इसमें नेत्र जैसी सूक्ष्म संरचना मौजूद है। सूक्ष्म शरीर के विश्लेषण में यह केन्द्र विशुद्ध रूप में दिव्य नेत्र है। भौतिक जगत में गर्मी और रोशनी के सम्मिश्रण को प्रकाश कह सकते हैं, किन्तु अध्यात्म क्षेत्र में गर्मी का अर्थ सक्रियता और प्रकाश का अर्थ दूरदर्शी उच्चस्तरीय ज्ञान ही कहा जा सकता है। यह सारे विधि विधान संघर्ष के विधि-विधान से नर को नारायण और मानव को देवता बना लेने का सौभाग्य लेते हैं।

संकल्प में जितनी प्रखरता होगी, प्राणायाम उतना ही सफल रहेगा। प्राण की व्याख्या श्वास नहीं है "प्राणप्रति जीवयति इति प्राण।" अर्थात् जो प्राण प्राणी-मात्र के जीवन का आधार बन कर रहता है वह प्राण है। यों तो प्राणायाम के अनेकों भेद-उपभेद हैं, जिनके भिन्न-भिन्न परिणाम, परियोजन हैं। पर सभी में एक बात समान रूप से रहती है कि संकल्प-पूर्वक सांस लेते समय यह विश्वास विकसित किया जाता है कि नाक के साथ अन्दर प्रवेश करने वाली वायु हमारा जीवन प्राण

बन जाये, जिससे उद्दीप्त हुई संकल्प शक्ति ज्योति का रूप ले। यही वास्तव में जीवनी शक्ति का संवर्धन है।

योग और तप हमारी साधना के दो पाँव हैं, अध्यात्मिक प्रगति अपने ही पांव के सहारे चलकर पूरी होती है, यह पूरी निष्ठा के साथ अपनानी पड़ती है। मानव तो अपनी शक्ति की पूरी कल्पना कर ही नहीं सकता। पर जिस व्यक्ति ने इस आदर्श की ओर कदम बढ़ाया है, उसकी शान्ति और सांत्वना का भी वर्णन नहीं बनता, इसकी कल्पना केवल इस वास्तविकता से वर्णन की जा सकती है कि हमारे मस्तिष्क का मिलमिला कर साधारणतः प्रयोग केवल ७% होता है। शेष ९३% प्रसुप्त हालत में पड़ा है, कहीं उसका यह मार्ग उत्थान हो जाए तो मानव का व्यक्तित्व पूरा उभार लेता है, लहरों की तरह आकाश का चुम्बन लेता है। धन्य है हमारा वैदिक ज्ञान, जो स्वयं ही धरती पटल पर एक पूर्ण विज्ञान कहा जा सकता है। जो आत्माएं निज शरीर की जाँच पड़ताल करती है वह प्रकाश-युक्त हो जाती है, इसी का नाम साधना है। नृतक अपना अभ्यास प्रतिदिन करते हैं, कलाकार अपनी कला का अभ्यास करते हैं, फौजी लोग प्रतिदिन परेड करते हैं, अभ्यास छूट जाने पर न तो गोली चलती है न निशाना बनता है। आत्मसाधक जानता है कि प्यास बुझाने के लिए रोज कुओं से पानी खींचना पड़ता है, सफाई करने के लिए कमरों में झाड़ू देना होता है, मानव भी वही श्रेष्ठ बनता है जो प्रतिदिन हीरों भरी खदान को खोदता है। पानी से कपड़ा धोया जाता है धूप से सुखा लेने पर उसकी चमक निकलती है।

आत्मा की साधना में संलग्न तप और साधना से मांजा

हुआ अपनी चमक आप होता है। जो पड़ोसियों को भी प्रसन्नता देता है। अपना स्वराज्य भी प्राप्त करता है। साधना का महत्व किसान जानता है। पूरा साल अपने खेत की मिट्टी के साथ लिपटा रहता है, फसल को लहू पसीने से सींचता रहता है, अपनी परवाह नहीं करता, ज़ुकाम, खाँसी की चिन्ता नहीं करता। शरीर की तरह खेती उसका कार्यक्षेत्र होती है, हर पौधे पर उसकी नजर होती है, हर पत्ता और लड़ी से वह जुड़ा रहता है। बिना थकान महसूस किए, बिना चिन्ता के बिना भविष्य की आशा के वह कार्यरत ही होना अपना कर्तव्य मानता है। ठीक इसी प्रकार मानव आत्म-साधना में जुट कर अपने आपको रत रखना लाभ मानता है अत्यन्त शान्त स्वभाव होने में अपना यश समझता है और इसी में सन्तुष्ट होता है कि किसी अदृश्य शक्ति के प्रति वह निज साधना पथ का यात्री हो रहा है।

सुभाषचन्द्र बोस अत्यन्त शान्त चित्त अपने मकान में नजर वन्द, सूझ-बूझ का साक्षात करने वाला, अंग्रेजों के पंजे से निकलकर विदेश पहुंच जाने वाला एक असाधारण व्यक्ति हमारे ही काल में अवतरित हुआ। उनकी फोटो कोई देखे, कैसे पलंग पर लेट रहे हैं, शक्लें बदलते जा रहे हैं, मौन जीवन में अपनी प्रगति की रूप रेखा देख रहे हैं, अत्यन्त शान्त, संकल्प में दृढ़ जुस्तजू के धनी ऊंचे लक्ष्य के निशानाबाज, अपनी साधना की बाट जोह रहे थे। अंग्रेजी सरकार से बच निकलना कोई खाला जी का घर नहीं था, सी० आई० डी० जिस पर छाया हो रही थी, परन्तु कमाल उस व्यक्तित्व का कि ऐसा ड्रामा खेल दिया जिसकी दूसरी मिसाल संसार भर में नहीं मिलती।

हम भी अशुद्ध वातावरण से होशोहवास संभाल के आत्म-जागरण का ऐसा ही नाटक खेल सकते हैं, यदि आत्म जागरण साधना विज्ञान बन जाये। गाने-बजाने वाला एक दिन में रियाज में पूरा नहीं उतरता। गाने में मस्त अपनी धुन में कभी यह विचार नहीं लाता कि उसकी कला का क्या दाम पड़ेगा ? उनका कलाकारों में जाना ही एक बड़ा दाम होता है जो जीवन के दांव को भर लेता है। आत्मा बड़ी शक्ति होती है जो संघर्ष के जादू से इतनी महानता को प्राप्त करती है कि जहां वह आत्मा और परमात्मा के रूप-रंग में समा कर अपनी जाति, परिवार, देश और संसार के लिये एक शुभागमन बनती है, शोभा का प्रतीक हो जाती है और वरेण्यम् का सौभाग्य लेती है।

भेंट आठवीं

जीवन में आकांक्षा ही एक रहस्य है, जो जैसा चाहे वैसी भावना से जीवन व्यतीत कर ले, यही एक अद्भुत व्यवस्था है। हम तो यह साबित करने में लग रहे हैं कि संसार तो पापी है। यहाँ रहना दुश्वार है, गुजारा मुश्किल है, सम्भवतः हमारे विचार में कोई खास जगह है जहां विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है, न तो यह वास्तविकता है, न यह दृष्टिकोण उचित है। यहां ही सब-कुछ है केवल बात अपने साजोसामान पैदा कर लेने की है। जीवन दुःखी है इसलिये नहीं कि जीवन में केवल दुःख ही है, परन्तु इसलिए कि हम उसे उचित तौर से समझने और सुखी करने का रंग-ढंग नहीं बर्तते, यह एक अद्भुत रहस्य है। जीवन एक कोरा कागज है, एक कोरी स्लेट है, हमारी दृष्टि उस पर जो लिखना शुरू करती है वही लिखा जाता है। हमारे प्राण इस पर थरकते हैं, और वे जो लकीर डाल पाते हैं वही हमारी कहानी बन जाती है, धरती के जीवन को मोक्ष बना लेना ही एक असली राजे जिन्दगी है। अनेक लोग ऊंचे भाव सजोये होते हैं, परन्तु भावों का प्रदर्शन भी तो पेश करना और प्रयोग में लाना अपना स्थान रखता है।

एक समय अमेरिका में ऐसा आ गया कि ४०% विवाह तलाक की शक्ल लेने लग गये। यह बढ़ती संख्या सरकार का सरदर्द बनी, जानकार बैठाये गये, छानबीन हुई, यह देखा गया कि एक आदमी आठ-आठ तलाक दे पाता है, इस द्वारा देवियाँ भी इन तलाकों के द्वारा अपनी जान छुड़वा लेतीं, परन्तु एक व्यक्ति हर बार पत्नी बदलता और दूसरी पत्नी भी दो-चार महीने में पुरानी पत्नी की तरह प्रमाणित होती फिर और पत्नी बदल लेता, फिर वह भी दूसरी की तरह पायी जाती। यह क्रम विचित्र चिन्ता का विषय बन रहा था। तलाकों की लम्बी देखभाल ने यह बताया कि जो लोग पत्नियाँ बदलते या पत्नियाँ पति बदलती हैं और थोड़े समय पश्चात् पिछले पति और पत्नी की तरह नये में भी वही विचित्रता दीख पाती, जिसका सार यह माना गया कि वास्तविक कसूर खोज का है, दृष्टिकोण का है। जो स्त्री जिस ढंग से पहले पति से बना पाती उसी तरह से दूसरे पुरुष से भी वैसा व्यवहार करती और परिणामतः तलाक की रूपरेखा ले पाती। पुरुष भी जब एक औरत से तंग होकर तलाक देता, वह भी उसी औरत से उसी अपनी पहली पत्नी की तरह व्यवहार करता और दूसरी से भी उखड़ जाता। निर्णय यह ठहरा कि प्रत्येक का अपना स्वभाव ही दूसरों से निभाने का और न निभाने का हुआ करता है। जो गाड़ी बदलने की तरह तलाक बदल जाते हैं। इसी तरह जहाँ मैं हूं, वहां अपने को बदलने से बचने के हम सब तरीके बदलते हैं।

आम लोगों का यह अनुभव है कि प्रायः बच्चे ट्यूशन पढ़ाने वाले ट्यूटर को बदलने का सुझाव मां-बाप को दिया करते हैं। एक से और। और से और। अध्यापकों के दोष पेश

कर-कर के, अपने काम न करने की आदत को छिपा करके वास्तविकता से दूर हुआ जाता है।

आज का मनोविज्ञान एक नया रोग यह प्रकाश में लाया है कि प्रत्येक अपना दोष दूसरे के सर पर थोपने में सुरक्षा और सुविधा मानता है। हमें तो अब वह आदमी अच्छा लगता है जो यह कहे कि तुम तो ठीक हो, इसलिए आज के युग में यह एक कला हो गयी है कि हर एक दूसरे को अच्छा और उचित कह कर उसके समीप हो जाए और इसी आड़ में अपना कोई न कोई उल्लू साध लिया जाय। ऐसे ही नवयुवक यह सुझाव देकर के कि उसे अमुक स्थान भेज दिया जाय, उसका जीवन, उसकी पढ़ाई बेहतर हो जायेगी—अपने को डांवाडोल रखा करते हैं।

इन व्यवहारों से हम स्थान को तरजीह दे लेते हैं परन्तु जिसने बनना, पढ़ना, सीखना है, हम उसे भूल जाते हैं। इसका अर्थ यह निकला कि असल बाहर और नकल अन्दर, यही एक अद्भुत अवस्था है, जिसके कारण हमारे दुःख दूर नहीं होते और हम सुख से परे हो जाते हैं।

जीवन में लगातार संघर्ष चल रहा है। हम हमेशा जीवन को जिम्मेवार ठहराते हैं और अपने को बचा लेते हैं। हम अधिक बुद्धिमान होने जाकर अधिक अहंकारी होते जा रहे हैं। भगवान् के मुकाबले में स्थान लेते जा रहे हैं; परन्तु सौभाग्य था हमारी संस्कृति को, जिसने मानव के अन्दर पशु भी देखा और देवता भी देखा।

फ्राइड मार्क्स ने केवल जीवन में अर्थ और काम के दर्शन

किये, परन्तु हमने धर्म और मोक्ष के बन्धन में अर्थ और काम को स्वीकार किया। हर प्रातः से आनन्द की आकांक्षा लेकर उठना है एवं व्यक्ति के शारीरिक आनन्द की आकांक्षा बुझने नहीं पाती। यही मानव के मन का जीवन है परन्तु संभाल का अन्तर हमारे जीवन का अन्तर तय करता है। इस धरती पर एक घण्टे में श्रेष्ठ विचारों से एक सागर भी ठाठें मार लेता है, परन्तु दूसरी ओर इसी समय में एक हज़ार व्यक्ति पृथ्वी पर खुदकशी भी कर लेते हैं।

प्रश्न समय का नहीं, प्रश्न प्रयोग का है। वैज्ञानिक बढ़ते जा रहे हैं, देश और विदेश में, परन्तु भगवान् इन नौसीखे वैज्ञानिकों से भी बचाए। अबएक ने कह दिया है कि २८ वर्ष की आयु में प्रत्येक को आत्म-हत्या कर लेनी चाहिए, यथा इस आयु तक उसकी पक्की समझ हो जाती है, इसके बाद वह भेद-भाव द्वारा अपने दोष और अपनी विपत्ति कमा लेने में जुट जाता है। कई लोग विपत्ति कमाते हैं और कई लोग सम्पत्ति कमाते हैं। कहा जाता है कि एक बार गुरु नानकदेव लाहौर आये। उन दिनों रिवाज़ यह था कि जितने करोड़ किसी के पास होते, वह उतने झंडे अपने मकान पर लगाता। एक दुनिचन्द नामक के मकान पर २८ झण्डे लगे थे, अर्थात् उसके पास २८ करोड़ की राशि थी। वह गुरुदेव के पास गया। आशीर्वाद की याचना करने लगा। गुरुवर ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा, वह मनुष्य कहे जाता—"महाराज ! मेरे पास बहुत कुछ है" गुरुवर ऊपर से नीचे तक देखते और कहते कि "उन्हें तो उसमें कुछ नज़र नहीं आता।" इस पर आखिर गुरुदेव ने उसे एक सुई दी और प्रार्थना की कि वह उसे साथ

रख ले और अगले जन्म उसे वापिस कर दे। वह व्यक्ति बड़ा आश्चर्ययुक्त हो गया परन्तु गुरु के कहने के अनुसार सुई उसने संभाल ली। मुट्ठी में बन्द कर ली।

दृढ़ संकल्प बना लिया कि गुरु की आज्ञा का पालन करूंगा परन्तु ज्यों ही वह घर गया, उसे तो रात भर नींद नहीं आई, यह सोचते हुए कि वह सुई मरने पर कैसे साथ ले जायेगा ? परन्तु कोई उत्तर न पाकर अगले दिन वह आकर कहने लगा कि यह काम वह नहीं कर सकेगा। इस पर गुरुजी ने कहा— "अगर उसके पास बड़ी धन-दौलत है वह सब कुछ कर सकता है परन्तु यह काम क्यों नहीं कर सकता ?" इस पर उस व्यक्ति को चौंक आयी कि उसने गुरुदेब के सामने बेमतलब की डींग मारी थी कि धन-दौलत के द्वारा वह सब कुछ कर सकता है। तब गुरुजी ने कहा कि सम्पत्ति वह वस्तु है जो साथ जा सके। लोक और परलोक में मृत्यु के बाद भी जो किसी वस्तु को अपनी समझ सके वही वह अपनी चीज कही जा सकती है।

यही वास्तविकता कि हम भ्रम में पायेदार को गैरपायेदार और गैरपायेदार को पायेदार मान कर अपने को प्रसन्न कर रहे हैं। शुभ विचार शुद्ध आचार ही केवल सुख का कारण है। यह भी बात समझने की है कि रोग का इलाज होता है, दुःख का इलाज होता है, परन्तु हम यह समझ रहे हैं कि स्वास्थ्य का भी इलाज होता है। वास्तव में स्वास्थ्य तो स्वाभाविक देन है इसका इलाज नहीं होता है। स्वास्थ्य बनता शुभ आचार, व्यवहार और विचार से। प्रसन्न चित्त होना, सरल होना, बड़े काम में हेतु बनते हैं। हम किसी से उसके दुःख और रोग के बारे में पूछ लेते हैं परन्तु क्या हमने आनन्द और

स्वास्थ्य के बारे में भी पूछा कि हम ऐसे क्यों हैं ? स्वास्थ्य ग्रौर आनन्द को हम स्वीकार करते हैं जिसके प्रमाण की आवश्यकता नहीं। परन्तु जब हम बीमार ग्रौर दुःखी होते हैं तब उसका कारण जानने के इच्छुक होते हैं। जीवन को दुःखी प्रमाणित करने के लिये हम दलीलें देते हैं। आनन्द परम पिता के समीप होने से प्राप्त होता है, उस ग्रवस्था में हम ग्रपने को रखने में चन्द मिनट के लिये भी तैयार नहीं होते।

यही कारण है हमारे दुःखी रहने का। हमारे में संघर्ष की कमी है। तभी तो वेद में कहा है कि हम भगवान् की सारी महिमा को जान नहीं सकते, उसके ऐश्वर्य का अन्दाज नहीं लगा सकते, उसके नित नए राधस देख नहीं सकते। सारा संसार हमारे चारों ग्रोर संघर्ष की दुन्दुभि बजा रहा है पर यह भगवत प्रेरणा हमारे लिए वरदान नहीं बनती। प्राण हमारे भातर विद्यमान है पर हम प्राणवान् नहीं बनते। प्राणवान् होने के लिए साहसी होना बड़ा आवश्यक है। इस दृष्टिकोण को सच्ची शिक्षा तथा स्वास्थ्य का रहस्य मानना चाहिये। प्राणायाम में ओ३म् नाम एक लक्ष्य है। मंजिल वह उड़ान हमारी। पुण्यवृति भरी-भरी फिर ग्रावाज़ मिले खरी-खरी। ग्राग्रो ग्राग्रो वढ़ते जाओ जब पुकार मिले इस निमन्त्रण की, तब लगे हमारी कूद और कोशिश की। परिणामतः माँ ग्रौर सन्तान का पुण्य मिलन, सम्पर्क, समभाव, दिव्य दृष्टि, आनन्द स्रोत, रिमझिम, सान्त्वना—यही अद्भुत अवस्था इस भेंट की भेंट है ताकि शुद्ध दृष्टिकोण से हम सुसज्जित हो पाएं।

— —

भेंट नवीं

मानव के भीतर का लोक बहुत कौतूहलपूर्ण है और बाहर के संसार में उसके मुकाबले में कुछ भी नहीं, यह अद्भुत अनुभव देखने को बनता है। राबिया मिश्र देश की एक ईश्वर-भक्त एवं ईश्वर-समर्पित देवी थी। एक दिन वह अपनी झौंपड़ी में बैठी थी, जबकि एक और सन्त ने उसे आवाज़ देकर बाहर आने को बुलाया, ताकि वह भी बाहर भगवान् की सुहावनी दिल लुभाने वाली प्रातः का दर्शन कर सके। पर उस देवी ने उत्तर दिया—जिस भगवान् की लीला उसे बाहर प्यारी लग रही है, उस ही परम पिता की सुन्दर महिमा उसके निज के भीतर में प्रकाश और आनन्ददायक हो रही है। यह छोटा-सा कथानक रहस्यपूर्ण है। प्रायः आम लोग बाहर के संसार में सुख और खुशी का लाभ लेते हैं; परन्तु वास्तविक साक्षी, गवाही का अनुभव जो प्रत्येक के स्वयं अन्दर हर समय प्रतीत होता है, वह बाहर है ही नहीं। करोढ़ों लोग धरती पर रह चुके, रह भी रहे हैं, मगर एक भी तो गवाही इस अभिप्राय की नहीं मिलती, जिसने यह तसल्ली दी हो कि उसने भगवान् को बाहर खोजा और उसे आनन्द प्राप्त हुआ। इस दृष्टिकोण से हमारा अन्तरतम खेल विचित्रतापूर्ण बनता है। लोगों ने बाहर देख कर अपना जहान खड़ा कर लिया, इस लिये हर एक

असन्तुष्ट है। सन्तोष का स्रोत हमारे अपने अन्दर ही है, मरते सब लोग हैं, परन्तु सीख कर बहुत कम लोग मरते हैं। इस विचारधारा में बड़ा भेद है। अपने जीवन से कोई तब वफा और ईमानदारी से इन्साफ करता है अगर वह यह समझे कि कितने लोग सुख से मरते हैं। हम संन्यासी उसे मान लेते हैं, जो संसार को छोड़ दे, परन्तु वास्तविक सन्यासी वह है जो अन्दर के मोह, माया-जाल को त्याग दे। यही है भेद जो वर्तमान और भूत के संन्यासी में बन पड़ता है।

आज के संन्यासी बाहर का लोभ-लालच प्रतिष्ठा और पद पर आरूढ़ होकर अपने आश्रम की धाक मनाते हैं परन्तु वास्तविक संन्यासी बेधड़क तब बनता है जब अन्दर और बाहर के जगत् को ठुकरा देता है। अन्दर भी अकेला, बाहर भी अकेला, परम-पिता के साथ अन्दर और बाहर मिला हुआ बेलाग अत्यन्त मस्त हो सकता है। हमने तो संन्यासी क्रोधी भी देखे, आश्रम के संचालक भी देखे, धन संयोजन में रत भी देखे, स्वार्थी भी देखे, परन्तु आज के समय की आजमाईश उनके त्याग और तपस्या के विपरीत मिलती है। कहा जाता है स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज एक दिन गाजियाबाद गए। प्रातः वेला में तांगे में बैठे और वहां की किसी मुहल्ले में बसी आर्य समय में चलने के लिए तांगे वाले को आदेश दिया और किराया ठहराया एक रुपया। उस मुहल्ले में पहुंचने पर मालूम हुआ, कि वहां तो आर्य समाज है ही नहीं, दूसरे मुहल्ले में गए वहां आर्यसमाज का मन्दिर नहीं था, फिर तीसरे में गए वहाँ भी निराशा, इस घूमने और असमंजस में वह तांगे वाला जो पहले पहल एक साधु की सवारी से अपने को खुश नसीब मान रहा था, आखिर यह कह ही बैठा, अच्छी

मनहूस सवारी टकरी, जिसने एक रुपए के पीछे शहर की खाक चनवा मारी। परन्तु स्वामी जी अत्यन्त शान्त रहे। चौथे मुहल्ले में आर्यसमाज मिल गई। तांगे वाले को दो रुपए देकर विदा किया और अफसोस का इजहार किया कि उसे उन की खातिर तंग होना पड़ा, और स्वयं ने बाद में किसी को यह बताया कि अपने शान्त रहने के स्वभाव की परीक्षा के लिए तांगे वाले से ऐसा सलूक किया था, कि केवल यह देखने के लिए भी, कि किसी के गाली गलोच सुनकर गुस्सा तो नहीं आ जाता! मानवता प्राप्त करने के लिए अपने ही विचार का गवाह होना, अपना दृष्टा होना, एक कड़ा साधन बनता है। यदि हम प्रतिदिन अपने विचारों के दृष्टा बन सकें तो हम भी अपनी भीतरी सत्ता संभाल सकते हैं। विचारों के ड्रामे, विचारों के मध्य विचारों की परख बनते हैं।

अरब देश में एक कहावत है कि नरक का रास्ता अच्छे विचारों से भरा है। यह बात है तो अकल से बाहर की, एक बार पढ़ लेने से इसे इन्कार भी किया जा सकता है, परन्तु यह वास्तविकता, कि विचार भिन्न-भिन्न हैं, बड़े-बड़े सुन्दर है, सुहावने और लुभावने हैं, परन्तु वह सब खोखले के खोखले, जब तक वे क्रिया का रूप नहीं लेते। असल बात विचार की नहीं, अमल की है। केवल विचारों से बेड़ा पार नहीं होगा, जब तक हम उनके कदम न बनावें। हमारा भीतर हमारे दुःख का कारण है क्योंकि विचारों की मारधाड़, अपनी ही मारकाट, कोई क्रिया का रूप न लेकर हमारी उथल-पुथल का संसार बनते हैं, इस उथल-पुथल में हम खोये जाते है। सच तो यह है कि हर एक दूसरे की संभाल चाहता है, दूमरे की ओर निगाह रखता है, दूसरा उसकी प्रतीति और अनुभव है,

जबकि चाहिए यह कि हर एक अपने पर नजर डाले, अपने को संभाले। इसलिए बन में बैठी वह देवी अपने भीतर ही सुहाग भरा संसार देख लेने की साक्षी दे रही थी, जहाँ महाराज अधिराज विराजमान हैं, हमारा और हमारे युग का अपनी विद्यमानता से सुशोभन कर रहे हैं। कहते हैं एक युग पुरुष के पास एक बार लोग एक देवी को पकड़ कर ले गए, क्योंकि उस देवी ने व्यभिचार किया था। उस युग पुरुष से देवी की सजा जानने के लिए वह वहाँ पहुंचे थे, जबकि उनके धर्म के अनुसार ऐसी देवी को पत्थर मार-मार कर हलाक कर देना माना गया था। लोग भी उस सन्त की परीक्षा कर लेना चाहते थे कि आया वह अपने नियम को लागू भी कर सकते हैं। सन्त महोदय ने कह दिया कि उसके धर्म के अनुसार उसे पत्थर मार-मार कर मार दिया जाय। लोगों को तो साहस मिला गया। सब गए पत्थर उठाने और उस पर बरसाने को, अभी पहला पत्थर पड़ने ही वाला था कि सन्त ने कह दिया कि पत्थर वह मार सकता है जिसने अपने जीवन में व्यभिचार न किया हो। लोग रुक गए सब ने अपने-अपने को देखा और बिना पत्थर फेंके चलते बने। सन्तों की वाणी बड़ी दूरदर्शिता पूण होती है। अब कौई देखे कहाँ हमारा वातावरण कहाँ हमारे सिद्धान्त और कहाँ हमारी कारगुजारी। यहां तो सब दूसरों को रगड़ा देने सुधारने का व्रत और निर्णय लिए हुए हैं। परन्तु हम किस स्तर के हैं, किस शीशे के मकान में बैठे हैं, इसकी मापतौल की दृष्टि बनती नहीं। सच तो यह है कि परमात्मा सीखा नहीं जा सकता। यदि ऐसा होता तो यहाँ परमात्मा की प्राप्ति के लिए अनेक स्कूल खुल गए होते। साइन्स सीखी जाती है क्योंकि वह दूसरों के अनुभव का निचौड़ है।

परन्तु धर्म ही निजि अनुभव है, निजि सम्पत्ति है। वैज्ञानिक एक दूसरे के सहारे खड़े होते है, परन्तु धर्म अपने पैरों पर खड़ा होता है। अच्छे विचार सबको आते हैं परन्तु वे विचार सत्कृत तब होते हैं जब उन्हें क्रियन्वित किया जाता है। फूल पैदा किये जा सकते है दो तरीकों सो एक कागज को कुतर कर और दूसरे बागवानी के द्वारा, अच्छे बीज डालकर अच्छी खाद देकर, उचित पानी देकर, परन्तु हम लोग कागजी फूलों में खुशी ले रहे हैं। इसलिए खुशबू का वातावरण बनता नहीं।

इसी कारण आध्यात्मिकता के फूल निकलते नहीं, महक आती नहीं, कोशिश होती नहीं, और हम कोरे के कोरे बाहर की सुन्दरता में खुश रह लेना चाहते है। संसार में पाप बहुत है, आम है, कई आदमी पाप से छूट नहीं पाते जबकि वे पाप में तड़पते भी देखे गए, इसका कारण भी यही है, कि हम पाप को अन्तरात्मा से नहीं हटाते। यह एक रहस्यपूर्ण अनुभव है। आजका मनोवैज्ञानिक मन के खिलवाड़ तोड़-तोड़ के साफ दिखा रहा है कि अपना मन, अन्दर में बैठा सेवक, बड़ा उस्ताद अपना ही गला घोंट लेता है। हम चाहते हैं कि अमुक मैला विचार छूट जाये, जो हमें बार-बार दुःखी करता है, परन्तु केवल छोड़ने का विचार हमें मुक्ति नहीं देगा।

मानसिक विचारों को छोड़ पाना भी एक कला है और विज्ञान है। मन की स्लेट को शुद्ध करने के लिए अभ्यास का साबुन, परम-पिता का आशीर्वाद, अमल का पानी, और सतत लगन आवश्यक होंगे। ध्यान का पहला अंग गहराई में जाने का है, नजर को फैलाने का है। गलत विचार को हटाना खाला

जो का घर नहीं, एक बड़ा कठिन कदम है। बीज अपने ही भीतर गलता है, तब फूटता है, पौधा बनता है, निजी जड़ों से खड़ा होता है, तब कहीं बाहिर की विघ्न बाधाओं का मुकाबला कर पाता है। एन इसी तरह एक डष्ट विचार को भीतर ही भीतर गलाना होगा, आत्मा के बल से उसे फोड़ना पड़ेगा, स्वच्छ विचार की जड़ें उसका स्थान लेगी, तब कहीं निखरा हुआ, बाहिर के झोंकों का मुकाबला करने का अवसर प्राप्त होगा। अच्छे विचार का ध्यान और सतत डहराने से पकाया जाना आवश्यक है वरन वह किसी झटके से मुर्झा जाएगा अपना और अपने स्वामी की हानि बन पाएगा। निष्ठा, प्रभु आश्रय भगवतकृपा शुद्ध वातावरण के लिए बड़ी आवश्यक हैं। हम इसी लिए रात को सोते समय तन्ये मन: शिव संकल्पमस्तु के मंत्रों का पाठ करने का विधान रखते हैं विशेष कर उस काल के निमित्त, जब दौड़ धूप लेने वाला मन बेलगाम होता है, हमारी सूझ-बूझ से बाहिर होता है। एक व्यक्ति को बुखार हो और उसे फल दिया जाए, वही फल भी उसे बुखार की लाली व तप का संदेश दे सकेगा। किसी के सिर में दर्द हो, हम उसे ठण्डक देने वाला चांद दिखाकर सिद दर्द से राहत लाने वाला बनाएं, उस चन्द्रमा की शीतलता उसको कोई लाभ नहीं दे पाएगी। जीवन कोरा पर्दा है पर्दा पर जो फेंका जाता है वही हमें दिखाई पड़ता है यही रूपरेखा अपने विचारों की, अपनी आत्मा की, क्रिया प्रतिक्रिया की, अपने ही भीतर हो पानी-वाली दुनिया का नजारा बनती है।

——

भेंट दसवीं

भगवान् का बड़ा अनुदान है जो वह हमारे ही भीतर विराजमान हैं। एक बुद्धिमान ने इस सत्य को समझाने के लिए एक बात कही है, कि जब भगवान् रचना कर चुका तब उसके प्रयोग के लिए मानव भी पैदा कर दिया। मानव की सत्ता जब परीक्षण की तो उसके मस्तिष्क की बनावट, कार्य-कुशलता और श्रेष्ठता देखकर भगवान् को भी विचार आया कि यह कभी मेरे ही मुकाबले में खड़ा न हो जाये। अब तो मानव पैदा होचुका था। भगवान् का विचार भी गलत नहीं था जैसा हम स्वयं देख रहे हैं कि मानव सब कुछ उससे प्राप्त करके उस नेक सत्ता से इन्कार कर रहा है। कहते हैं तब भगवान् ने अपने देवताओं से सलाह की, कि वह स्वयं कहां छिप जाये ताकि मानव उससे कोई गड़बड़ न कर सके। किसी ने राय दी कि भगवान् अन्तरिक्ष में ही बैठ जाय, परन्तु उसे उत्तर दिया गया, कि श्रेष्ठ मस्तिष्क का स्वामी मानव वहाँ भी पहुंच सकता है जैसे कि देखा ही जा चुका है। फिर किसी देवता ने विमर्श दिया कि भगवान् पाताल में रह जाये, उसके उत्तर में यह कहा गया कि मानव अपनी बुद्धि और उत्साह से वहाँ भी पहुंच सकता है जैसाकि यह भी देखा जा चुका है कि मानव सागर के

भीतर पांच मील नीचे तक हाथ लगा आया है। आखिर एक बुर्जुग और अनुभवी देवता ने भगवान् को विमर्श दिया कि वह मानव के भीतर ही छिपकर बैठ जाये, जहां साधारण व्यक्ति का पहुंचना सम्भव न हो सकेगा। भगवान् को यह राय पसन्द आई और ऐसा ही कर दिया गया। यह तो उन देवताओं की राय थी कि भगवान् हमारे भीतर ही आसन ले बैठें, परन्तु हमारे सिद्धान्त के अनुसार मानवता से यह सबसे बड़ा उपकार जिसका जिक्र नहीं हो सकता, एहसान नहीं गिना जा सकता। यह सत्य है कि वह महान् से महान् हमारे ही होकर हमारे ही अन्दर विराजमान हैं, यह बड़ो अद्भुत महिमा है—मानव की भी और भगवान् की भी। वेद मन्त्र कहे जा रहे हैं कि वे निकट से निकट हपारे प्रेम-सखा हमारे ही दामन में हमारी सारी मुरादें सुन पाता है स्वीकार करता है, कृतकृत्य करता है, यह वास्तविकता कितनी मनोहर है और फिर हमारे प्रेम का पात्र, हम उसकी कृपा और प्रेम के अधिकारी भी बन सकते हैं, यह तथ्य अपने में बड़ा विचित्र है, उत्तम है, बढ़िया है, वेद मन्त्रों के द्वारा उसे अपने ही अन्दर से साक्षात कर लेना गहराई से उससे हिल-मिल जाना बताया गया है। गुप्त से गुप्त बात की उससे सलाह ले लेना, अपने दिल की सारी बात कर डालना, और सुन लेना बड़े लीलापूर्ण और लुभावने किस्से हैं। इतना महान् सर्वशक्तिमान हमारे जैसे नाचीज में रह जायें, यह कितनी बड़ी बात है। इन्सान तो इतना भी करता है कि वह भगवान् का शत्रु भी बनता है पर शायद हमारी ही संभाल की खातिर उसने परमसंरक्षक होकर के, हमारे यहाँ ही बैठ जाना स्वीकार किया है। उसके और हमारे उद्गार बड़े

निराले है, इससे बढ़कर और क्या अद्‌भुत अनुग्रह होगा। ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा है कि यह अग्नि देव मन्दिर हैं, प्रसन्न कर देने वाले हैं, आनन्द स्वरूप हैं, शुभ मति देने वाले हैं, जिनकी स्मरण मात्र से ही आनंद-लहरें उठने लगती हैं। इसलिए वह अग्नि देव बड़ा प्यारा है, सब तरह से प्यारा है, और असल में सबका प्यारा है। पर वह अग्नि देव हम में सोया पड़ा है। किसी के घर में किसी बड़े आदमी का आराम करना, सोना भी स्वयं में एक बड़ा भारी वैभव है यथा आरामशाला होने का सौभाग्य भी तो मानव को मिला। उस की पवित्र ज्योति इतनी पवित्रता कारक है कि अगर वह ज्योति स्वरूप जाग जावे तो नाखुन से लेकर चोटी तक पवित्र करदे, हमारी नस-नस को, रोम-रोम को, जगमगा देवे, मालामाल कर देवे, हशास कर देवे अपितु हमारे प्राण को, मन को हर एक वेदना को पवित्र करदे। शोक बड़ा है जो हम उसे जगा नहीं रहे। पर यह प्रश्न भी उचित है कि उस देव को जगायें कैसे ? इसका उत्तर भी वही वेदमन्त्र पेश कर रहा है कि यह अग्नि मन्द्र-मन्द्रों के द्वारा जगाया जा सकता है। केवल इसे जगाने के लिए हृदय चाहिए, वह भी आत्रद्रित, जिन्दा-दिल, स्वयं में हर समय खुशोखुरम चाहिए, कितना बड़ा नुस्खा पेश कर दिया। अर्थात् एक मनहूस, दुःखी, निराश दिल, उसके राह का ग्राहक हो ही नहीं सकता। देखा भी तो यही गया है कि भक्त लोग हर हाल में शादमां, हर अवस्था में राजी, भक्ति भरे वचनों के द्वारा उसे निहाल करते हैं। खुद सुखी होते हैं, उसे सुख देते है। ऐसे हृदय भक्ति रस में शराबोर हो ज़ाते हैं, नाच उठते हैं, अपने कोमल हृदय में उसके दर्शन लेते हैं, और अपने अन्तःकरण के

पवित्र उद्गारों के द्वारा आनन्द के आँसुओं में अपने को धो लेते हैं। उसे साक्षात् कर लेना, उसमें समर्पित हो जाना एक निराला अनुभव है। वे भक्त लोग उनकी खातिर जीते हैं, परिश्रम करते हैं, किसी का बुरा नहीं करते और इसके विपरीत दस्यु वे हैं, जो कर्महीन हैं। बिना यज्ञ के खाने वाले, बिना परिश्रम के जीने वाले, बिना अधिकार के भोगने वाले, बिना बाँट के स्वामी बनने वाले दस्यु और दास कहाते हैं।

एक और ऋग्वेद के मन्त्र द्वारा भगवान् से भक्त कहता है कि मैं और तू मिल जायें ताकि मेरे सारे स्वप्न ही सिद्ध हो जायें, मैं कृतकृत्य हो जाऊं और तू मेरी भक्ति से सत्कृत्य हो जाये। किसी मत के अनुसार भगवान् सात आसमानों पर कहीं स्वर्ग में रहने वाला होता तो वहां कौन जा पाता, वहां कैसे उसे ढूंढ पाता, वहाँ क्या-क्या उसकी निशानी पहचानी जाती, परन्तु कमाल है उसकी ज़र्रा परवरो का कि हमारे ही, अपने ही कोने में वे तशरीफ रखते हैं तथा प्रतीक्षा में हैं हमारे इल्तमास की, हमारी सदा की, हमारी आरज़ू की, हमारी पुकार की, हमारी दुआ की, हमारी आहोज़ारी की, हमारी ही हमारी दर्द भरी मुस्कान की—कितनी पदवी दे दी हमें, कितना ही अधिकार दे दिया हमें। वेद मन्त्र में कहा है–"हम सब काम तेरे लिये ही करने वाले बनें, हमेशा सब काल आठ पहर, दिन-रात जो कुछ भी करें तेरे लिये ही करें और जो कर्म छोटे से-छोटा और बड़े से बड़ा हो सके तेरे समर्पण करते जायें। अपने एक-एक कर्म से एक-एक श्वास से तेरा ही पूजन हो।"

ऐसा करते जाना कितना सात्विक जीवन हो सकता है, कितनी सुखमय अवस्था हो सकती है और इसका परिणाम

हमें डिग्री मिल जाती है एक निरीक्षक हो जाने की ! हर मानव को ठीक-ठीक सहयोग की, यह डिग्री जिसे अता हो जाये वह कितना सफल जीवन होता होगा, वह आईना होता होगा, कितना शफाफ चमकता ग्रह होता होगा, जो हर एक को सही तस्वीर प्राप्त कर सके, जिसके कारण-मान-मर्यादा मिल पाए और किसी से अनाधिकार चेष्टा न बन पाए। सचमुच भगवान् ने मानव को बड़ी पदवी दे दी, ऐसे अपने भक्त को भीतर से ही पुतली की तरह नाच नचाने की। संरक्षण देता है धोखा कहीं नहीं देता। किसी के जाल में नहीं फंसने देता। इस प्रकार अपने उपाराक को अपने नूर और आशीर्वाद का ठीक मजा चखा देता है। इसके साथ अन्दर बैठा भगवान् हमारी दुविधा को संभाल लेने वाला, हमारी हर सफलता की शान बन जाने वाला, विचित्र प्यार दे और ले लेने का एक क्रम बन जाने-वाला है।

ये सब अवस्थाएं हो ही तब सकती थीं व हैं जब भगवान् ने हमारे ही भीतर बैठना स्वीकार कर लिया ! भला हो उस देवता का, जिसने भगवान् को बड़ी अच्छी राय दे दी कि वह हमारे ही अन्दर छिप कर बैठ जाय। बहुत बढ़िया---पुर राज, पुरगौर और पुरसरूर। वह अग्नि अग्नि से प्रकाशित किया जाता है, जैसे एक ज्ञानी दूसरे ज्ञानी के द्वारा विद्वान् हो जाता है, ब्रह्मचारी आचार्य के द्वारा विद्वान् बनता है, जैसे अच्छे व्यक्ति की संगति से दूसरा खुशनसीब होता है, साधुओं के सत्संग से आम जनता शान्ति लेती है, जैसे सच्चे मित्र के द्वारा सच्चा मित्र लाभ उठाता है, उसी तरह हमारा आत्म-अग्नि भी उस महान् आत्म अग्नि से प्रबुद्ध होता है, यह

हमारे वेद मन्त्र, शुभ लोरियाँ हैं, शुभ सन्देश हैं, शुभ आदेश हैं जो स्वयं में हमारे लिये शुभ दिशा बनते हैं। इसकी व्याख्या हो नहीं सकती। यह हाल अहवाल हर एक के देख लेने और स्वयं में अनुभव लेने के हैं।

स्मरण रहे, जादूगर, मदारी अपने खेल दिखाते हुए जानवरों को सम्बोधन करते हुए अपने किसी पात्र को पेश करते हुए प्रायः यह सब प्रयुक्त करते थे कि 'अमुक मुद्रा गया'। वास्तव में प्रसन्नता-प्राप्ति के उपलक्ष्य में यह शब्द कहा जाता है या यह शब्द मन्दिर से विगड़ा मन्दिर शब्द प्रसन्नता वाचक होने से हमारे मन्दिरों का भी एक भिन्न अर्थ पेश करता है, जहां प्रसन्नता प्राप्त हो फिर वेद मन्त्र में जिसका वर्णन किया जा रहा है कि यदि हम मन्दिरों वाले हो जायें तो भगवान् हमें मिल सकते हैं। इसका भी यही अर्थ है कि प्रसन्न चित्त ही उसे प्राप्त कर पाते हैं। अपने भीतर उसे बिठाए हम लोग, हंसमुख, बेफिक्र चित्त मुक्त होने का सौभाग्य ले सकते हैं। आज के विज्ञान का शुभ सन्देश कि निर्भय तथा निश्चिन्त ही सुखी जीवन पा सकता है, हमारे लक्ष मन्त्र की व्याख्या का समर्थन करता है। किसी सात्विक, प्रेमी, मान्यवर के हमारे घर पर पधारने पर हम लोग कितने सम्मानित होते हैं, ऐसे ही भगवान् के प्रति इस प्रकार की आराधना, शुभ संकल्प, मन्दिर वाले हम लोग अपना सौभाग्य मना सकते हैं और यह अनुभूति हो जाये कि आप—सदा शिव हमारे यहाँ आये हुए हैं, हमारे गृह अन्तरतम में आसन लिये बैठे हैं, कितना सुखप्रद तथा उल्लास का अनुभव देता है, प्रसन्नता मिलती, नशारा चेहरों से है, स्वस्थ रहने का सबसे सस्ता सौदा भी यही है, भगवान् की अमूल्य रचना, नित नये अजूबे, भिन्न-भिन्न वनस्पति उप-

हार, सृष्टि भर का उपकार, सूर्य और चन्द्रमा की प्रतिभापूर्ण प्रकाश व ठण्डक बरसाने वाली किरणें, प्रातः समीर, जल देवता का शीतलतापूर्ण प्रसाद, क्या से क्या हमें हर समय आनन्ददायी बनाने के लिये देखा जा रहा है। वे बड़ी बदनसीब आँखें हैं जो इस रहस्यपूर्ण वातावरण का पारावार पाने से पीछे रहती हैं। जहां करुणा भरी सृष्टि का दिग्दर्शन हमें अनेक पाठ पढ़ने को प्रस्तुत करता है वहाँ हमारे भीतर से प्रमोद व आनन्द को छलका देता है, यह एक बड़ी विचित्र लीला है। हमसे जब कोई अनायास किसी के प्रति परोपकार का कार्य हो पाता है जिसमें हमारा कोई स्वार्थ छिपा नहीं होता, इतने मात्र से ही हमें कितना गदगद हो जाने का शुभ अवसर मिल जाता है। यह भी तो एक अत्यन्त शुभ समागम बनता है।

कहते हैं आर्य समाज के महान् वीतराग संन्यासी स्वर्गीय सर्वदानन्द जी महाराज किसी उत्सव पर गए हुए थे। एक दिन अपने साथ वहाँ गए हुए उपदेशकों को बुला लिया और कहने लगे कि आओ आज हम सब हँसने का प्रोग्राम मनावें। उनमें से किसी ने कहा कि महाराज कोई विषय भी तो हो। इस पर वे स्वयं ही कहकहा कर हँस पड़े कि हँसना स्वयं ही एक विषय है। उनका कहकहा लगाना था कि सब की आँखें खुल गईं और खूब मजलिस जम गई प्रसन्न चित्त हो जाने की। यह है हाल मन्दिर जाने वालों का, मन्दिरों का, मन्दिर बनानेवालों का। कई व्यक्ति तो इसे अभ्यास ही बना लिया करते हैं। यही अनुभव अपने आप एक रूपरेखा बना लेता है। ऐसे हल्के-फुल्के दिल उस महान् सूक्ष्म के प्रसाद के सत्पात्र हुआ करते हैं।

भेंट ग्यारहवीं

कहा जाता है एक फोटोग्राफर ने अपनी दुकान पर फोटो खिचवाने और उनके निरख का बोर्ड लटका रखा था। उसके अनुसार जो असल फोटो, जैसा वह है, खिचवाए उसके दस रुपये, दूसरा वह जो लोगों को जिस तरह भा सके उस प्रकार का फोटो निकलवाने के १५ रुपये, तीसरा जो जैसा है तो नहीं, परन्तु बनावट कर लेने से भिन्न-सा दीखे, उसके २० रुपये, यूं रकमें माँग रखी थीं।

कुछ समय के पश्चात् उससे पूछा गया कि किस प्रकार के लोग उससे ज्यादा फोटो निकलवाने आते हैं ? उसने उत्तर दिया पहली प्रकार के फोटो निकलवाने तो कोई आया नहीं ? दूसरे प्रकार की फोटो के लिए कुछ व्यक्ति अवश्य आये। परन्तु तीसरी प्रकार के फोटो के बहुत इच्छुक उसके पास आते हैं। यह है वास्तविकता कि हम संसार को असलियत से दूर ले जाकर बनावटी और धोखा में डालना ज्यादा पसन्द करते हैं। संसार में तीन प्रकार के लोग हैं एक तो नास्तिक जो भगवान् को मानते ही नहीं, एक वो आस्तिक जो व्यापार की रूपरेखा वाले भगवान् को मानते हैं, वो भी शायद इसलिए कि वो सजा और जजा का देने वाला है, इसी डर से वे आस्तिक हैं, यद्यपि

सच तो यह है कि ईश्वर से डरने वाला कभी सच्चा आस्तिक हो नहीं सकता, क्योंकि डरने से कभी प्रेम पैदा नहीं होता, डर के साथ भीतर घृणा घुसी रहती है, जो लोग भगवान् से भयभीत हैं, वे भगवान् के शत्रु हैं, निरे व्यापारी हैं, स्वार्थी हैं, वक्त टालने वाले हैं, अवास्तविक हैं, किसी पर्दा के पीछे जीवित रह लेने के इच्छुक हैं, उनके मन में परमात्मा की सही तस्वीर मिल ही नहीं सकती। तीसरे वे लोग हैं जो भक्त के नाम से पुकारे जाते हैं, जिन्हें प्रभु से प्यार है, उसकी रचना से, उसकी लीला से, उनकी अद्भुत महिमा से, इसलिए उनका जीवन खालिस धर्म के प्रेम से चलता है। यह वास्तविक पहचान ईश्वर के भक्तों की गिनी जा सकती है। यूँ तो आस्तिक लोग बड़े मान से अपना नाम भगवान् के पुजारियों में लिखवा देते हैं, परन्तु ईश्वर के डर से ही सदाचार नहीं बनता, भय साधन जरूर है, जैसा कि हम रास्तों पर, चौराहों पर, पुलिस वाले खड़े कर रखते हैं ताकि उनके डर से शांति और अनुशासन बना रहे। हमने भी इसी प्रकार परलोक में भगवान् को खड़ा कर रखा है। भगवान् को केवल कांस्टेबल बना देनेवाले धर्म के संरक्षक नहीं कहे जा सकते। धर्म तो केवल निर्भय, विवेकशील, निज बल, अटल विश्वास और सिद्धांत-मय अवस्था का नाम है जो शक्ति बन करके उस महान् शक्ति से सम्पर्क लेती है। परमात्मा का अनुभव एक अन्दर का गहरा अनुभव है। उस अनुभव में मानव उसके प्रति कृतज्ञ होता है, जो दरुस्त आस्तिकता का रूप लेती है। जो व्यक्ति अपने अंदर मृत्यु को बसा लेता है, वही सत्य को जान पाता है। सच्चाई तो यह है कि सत्य कभी किसी सम्प्रदाय को पैदा नहीं करता।

जो सत्य को जानता है वह मानव मानव के मध्य विभाजन स्वीकार ही नहीं करता। महर्षि दयानन्द बड़े विद्वान् थे, बड़े स्वाध्यायशील थे, खूब घूम पाए थे, परन्तु उनकी यह बड़ी श्रेष्ठ कसौटी और उच्चता थी कि उन्होंने अपने विचारों के बलबूते पर अपना सम्प्रदाय खड़ा नहीं किया परन्तु आदि ज्ञान के आधार पर पुरानी वेदों की बातों का प्रचार करना अपना धर्म माना। यह उनकी बडी विशालता थी। उन दिनों जबकि लोग सम्प्रदायों से लथपथ थे, कुरीतियों में खोये हुए थे, उस समय कोई नया नाम देकर एक नया मत चालू कर लेना आसान था। किसी के स्वार्थ की पूर्ति के लिए उन्होंने अपना सम्प्रदाय पेश नहीं किया, परन्तु महान् सत्य के सच्चे पुजारी और वक्ता थे। संसार में ऐसा व्यक्ति खोजना दुष्कर होगा, परन्तु प्राय: प्रत्येक किसी न किसी शक्ल में सत्य की खोज की आड़ में अपनेपन की मोहर लगा छोड़ते हैं।

सत्य का पुजारी हल्का होता है, सरल होता है, चालाक लोग सत्य की ऊचाईयों पर नहीं पहुंच पाते, उनके पंख रास्ते में कट जाते, टूट जाते हैं। मानव के सामने दो ही रास्ते हैं एक आत्म साधना और आत्मा हत्या। सत्य का पुजारी अपनी साधना से गुप्त रहस्यों को प्रकाश देता है। ईश्वर समर्पित हो करके सत्य के पुट द्वारा वास्तविकता को सामने लाता है। सत्य सोचा नहीं जाता बल्कि देखा जाता है। पश्चिम ने जिसे फोलोस्की कहा भारत ने उसे दर्शन कहा। पश्चिम की फिलोस्की का सम्बन्ध विचार से है हमारे दर्शन का सम्बन्ध समाधि में ईश्वर के साक्षात् का है, यह समझने की बात है। स्वामी दयानन्द समाधी में गुरु के पाठ याद करते थे। भतकाल के ऋषि समाधिस्थ होकर सत्य का प्रकाश लेते थे। हमारे यहां शास्त्र पढ़ने

वाले और पढ़ाने वाले फिलोस्फर बहुत है परन्तु दार्शिनिक कम है। साधना से विचार की शक्ति को निराला रूख मिलता है। गहराई में पहुंचे हुए तपस्वी का सोचना बन्द होता है। किसी शुभ प्रेरणा का उदगार होता है। कुआं खोदने वाले जब सारी मिट्टी पत्थर को अलग कर लेते हैं, तब नीचे से झरना निकलता है, जिसे कुआं कहते हैं। सत्य को पाने वाले इधर उधर की बातों से परे होकर अपने भीतर प्रकाश लेते हैं, यही विधि स्वामी विरजानन्द ने महर्षि दयानन्द में प्रयुक्त की थी। आज हम अन्तरआत्मा का अनुसन्धान त्याग चुके हैं। तपस्या और त्याग से भीतर के आनन्द को अनुभव में लाना सच्चे अर्थ में परोपकारी बनना होगा। यह अब माना गया है कि पहले दो महायुद्धों में एक खास रहस्य की बात सामने आयी है। जिन दिनों सारे यूरोप में जंग चलते थे उसी दौरान में हत्याएं कम हुईं, डाके कम पड़े, चोरियां कम हुईं, इसका कारण ढूंढ़ने से यह विचार बना है कि युद्ध की हिंसा में लोग इतने प्रसन्न थे कि दूसरों की हिंसा करने का विचार कम आता रहा।

साधारण आदमी दुःखी होते हुए दुःखी संसार बनवाते हैं, आनन्दित आदमी दूसरों के हित में अपनी प्रगति और जीवन के दर्शन लेते हैं, साधारण आदमी सुख को पाने के लिए दौड़ता है परन्तु प्रभु भक्त सुख को बांटने को दौड़ता है, साधारण आदमी सुख का अनुभव देता है, वो सुख की बांट करने में व्याकुल होता है। एकको दौड़ का लक्षण, वासना होती है, दूसरे की दौड़ का लक्ष्य करुणा और दया होती है, आनन्द करुणा पैदा करता है, हमारे ऋषि में करुणा थी, क्योंकि उनमें आनन्द था, यह ही मौलिक बात है, अद्भुत राज़ है, वास्त-

विकता है। सुलझे हुए व्यक्ति केवल सत्य पर दृढ़ता से स्थिर रहते हैं, उनका एक ही नियम होता है, अपने को माँजने का, मन और विचार को इट्ठा करने का विवेकशील होने का उन नियमों से पृथक् होकर हम देख ही तो रहे हैं। भगवत प्राप्ति की ललकारें, पुकारें आहटें, मनादी प्रभु प्राप्ति का बाजार गर्म करने वाले बड़े व्यस्त हो रहे हैं।

अमेरिका देश में ३००० सम्प्रदाय चल रहे हैं। हर एक गुरु बन कर अपने-अपने भगवान् के दर्शन की गूंज दे रहा है। भारत जैसे देश में २२ भगवान् हैं, प्रत्येक का नारा अपना, झंझट अपना, रूपरंग अपना, फिर विशेषता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति आचार्य का नाम रख कर अपने-अपने भगवान् का सम्पर्क दिखा लेने का दावा कर रहा है। कितना धोखा मानवता से बन रहा है। जैसे फोटोग्राफर के यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की फोटो के भिन्न-भिन्न निर्ख देखे थे ऐसे हमारे मत-मतान्तरों वालों ने भी दुकानें खोल रखी हैं, प्रत्येक हजारों की गिनती के अनुयायी बतलाता है। प्रत्येक हजारों और लाखों की धनराशि की चोरी से अपने भगवान को ऊंचा बता रहा है। एक तो होड़ है भगवानों की वास्तविकता से दूर, दूसरी ओर होड़ है अपने सुशासन के प्रचार की। प्रत्येक देश अधिक सभ्य, अधिक शिक्षित, अधिक अनुशासित होने का दावा लिए बैठा है पर वास्तविकता को भूला नहीं जा सकता। हर ओर प्रगति का नारा और वर्णन चलता है। अब तो राज्य-सरकारें, देश-विदेश अपने-अपने यहां लोक सम्पर्क तथा प्रचार विभाग खोले बैठे हैं जिनका धन्धा ही यही है कि दूसरों की आँखों में जंचने के लिये हमारी धाक जमनी ही चाहिये ताकि आँख से आँख मिल सके।

जरा कोई जाँच-पड़ताल करे तो, चाहिए क्या था, हो क्या रहा है ? १९६८ में फ्रांस में ९२ बैंक लूटे गए पर अब वहां दो बैंकों की लूट प्रतिदिन की है, इटली में पिछले चार सालों में लूटमार सात गुना बढ़ गई है। यही हाल अपहरण का हो रहा है। इंग्लैंड में दुकानों में से ग्राहकों के द्वारा चोरी २.१ करोड़ रुपये प्रतिदिन की हो पाती है, अमेरिका में प्रति वर्ष २२ अरब रुपए का माल दुकानों से ग्राहक अपना-अपना सौदा लेते-लेते उठा मारते हैं। विचित्र सन्तुलन है — उधर से भगवान् को पकड़ लेने की होड़ उधर उनके माल असबाव को उड़ा लेने की होड़ ! यह सारा माजरा बना हमारे अपने डांवा-डोल हो जाने का। अमेरिका में ३० लाख व्यक्ति भिन्न सम्प्रदाय की दुन्दुभी वजाते हैं। वहाँ स्व० प्रभुपाल ने ही कृष्ण का आन्दोलन चलाया था, सब अनुयाइयों के सिर मुँडवा दिए। जब वे स्वर्ग लोक चलते बने, हरे कृष्ण ठण्डा पड़ गया। मोन साहित्य के ४००० अनुयायी हैं, उनके अनुसार उनके भक्त अपने माता-पिता से ही नाता तोड़ लेते हैं। दिन भर में १८ घण्टे काम करते हैं पर इस गुरु की सम्पत्ति ७५ करोड़ की है। भारत के वाल योगेश्वर माने हुए भगवान् निकले जिनका अपने ही भाई से मुकाबला ठन गया। हीरे जवाहरात विदेश से लाते हुए वह पकड़े गए, लांछन भी अनेक लगे, हाईकोर्ट में केस भी चले पर भगवान् बनने की स्पर्द्धा वहीं की वहीं रही।

हमारे और विदेश के भगवान् धन राशि की चोटियों पर चढ़ रहे हैं जहाँ भगवान् की क्या मजाल वहाँ तो धन राशि का प्रकाश भगवान् के प्रकाश को मात कर देता है। यह सारे वृतान्त देखने पर किसी ने यह भी कह दिया कि भगवान् किसी को भगवान् न बनाए तो यह दुर्गति तो न हो। अब बताइए

हम भी भगवान् का जो आदर्श लिए बैठे हैं, वे भी भगवानों की बन्दर बांट लिये बैठे हैं, बड़ा कड़ा मुकाबला है, पर भला हो हमारे महर्षि का जिसने आदि अनन्त भगवान् की पहचान अपने अन्त:करण की साक्षी से प्रज्वलित करके अनादि ज्ञान की सूची देकर हमें कृतकृत्य कर दिया है। जिनकी केवल संभाल अपने असली स्वरूप में पनप सकने, उदबुद्ध होने तथा प्रकाशवान होने से प्राप्त होती है, भगवान् एक है, सत्थ एक है, सत्य चाह भी केवल एक है, सत्य द्वारा जीवन का लक्ष्य भी एक है अत: अनेक न होकर एक हो जाने का आयाम अपना कर, एक ही सूर्य देवता के प्रकाश में दीप्यमान होकर अपना और अपने जहान का नूर बन सकते हैं एवं अपने अनुभव की गोद में अपनी पुस्तक का पाठ पढ़ सकते हैं, पेचीदा मन के भाव, सन्तुलित मापतोल तथा सम्भाल से सरल और तरल कर सकते हैं, सरलता के आर्जीक लोक से भगवान् का अवतरण ले सकते हैं, निखरी हुई आत्मा में उस महान प्रतिभाशाली की दिव्यता पा सकते हैं। इस अवस्था का कोई राग क्या गाए, कोई क्या वर्णन करे, केवल हम जो स्वच्छ समुन्नत आतमा है उसी को देखना, मानना तथा जानना है।

स्वामी रामानुज अक्ने मन्दिर की परिक्रमा कर रहे थे, इसी दौरान एक चाण्डाल उनके सामने आकर, पैरों पर गिर पड़ा। महाराज ने बड़ा बुरा मनाया और गुस्से में उसे परे हट जाने का आदेश दे दिया। तुरन्त चाण्डाल बोल पड़ा 'महाराज, सभी ओर पवित्रता ही पवित्रता है, मैं भी तो समर्पण कर चुका हूं बताइए मैं कहां जाऊं।' चाण्डाल का यह कहना था कि आचार्य को चौंक आगई। उठा के उसे गले लगा लिया। यह अभिन्नता, चौंक, जागृति जब भाग्य में आ जाए वह बड़ा शुभ

वेला होता है, आत्म-तम हो पड़ना, ईश्वर का समागम हो जाना कहा जाता है पर यह मिले उसे, जो जैसा अपने को समझ ले। आचार्य ने पहले अपनी सही अवस्था नहीं पहचानी। चाण्डाल ने क्षुद्र जाति के कारण भी अपनी आत्मा की शोभा को सन्मुख रख लिया था, साहस बना उसमें। वह निज साहस से सत्कृत भी हो गया, यही अद्भुत अवस्था मानने और समझने की है।

"जीवन जो केवल एक क्षण है"

चाहे कितना लम्बा क्यों न हो, मगर
पहुंच जाता है मञ्जिल तक
एक-एक पग से पूरी हो जाती है यात्रा,
ऐसे एक-एक क्षण का जीना है जीवन
चाहे कितना और कैसा क्यों न हो
मगर चलते हैं सभी नींद में
आंख मूंद कर रखते हैं अगला कदम
भय, शंकाओं से होते हैं घिरे
होश आती है तभी, चुभते हैं कांटे, काटते हैं बिच्छु
कोसता है पथ को और अपने भाग्य को
कौन जी रहा है, अपने इस एक क्षण के जीवन को
कौन देख रहा है, उस क्षण में घट रहा है, उसके इर्द-गिद
पाता है उस क्षण अतीत की गाथाएं गाता
अस्थिर पिंजर तोड़ता उसमें जीवन भरता
बनाता दिखाता उस काल का रूप

उसका रेखा चित्र
वास्तविकता से कोसों दूर
कभी उसी क्षण में बनाता भविष्य की योजनाएं
देखता मीठे-मीठे सुखद स्वप्न
लेता अभिलाषाओं को नभ पर
ऊंची-ऊंचो उड़ाने
व्यर्थ में खो देता उसी क्षण को
किसी को नहीं वर्तमान में जीना
जागा हुआ उसी क्षण को जौना
देखता हूं अपने इर्द-गिर्द
चलती फिरती लाशें
मरघट लगती है मुझे धरा
इसी कोहरे ने ढक दिया है जीवन
सो रहा है जीवन
जो केवल एक क्षण है।

—कुल भूषण दीवान

बारहवीं भेंट

प्रार्थना में अद्भुत शक्ति है राजकुमार राम भगवान ने शुद्ध प्रार्थना के बल पर ही वनवास के चौदह वर्ष, युद्धों में भी निज शान्तिपूर्वक निपटा दिये। भगवान कृष्ण को ही प्रार्थना के ही पुण्य लाभ थे जो महाभारत युद्ध के नेता भी बने और भगवद् गीता का प्रकाश भी किया। महर्षि दयानन्द ने प्रार्थना प्रताप से ही अकेले युग पुरुष होकर आर्य जाति का पुनर्निर्माण किया। महात्मा गाँधी का तीन बजे उठकर प्रार्थना में बैठ जाना ही था कि विदेशीय विस्तर गोल करके चलते बनें।

सुन यह रखा है हमने, कि भगवान ने मनुष्य की रचना की, पर देख यह रहे हैं, कि मानव ही भगवान की रचना करता है। प्रत्येक का अपना-अपना भगबान, अपने-अपने सामर्थ्य का बुद्धि का, और पहुच का, परिक्रमा का, परिमाण का, भगवान बन पाता है। अपनी टाईप के घड़े हुए भगवान से, अपनी प्रार्थनाएं मनवाने का भी शौक करता है, और कहीं उसकी प्रार्थना में, शर्तों में कभी पेशी हो जाये, तो अपने भगवान की आस्तिकता में ढील देकर दोबारा सोचने लगता है। सच तो यूं है कि हमारी प्रार्थना तो हमारी वासनाओं का

रूपान्तर है। हम प्रार्थना कहते ही मांगने को हैं। परमात्मा को हाथ मार लेने के हमारे विधि विधान भी निराले हैं। कहीं उसके नाम की कूंक देकर, कहीं उसे रुतबा देकर, कहीं उस की खुशामद करके, काम निकलवा लेने के हमारे ढंग बना करते हैं। हम तो परमात्मा की कल्पना, क्षुद्र स्वभाव व्यक्तियों की तरह करते है, जो अपनी प्रशंसा सुनकर फूल जाते हैं, और गिला सुनकर नाराज हो जाते हैं। हमने तो मन में परमात्मा को भी मानव जैसा स्वरूप दे रखा है, ये सोचते हुए कि जैसे मानव किसी से प्रसन्न व खिन्न होता है, ऐसा भी भगवान करता है। परन्तु सच्चा भक्त वेद मन्त्रों के अनुसार, परमात्मा का ध्यान करता है। प्रार्थना किसी भिन्न से की जाती है, पर ध्यान किसी भिन्न से नहीं किया जाता। प्रार्थना और ध्यान में जमीन आसमान का फर्क है। प्रार्थना हाथ फैलाना है, ध्यान में हाथो को सुकेड़ना और अपने को बदलना है। ध्यान तो खुद के चित को निर्दोष शान्त और शून्य बना लेने का नाम है, वहां चित्त की भीड़ भी शान्त हो जाती है, वहां कोई लहर फटक नहीं पाती। वहां शान्त वरेणयम की झील में सत्य के प्रति, अपने, को भूलता हुआ देखा जाता है। एक वेद मन्त्र में भगवान से भक्त कहता है—"मैं तुझे, सब हालतों सब कालों में, नमस्कार करता हूं, सदा तेरे आंगे झुकता हूं, कभी तुझे अपनी इच्छा के अनुसार झुकाने की कोशिश नहीं करता, कभी अपनी सहूलियत के अनुसार तुझे मोड़ने की मूर्खता नहीं करता, तेरे स्वभाविक नियमों में अपने आप को विसर्जन करके अपने जीवन की रूपरेखा के दर्शन करता हूं।"

कोई सोचे तो प्रार्थना और ध्यान का कितना भेद नजर आता है। इच्छाओं के सागर में डूबते हुए हम गर्व लगाते हैं,

प्रसाद बांटते हैं, चेलेंज देते और लेते हैं, सच माना जाये, तो प्रार्थना एक कला है, हुनर है, महाराजाओं के महराजा से पेश होने का विधि विधान है ! हस पलपल जियें यही उत्तम साधना है ! वेद वाणी संसार की सबसे श्रेष्ठ भाषा है, लाजवाब है, सारगर्भित है। पातञ्जलि ऋषि ने तो इतना कह दिया है कि वेद का एक-एक शब्द अच्छी प्रकार समझा हुआ, अमल किया हुआ, संसार को स्वर्ग बना देता है। उस स्वर्ग में हमारी कामनाओं को पूरा करने वाली कामधेनु प्रकट होती है। अद्‌भुत बात तो यह है कि हमें अपने अंधकार पूर्ण विवरग का मान ही नहीं क्योंकि हमको इससे भिन्न अन्य प्रकार के प्रकाश का ज्ञान ही नहीं ! शुद्ध बुद्ध हो जाना, स्वच्छ हो जाना—अपने कर्मों का सही शक्ल नाप लेना, सत्य स्वरूप भगवान के तराजू में अपनी वास्तविकता को तोल लेना, अत्यन्त न्यायकारी परमात्मा के आशीर्वाद के दाम में अपना अनुभव कर लेना, प्रार्थना का एक स्वरूप बन जाता है। हम कह तो बहुत कुछ जाते हैं, परन्तु अपनी ही बातों को पृथक करके विवेक की कसौटी पर अपने कहे हुए को योगदान नहीं देते। यह सारी रूपरेखा बनती है अपने निजि अनुभव से, मैं तो केवल एक बात मनवा लेने की कोशिश कर रहा हूं कि प्रार्थना नाम के द्वारा हम-जिद से दूर होकर, उससे कुछ छीन लेने की वृत्ति को परे रखकर, उसकी इच्छा में अपनी इच्छा की आहुति देकर, उसके प्रकाश के नाम को बढ़ावा देकर, हम सत्य कर्म करने में बह रहें, इसी सुगन्ध से संसार को सुखी करने वाले बनें। प्रार्थना के संसार का बल भी निराला है, श्रद्धावान प्रार्थना में हिमालय जैसा बल देखते हैं, सात समुद्रों वाली विशालता देखते हैं,। इतनी महत्ति अवस्था में उत्पन्न नम्रता से उसके पुरुस्कार, उसकी कृपा को अपने किये का रूप देख लेना, बड़ी सफलता है। आदि ऋषि

जिन्हें वेद ज्ञान का प्रकाश मिला कितने भाग्यशाली होंगे, कितने शुद्ध चित्त वाले होंगे जहां भगवान की कलम चलती गई उनकी स्लेट पर लिखा जाता गया, और हमारे लिए अमर ज्ञान का आलोक बनता गया। थे तो वो भी मानव परन्तु भगवान के वरदान में उन्हें महर्षि और आदि पुरुष होने का सौभाग्य प्रदान हुआ।

महर्षि दयानन्द ने प्रार्थना की व्याख्या करते हुए यह कहा है कि शुभ कर्मों को पूरे परिश्रम से करके फल की इच्छा को उस पर छोड़ देना प्रार्थना का सिंदूर लगाना है। सभी प्रार्थना करने वाला राग द्वेष से दूर होता है, यही अपने स्वरूप की विचित्र दृष्टि बनती है। कहते है, शेष सादी प्रातः अपने पिता के साथ किसी तीर्थ स्थान पर नमाज पढ़ रहे थे, वहां उसी स्थान पर और भी यात्री ठहर रहे थे, परन्तु नमाज के समय वे लोग खर्राटे भर कर सो रहे थे। शेखसादी को तीर्थ यात्रियों की यह बात पसन्द नहीं आई। खुदा की घर खुदा से ऐसी वेपरवाही सरासर कुफर मालुम हुई। आखिर उनसे रहा न गया और नमाज में व्वस्त अपने पिता को हिला कर बोले—कि मेरा जी चाहता है कि इन यात्रियों को लातें मार मार कर जगा दूँ, जो भगवान के समय में भगवान के समय का सदुपयोग नहीं करते। पिता महोदय वे अपने बेटे के ये शब्द बुरे तो मनाये और शान्त होते हुए बेटे को झिझोर कर बोले" उफ तू इन सोने वालों से बढ़कर, काफिरो से भी गया गुजरा है, इनका नमाज से चूक जाना उन्हें क्षमा का पात्र बनाता है, जिनका वर्णन उनकी पवित्र पुस्तक में लिखा है। परन्तु नमाज के समय परमात्मा को यादकरने की बजाय दूसरों के दोषों को देखना, क्षमा की भी सत्पात्रता नहीं देता, उचित भी नहीं बनता और काफिर होने से बढ़ कर दोष

बनता है, तूने तो लातें मार कर उठाने की बातकह करके, अपने परिवार की शोभा को बट्टा लगा दिया है। शेखसादी को शर्म आयी, पिता के चरणों में गिर पड़े, खूब रोये, पिता ने प्यार से उठाया, छाती से लगाया, और कहा-तू मेरे सामने मत रो, खुदा के सामने अपने लिए रो, ताकि तुमे बख्श दिया जाय।"

शेखसादी के पिता का यह प्रकाश शेरवसादी के जीवन भर के लिए एक न बुझने वाला दीपक बना रहा। अर्थात् प्राश्चित करने वाली आत्मा अपने किये पर रो लेने वाली आत्मा को धोखा नहीं देती। क्या यह उचित राय स्वयं एक पुरुस्कार नहीं, उसकी प्रार्थना का उपकार नहीं, मानव का बदल जाना संसार के नियमों में एक बड़ा अद्भुत नियम है ! नया संसार बना लेना एक बड़े सौभाग्य का साधन है। परन्तु यह प्राप्त होती है ईश्वरकी सच्ची प्रार्थना से । भीतरके बल से, परमात्मा का सखा हो जाने से अग्नि में पड़ कर आहुत हो जाने से, आग की चमक ले लेना, नूर पा लेना, दिव्य स्वरूप हो जाना, परमात्मा का शुभ आशीर्वाद है।

कवि अलामा इक बात कहा करते थे—कि जब वह बचपन में स्यालकोट में पढ़ते थे तब उनके वालिद साहिब नमाज और कुरान के पाठ से फारिग होकर अपने लड़के को देखते देखते, अपने कमरे में चले जाते। कई दिनों के बाद उन्होंने एक रोज अपने बेटे से कहा "बरखुरदार मेरा कहना यह है कि जब तुम कुरान शरीफ का पाठ पढ़ो, तो यह समझो कि यह कुरान तुम पर ही उतरा है, अर्थात् भगवान स्वयं तुम से बात कर रहे हैं, अर्थात् भगवान तुम से हम कलाम हो रहे हैं। हम कई रोज से, स्तुति प्र।र्थना उपासना के शब्द सुनते चले आ रहे हैं, इनके भेद भी समझने की बात हैं, इनके प्रयोग का क्षेत्र मान कर बड़ी गुप्त रहस्य को समझना है। स्तुति तो प्रशंसा है किता

स्तुत्य के प्रति हमारी श्रद्धा बढ़े अपने सन्तुलन को उस व्यक्तित्व के प्रति गहराई में पहुंचने के लिए स्तुति करनी ही चाहिए। जबतलक किसी के प्रति श्रद्धामयहोकर उसकी गोदी में अपने आप को झूला न दिया जाय, तब तक प्रार्थना और उपासना का लक्ष्य नहीं बनता। स्तुति करने वाले भी कितना झूम जाते हैं इसकी भी रूपरेखा मीरां बाई की कहानियों में मिलती है। स्तुति करने वाला मानव—फिर इससे भिन्न कोई अवस्था लेता नहीं, वह स्तुत्य की स्तुति में खोया जाता है। फिर न किसी मांग का सवाल बनता हैं और न ही किसी फल का लक्ष्य पैदा होता हैं। कहते है वृंदावन में एक कृष्ण मन्दिर था जिसमें स्त्रियों का जाना मना था ! पुजारी लोग इस बातका विशेष विचार रखते, कहीं कोई देवी वहां घुस न जाये। एक दिन मीरा मां भगवान के भजन गाती गाती उस मन्दिर के भीतर चली गई। चौकीदार रोकते रहे मगर उसके न रुकने पर वह पुजारियों के पास भागे, वही पुजारी जी देवियों के न आने का हुकुमनामा लिये बैठे थे, उस दिव्य आत्मा के सुरीले गीत सुन करके स्वयं झूम उठे और अपने आप को धन्य धन्य मानते मीरा माँ हुए चरणों में लौट पड़े।

ऐसी प्रार्थना में खोया हुआ व्यक्तित्व कितना सौभाग्यमान होता है—काश भगवान आंखें दे, किसी को अपनी आंखों से ऐसी अवस्था देख लेने की। इस शोभा यात्रा में महानता के प्रकाश लेने की स्थिति बनती है, एक झरना बनता है जहां दिव्यता ही दिव्यता का जलाल होता है, प्रसाद होता है, और शान्त स्वभाव हो जाने का सौभाग्य होता है। प्रार्थना तो स्टेज है, क्षेत्र बनाने की, सत्पात्र होने की, घुल मिल जाने की, स्तुति

द्वारा जगाई श्रद्धा में शराबोर होने की, तल्लीन होने की, शुभ समागम करने को, उप आसन में संस्कृत होने की, निर्दोष, साफ शफाफ हो लेने की, पविव्रावेदि बनने की, प्रभु के स्वागतमें कर्मठ होने की जानेजड़े जमानेकी, निष्ठामयी होने की, जब ऐसा सब जाने हो की, क्रिया क्लाप बन पाती है, तब मानव उपासना के योग्य बनता है, उसकी प्राप्ति का अधिकार लेता है।

'तेहरवीं भेंट'

स्तुति शब्द तो हमने पढ़ लिया है, उससे भगवद् प्राप्ति की पहली सीढ़ी भी करार दे दी है, परन्तु स्तुति न तो जिह्वा का विषय है, और न ही आंखें और कान का, यह तो केवल शुद्ध विषय है, हृदय का, जो गद्‌गद् हो उठने पर झूम उठता है, बोल पड़ता है, यदि हृदय न बोले और कोई शब्द किसी के वर्णन में कहे जायें, उसे स्तुति नहीं कह सकेंगे, हो, खुशामद कह कर जान छुड़ा लेगे। सहृदय किसी की जान, पहचान, वर्णन और तरंगित होकर अन्तरतम से बोल उठना ही स्तुति की ठीक व्याख्या है, जिसके लिए ज्ञान आवश्यक है, विज्ञान की पुट जरूरी है, चमक भी, आभा भी, लय भी, तब कहीं वास्तविक रूप में लोट पोट हो जाना स्तुति का लक्षण बनता है।

सो यह आत्मा परमात्मा की स्तुति में कब तरंगित होती है, उसके लिए हम पहले जगत के महान देवता, सूर्य महाराज का दर्शन, सूर्य की किरणों द्वारा, झलकती और फड़कती तेज पूर्ण रश्मियां, सूर्य के प्रकाश को ज्ञान की ज्वाला में देखने का प्रयास करते हैं।

यजुर्वेद में एक मन्त्र आया है जहाँ इतना तक कह डाला गया है कि वेद ब्रह्म सूर्य जैसी ज्योति है, अन्तरिक्ष पार्थव समुद्र जैसा जलाशय है, आदित्य और आत्मा पृथ्वी से बड़ा है, किरणों और आत्म शक्तियों का कोई परिमाण नहीं, यह एक अद्‌भुत वास्तविकता है। परमब्रह्म वेद द्वारा स्वयं ही प्रकाश मय व सर्वोक्त प्रकाशक है, यह स्वयं में देख लेने की बात है, कि सूर्य

बड़ी ज्योति है । यूं तो यह मन्त्र आदि भौतिक और अध्यात्मिक जगत् की व्याख्या में विस्तार लेता है, किन्तु हम अब उसकी केवल अधि भौतिक दिशा देखना चाहते हैं ।

अपने प्रकाश मंडल का केन्द्र यह सूर्य है, इसका व्यास पृथ्वी से १०९ गुणा बड़ा, वजन तीन लाख तीस हजार गुणा बड़ा, और गुणनफल १३ लाख गुणा बड़ा है । इसके एक वर्ग इंच में तीन लाख मोमबत्तियों के समान प्रकाश पैदा होता है, इसकी गर्मी ६ हजार डिग्री वाली है, जिसके मुकाबले में अपनी धरती की आग को बर्फ जैसी ठण्डी माना जा सकता है, इतने अधिक ताप के कारण, सूर्य का सारा पदार्थ पिघला हुआ है, इसमें भयानक तूफान भी उठते रहते हैं, जिनके कारण कभी २ इतने बड़े खड्डे हो जाते हैं, जिनमें अपनी कई पृथ्वीयां समा सकती हैं, य ही खड्डे सूर्य में काले धब्बे दिखाई पड़ते हैं, पूर्व काल में कई वैज्ञानिक सूर्य को ठंडा मानते थे, अब उसे आतप कहा गया है । आतप उसे कहते हैं जो स्वयं ठंडा हो, और दूसरों को प्रकाश दे । सूर्य की गर्मी ९ करोड़ मील के पोले अन्तरिक्ष को पार करती हुई चुपचाप चली आती है पर जब पृथ्वी से वो किरणें टकराती हैं, तो भूतल गर्म हो उठता है, धरती को छू कर जो ताप पैदा होता है, वो ऊपर की दिशा में शनैः शनैः कम होता जाता है, इस प्रकार प्रकाश की दो ओर दौड़ धूप चलती है । सूर्य परिवार का सबसे निकटस्थ ग्रह बुद्ध है, इसके पश्चात् शुक्र, इसके पश्चात् हमारी पृथ्वी, फिर मंगल, इसके पश्चात् छोटे-छोटे ग्रह भी हैं, जो बड़े से बड़ा ४८० मील, छोटे से छोटा ५५० गज का नापा गया है । चन्द्रमा पृथ्वी का उपग्रह है, जो सूर्य के मुकाबले में सूर्य का करोड़वां हिस्सा भी नहीं, क्योंकि चांद अपनी धुरी पर नहीं घूमता, इसलिए हमें इसका आधा हिस्सा दिखाई देता है । यदि हम सूर्य मंडल से बाहर

निकलकर आकाश में खड़े हों, तो पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण कोई दिशा नजर नहीं आयेगी। हमें सूर्य निकलता दिखाई देता है, पर वह साढ़े आठ मिनट पहले निकल चुका होता है। जब वह अस्त होता नजर आता है तब भी वह ७ मिनट पहले डूब चुका होता है। एक वर्ग मील धरती पर सूर्य का जितना प्रकाश गिरता है, उसका भार केवल एक औंस होता है। प्रायः धरती और अन्तरिक्ष आपस से दूर में मिलते नजर आते हैं, जो लगभग तीन मील की दूरी से दिखाई पड़ता है, यदि हम २०० फुट की ऊंचाई पर चढ़ कर देखें तो वे २० मील दूर पर मिलते हुए नजर आयेंगे। यह प्रमाण जमीन की गोलाकार होने का सत्य पेश करती है। पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती हैं, इसी लिए इसी क्षण जहां हम हैं, वहां वापिस २४ घन्टे के बाद आ सकेंगे। हम एक हजार फी घन्टे की रफ्तार से एक दिशा में उड़े जा रहे हैं, यही पृथ्वी की चाल है। यह पृथ्वी ६६६ हजार मील प्रति घन्टा की रफ्तार से सूर्य की परिक्रमा पर दौड़ रही है, वह इस समय जहाँ है, एक वर्ष पश्चात् उसी स्थान पर लौट सकेगी। सूर्य एक महा सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, वह महा सूर्य किसी और महा सूर्य की परिक्रमा पर लग रहा है, यह सूर्य न जाने कितनी अनगिनत कड़ियों से जुड़ा होगा। चन्द्रमा हम से ऊंचा है। यदि हम चन्द्रमा पर जा खड़े हों तो मालूम होगा कि पृथ्वी ऊपर आकाश में अस्त हो रही है।

सारे विश्व का यह वर्णन मानव कल्पना से बाहर है। सारी सृष्टि का केन्द्र सूर्य है। पृथ्वी की कशिश सकल का प्रभाव जिस चीज पर पड़ता है, उसे रोकने के लिए जो शक्ति खर्च होती है, उसका नाम वजन है। पृथ्वी पर जो वस्तु एक मन वजन रखती है वह साढ़े तीन मील आकाश में उठ जाने से आधी अर्थात् बीस सेर रह जाती है। पृथ्वी और चन्द्रमा के मध्य एक ऐसा स्थान

आता है, जहां पहुंचने पर वजन लुप्त हो जाता है, वहां यदि एक विशाल पहाड़ रख दिया जाय वह वहीं लटका रहेगा, न ऊपर, न नीचे, यह एक अद्‌भुत वास्तविकता है, विचित्र लीला है। इसी स्थान पर अब वैज्ञानिक एक छोटा-सा संसार खड़ा कर रहे हैं क्योंकि वहां न धरती का आकर्षण न चांद की कशम-कश, वहां जो चीज खड़ी कर दी जायेगी, वहाँ खड़ी पायी जायेगी। अब वहां बस सकने के सारे प्रबन्ध किये जा रहे हैं। यह एक नयी लीला होगी। जहाँ विज्ञान बढ़ता जा रहा है, हमारी आस्तिकता नया रंग लेती जा रही है। हम अपनी कुर्सी पर बैठे लिख रहे हैं, ख्याल यह है, कि हम स्थिर हैं, परन्तु हम एक विशाल धरती पर छोटे से दाने के अनुसार सफर कर रहे हैं, जो हमें अनुभव ही नहीं होता।

हमें एक सागर हमवार पानी का खड्डा नजर आता है, उस पर चलने वाले जहाजों का अस्तूल पहले दिखाई देता है, यह वास्तविकता भी पृथ्वी को गोलाकार मानने में सहायता देती है। महा विद्वान आचार्य भट्ट ने पांचवीं शताब्दीं में धरती को गोल गुम्बद बताया था। बारहवीं शताब्दी में भास्काचार्य ने इसमें काशिश सकल की शक्ति बता दी थी। यह सारे वर्णन डर पैदा करते हैं, कहीं कल्पना से दिमाग फट न जाये। थके मांदे हम उचाट न हो जाये, इस भूलभुलैयों में खो न जायें, परन्तु वास्तविकता वास्तविकता है, जिसे इन्कार नहीं किया जा सकता। अगर किसे शक्ति हो तो वो अपनी कल्पना की उड़ान से बहुत-बहुत दूर जा सकता है, न जाने वह कहां का कहाँ पहुंचा जा सकता है। अबतो विज्ञान की छानबीन ने क्षेत्र बहुत लम्बा कर दिया है। यद्यपि सूर्य हमारी पृथ्वी से ९ करोड़ मील दूर है परन्तु यूरेनियम हमारे सूर्य से बीस गुणा फासले की दूरी पर कायम है। अब विमान छोड़ें जा चुके हैं जो एक से एक नये संसार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमारे ज्ञान की श्रद्धांजलि भर

रहे हैं। फलोरिडा (अमेरिका) के कैम्प कंवरोल से व्योम्बर नामक विमान नं० १—१६ सितम्बर १९७७ वाले दिन अन्तरिक्ष की ओर छोड़ा गया। जब कि २० अगस्त १९७७ को दूसरा विमान ब्योम्बर नं० २ सूर्य मंडलको पहले छोड़ा जा चुका था। दोनों विमानों ने वृहस्पति तक पहुंचना है, जिसके बाद वे दूसरे संसारों की तरफ जा सकेंगे। व्योम्बर नं० २, व्योम्बर नं० १ विमान से ६० लाख मील आगे उड़ रहा है, परन्तु व्योम्बर नं० १ सीधे रास्ते से जाने के कारण वृहस्पति पर चार मास पूर्व विमान नं० २ से पहुंच सकेंगा, अर्थात् ५ मार्च १९७९ को। इस अरसे में इन जहाजों ने वृहस्पति, शनि, और शयन का अध्ययन करना है, यह विमान तीन साल तक उड़ान ले सकने के योग्य बना दिये गये हैं, जब कि ये यूरेनियम, पंजून और इसके पश्चात् भी आगे आगे जा सकेंगे। ब्योम्बर नं० १ वृहस्पति तक २९ मास तक पहुंच जायेगा।

तीन साल बाद शनि तक पहुंचने का प्रोग्राम लिये हुए तब यह ३२ हजार प्रति घन्टा की रफ्तार से उड़ान ले रहा होगा। ३१ जनवरी १९८६ को इसे यूरेनियम को छूना है, इस हिसाब-किताब के आधार पर मैंने कहा था, कहीं दिमाग फट न जाये अपनी संभाल लेनी आवश्यक है। कमाल की बात यह है कि इन विमानों में ५२ भाषाओं के रिकार्ड भर कर रख दिए गये हैं, जिनके द्वारा—स्वागतम्–हमारे चित्र, हमारा भूगोल का विवरण है, ताकि अगर कहीं कोई प्राणी हमारे विषय में जानना चाहे, तो वह जान लेवे (वह भी यदि रिकार्ड बजाना जानता है) इस प्रकार पारस्परिक परिचय लेने-देने के भी साधन जुटाये गये हैं। श्री कार्मल सहोगा शब्द विज्ञान के बड़े दक्ष हैं, जिन्होंने बड़ी विद्वता से अन्य नक्षत्रों के साथ मेल-जोल तथा सूचना के आयाम बनाये हैं। यह तो अब माना जा चुका

है, कि जिन गैसों से हमारा संसार बना है, वही गैसें दूसरे स्थान पर भी विद्यमान हैं। हमारा सूर्य भी तो गैसों का महा-मंडल है, परन्तु यह सूर्य इस ग्लैक्सी के एक कोने में स्थिर है, जो अत्यन्त खाली स्थान है, और दूसरे स्थानों के केन्द्र से बहुत दूर है, यह रूपरेखा एक नये सोच-विचार का विषय बनती है, कि हमें क्यों इतना दूर फैंक दिया गया है, हमारी धरती भी ५० करोड़ वर्ष तक स्थिर रहेगी, अर्थात् जब तक इसे हमारे सूर्य से ताप और ऊर्जा मिलती रहेगी, यह भी स्थिर रह पायेगी। वैज्ञानिक लोग इस विषय में सहमत है, कि हमारे सितारों से भिन्न अन्य सितारे भी हैं, इस तथ्य को मापने के लिए डाक्टर ड्रेक ने कई दूरबीनें बनायी हैं, और अपनी देख-रेख को विस्तृत रूप में परखने की कोशिश की है, यह तो हम कई बार स्वयं देखते हैं, रेडियो चलाते समय जब हम अपने विचार के स्टेशन को नहीं पकड़ सकते, स्विच को 'इधर' 'उधर' घूमते-घुमाते 'पिप' 'पिप' की आवाजों से रेडियो की सूई को दायें-बायें ले जाते हैं, इसका यह भी अर्थ है, कि 'पिप-पिप' के स्टेशन हमारे रेडियो स्टेशन की पहुंच से बाहर है, अर्थात अन्य स्थान के स्टेशन करार दिये जाते हैं, इस समय तक ७० स्टेशन मालूम किये जा चुके हैं। सूर्य मंडल कितना विस्तृत क्षेत्र बनाता है इसकी किरणें अनेक प्रकार की, अनेक ऊर्जा की, अनेक रंग की, अपने यहां एक विचित्र ज्ञान प्रदान करती हैं, यह सारी रूपरेखा बड़ी विस्मय पूर्ण और रोचक बन रही है, जहाँ हैरान होने से अन्य कोई चारा नजर नहीं आता, छोटे से शब्द अनन्त की तोड़-फोड़ हमारी चेष्टा का एक लक्ष्य होना चाहिए। आखिर सोचा यह जाय कि जहाज इतनी तेज रफ्तार के साथ चले जा रहे हैं, आखिर कहीं तो इनका ठिकाना होना चाहिए, परन्तु परिमाण, कल्पना, शक्ति जवाब दे जाती है।

एक बुद्धिमान विस्मय के संसार से गुम हो जाता है। शायद इस गुमसुम की अवस्था से बचने के लिए नास्तिकों का रवैया– "न होंगे और न रहेगा दर्द" यह कह करके जान छुड़ा लेते रहे कि सृष्टि किसी की बनायी और चलायी हुई नहीं है।

खगोल विज्ञानी श्री हरि निवास रस एक विश्वविद्यालय में आकाश गंगा के विषय में अपना भाषण दे रहे थे। उसकी समाप्ति पर एक व्यक्ति ने यह कह डाला कि यदि ब्रह्माण्ड इतना विशाल है, और हमारी धरती उसके मुकाबले में इतनी छोटी है, तो यह कहना कि भगवान को हमारी तरफ ध्यान देने का कम मौका मिलता है—सही लगता है। इस पर श्री हरि इसने उत्तर दिया कि यह इस बात पर प्रभाव रखता है, कि हम कितने बड़ें ईश्वर में विश्वास रखते हैं, जितना श्रद्धामय सहृदय-विस्तार हम अपना दृष्टिकोण बनायेंगें इतनी हमें उस महान से महान संस्था की रूपरेखा का ज्ञान मिलेगा। यद्यपि अब तो पुराने गाने भुलाये जा रहे हैं पर थे वह बहुत अच्छे। एक गीत- "क्या कोई गावे सुनावें प्रभु, महिमा तेरी लखि किसी से न जाये।" आज तक हमारे कानों में गूंजाता है।

विज्ञान ने २० सालों से एकाएक करवट बदली है। अनुसंधान भरी आंखें चाहिए। क्षेत्र बहुत विशाल है असीम हैं केवल हमारे ग्रहण शक्ति और साहस की कमी है।

सूर्य की तरह हर तारे का अपना भी एक परिवार होता हैं। तारों का एक नया संसार हैं। फिर वही बात पुरानी कि संभाल की कमी है। शेक्सपीयर परने इसी तथ्य की ओर संकेत करते लिखा है दोष अपने तारों में नहीं स्वयं मनुष्य में हैं" यह भी गलत है कि सूर्य स्थिर है. वह भी एक सैंकिड में १३ मील की गति से घूमता है, मंदाकिनियां भी अपने सारे परिवारों को लेकर किसी विराट परिवारों में संलग्न हैं। अपनी 'स्पाश्रल'

आकाश गंगा की स्वयं की गति २०० मील प्रति सैंकिड है, इसी तरह १५० मील प्रति सैंकिड की गति से विकास हो रहा है। पृथ्वी २४ घन्टे में एक परिक्रमा पूरी करती है, जबकि चन्द्रमा ३३६ घन्टे में, अर्थात् वहां के दिन व रात में, हमारी पृथ्वी के दिन और रात से १४ गुणा बड़े दिन और १४ गुणा रात बड़ी हैं। यह अवस्था अक्ल में समाने की नहीं बनती। सृष्टि विकसित हो रही है, ब्रह्मांड फैल रहा है, यही स्वयं में बड़ी विशेष अद्‌भुत पूर्ण रहस्य है।

सूर्य ऊर्जा का अथाह भंडार है। सूर्य तो सूर्य, ऊर्जा तो ऊर्जा, हमारी विशालता और सक्रियता बनते बनती है। यदि हम अपने आप को संभाल लेवें, एक छोटा-सा रूप पेश करते हुए कहा जा सकता है कि सूर्य पृथ्वी से १४९००००००० किलोमीटर दूर है। इतनी दूरी और पृथ्वी के क्षेत्रफल के अनुपात से वह अपनी ऊर्जा का मात्र ०.०००००००००५ वां अंश ही पृथ्वी को देता है किन्तु यह शक्ति भी इतनी विशाल है जिसकी शक्ति दो अरब अणु विद्युत घरों से प्राप्त बिजली ही कर सकती है। उसे यदि विद्युत शक्ति में बदला जा सके तो १ खरब ७३ अरब मेगावाट विद्युत भार के बराबर होती है। अनुमान है कि प्रति वर्गमीटर एक किलोवाट विद्युत भार के बरावर ताप पृथ्वी को मिलती है। समूची धरती का हिसाब लगावें तो उसे सूर्य से प्रति वर्ष १३११ करोड़ खरबकैलौरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

इस विशाल परिमाण का अनुमान करना भी कठिन है। हमें यह अनुदान अजस्त्र रूप से मिला है, फिर कितना दुर्भाग्य है कि हम शक्ति शक्ति चिल्लाते रहते हैं। जल में मीन पिपासी वालीं कहावत है। आकाश की ओर नंगी आंखों से देखें तो अधिकतम ४५०० तारागण हमारी दृष्टि में आते

हैं। साधारण दूरबीन से देखने पर-२००००० ग्रह नक्षत्र देखे जा सकते हैं। उससे भी विकसित किस्म के दूरबीनों से मन्दाकिनियां है, जिनके अपने परिवार में लाखों करोड़ों ग्रह नक्षत्र होते हैं-देखी जा सकती हैं। अब आणविक दूरबीनों ने इस क्षमता को और भी कई गुना बढ़ा दिया है, जिससे २० अरब प्रकाश वर्ष तक के प्रकाश स्रोतों को देख सकना और उनका रासायनिक विश्लेषण यहीं पृथ्वी पर बैठे बैठे कर सकना सम्भव हो गया है। सृष्टि चाहे कितनी ही विराट हो पर उन तत्वों से की इनकार नहीं किया जा सकता जो "यत्ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे" अर्थात् ब्रह्मांड में जो कुछ भी है उसे एक नन्हें से पिण्ड में अणु में भी झांककर देखा जा सकता है, भले ही उस तत्व तक पहुंचने में अभी समय लगे।

इन दूरबीनों के माध्यम से देखे गये सुदूर नक्षत्रों पर अपने विचार व्यक्त करते हुए सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० डा० बिल्ली ने स्पष्ट किया है, कि ब्रह्मण्ड में १४०००००० ग्रह ऐसे है, जहां किसी न किसी रूप में जीवन अवश्यम्भावी है, १८ हजार ऐसे हैं जिनमें मनुष्य की तरह विचारशील प्राणी तथा न्यूनतम १८० तो ऐसे है जो पंचभौतिक तत्वों की अत्यन्त सूक्ष्मतम जानकारियों से ओतप्रोत हैं।

हमारे उपनिषद और पुराण तो इन तत्थों का विधिवत समर्थन करते ही हैं।

महर्षिचरक का कथन है 'आरोग्यं भौस्करा दिच्छेत्' आरोग्य की कामना सूर्य भगवान की सहायता से पूरी करें, इस उक्ति का तथ्य आज का विज्ञान खुले मुँह करने पर तुला हुआ है। ताप और प्रकाश तो सूर्य के स्थूल अनुदान हैं। वस्तुतः उसकी ऊर्जा तेज स्वरूप है, जिसे विज्ञान की भाषा में सोलो एनरजी

कहते हैं, यही प्राणियों की वाइटल एनर्जी हैं। भारतीय दर्शन ने सूर्य को सहस्त्र किरणों वाला माना है और प्रधान एवं सुपरिचित किरणों को सातरश्मि कहा हैं। ऋग्वेद-कोशितकी ब्राह्मण शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में सातराश्मियों को माना है (१) सुषुम्णः (२) हरिकेश (३) विश्वकर्मा (४) सवहसु (५) अर्वावसु (६) विश्र्‌ुश्रवः (७) स्वराट। आत्मिक जगत में ब्रह्म तेजस का पथ भी इनकी उपासना से होता है। इंग्लैड की शरीर विज्ञानी श्रीमति हेरिपट चिक ने बताया है कि सूर्य धूप का सेवन मनुष्यों के लिए अन्न तथा दूध की तरह उपयोगी है। अनाज के पकने में, फलों के उत्पादन में, सूर्य किरणों का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान रहता है। शिशुरोग विशेषज्ञ डा० सी० डब्ल्यू सेलिलि ने अपने अस्पताल में आने वाले रुग्ण बालकों के अभिभावकों को यह सलाह देते थे कि वो बच्चों को आधा घन्टा सूर्य ताप का सेवन तो अवश्य ही कराया करें। सूर्य किरणों द्वारा जल में ऊर्जा प्राप्ति से एक प्रकार की औषधि अर्थात् रोगनाशक उपचार माना गया है।

यह तथ्य प्रतिपादन चिरकाल से स्वीकार किया जाता रहा है, कि जहां सूर्य की किरणें पहुंचती है, वहां चिकित्सक के जाने की जरूरत नहीं पड़ती, यह किरणें किटाणुनाशक, बलवर्द्धक, पुष्टिदायक, रोग-निवारक, सिद्ध हो चुकी है। भारतीय तत्ववेत्ता इस रहस्यमयी क्षमता को प्राणतत्व कह कर पुकारते रहे हैं। ऊर्जा विज्ञान के अध्येता, विक्टर इनोयूशिन ने कहा है कि यदि रंगीन किरणों का हम उपयोग करना जानें तो उससे बहुत से महत्वपूर्ण अतिरिक्त लाभ उठाये जा सकते हैं। सविता देव इसी का नाम है जो भौतिक जगत में सूर्य सेवा उपासना का रूप लेता है। उसका शारीरिक और मानसिक प्रफाव बहुत प्रभावशाली माना जा चुका है।

जिस पृथ्वी पर हम रहते हैं वह शत्पथ ब्राह्मण के अनुसार सूर्य की पतिव्रता पत्नी है। सूर्य और पृथ्वी का सम्बन्ध बहुत घनिष्ट हैं। सूर्य ठन्डा हो रहा है, उसके फलस्वरूप पृथ्वी भी ठन्डी हो रही है। साथ ही उसकी सक्रियता भी घट रही हैं। अब से एक करोड़ वर्ष पहले दिन रात २२ घन्टे के होते थे और वर्ष ४०० दिन का होता था, अब वर्ष में प्राय: ४० दिन कभी और दिनमान में दो घन्टे की बड़ी हो गयी हैं। पृथ्वी अपनी-धुरी पर भी अपेक्षाकृत मन्द गति से घूमने लगी है। और सूर्य की यात्रा में भी धीमापन आ गया है। खगोल वेताओं की गणना है कि कोई पाँच वर्ष अरब बाद पृथ्वी की स्थिति बड़ी विचित्र हो जायेगी। एक दिन ७२० घन्टे का अर्थात् आज के दिन की तुलना में ३० गुणा बड़ा होने लगेगा। रात्री १५ दिनों के बराबर होगी और दिन भी इतना बड़ा होगा। तब रात्रि में कई कई बार मनुष्य को जाग जाग काम करने की और दिन में पूरी तरह सोने की आवश्यकता पड़ेगी। पृथ्वी की उदासी देख कर चन्द्रमा का जी उससे खट्टा होता जा रहा है। इन दिनों चन्द्रमा हर ३० वर्ष में पृथ्वी से एक फुट दूर हटता जाता है। जब पृथ्वी के दिन ७२० घन्टे के होंगे, तो चन्द्रमा जो अब जितनी दूर २$\frac{1}{2}$ लाख मील है उससे ड्योढ़ी दूरी पर चला जायेगा। किन्तु यह उपस्थिति देर तक बनी न रहेगी। कई अन्तरग्रहीय दबावों के कारण चन्द्रमा फिर वापिस लौटेगा और धरती से १००० मील दूर रह जायेगा, आकार से अब से १० गुणा बड़ा दिखाई पड़ेगा। वह समय चन्द्रमा के जीवन मरण का होगा, यदि वह कुछ कदम आगे बढ़ा तो पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के दबाव से इंधन के ढ़ेर के समान जलता दिखाई पड़ सकता है। तब उसकी राख का कचरा पृथ्वी के ईद गिर्द वैसे ही घूमने लगेगा जैसा कि शनि

ग्रह के ईद गिर्द ग्रह उपग्रह का चूरा एक सघन छल्ले के रूप में घूमता रहता है।

पृथ्वी के आकार से सूर्य का आकार १३ लाख गुना बड़ा है। जिस ध्रुव तारे की अपने सूर्य अपने ग्रह परिवार सहित पमिक्रमा करता है वह उसकी तुलना में ३ लाख गुना बड़ा है। यह घूमने घामने की शक्ति भी तो कहीं से आनी चाहिए। थे आंकड़े। यह विधि विधान मन को भटका जरुर देते हैं, परन्तु मेरे अपने बस की बात नहीं। आज का खगोल विज्ञान लिख कर दिये जा रहा है, जो मैं प्रस्तृत कर रहा हूँ। सूर्य में भरा पदार्थ बहुत विस्तृत है, वह अपने विस्तार से ही आकर्षण शक्ति बनाये हुए है।

सूर्य जीवन का स्त्रोत और प्राणी चेतना का आधार माना गया है। वह पृथ्वी से १ करोड़ मील दूर है उसकी स्तह का ताप मान १२ हजार डिग्री फारनहाइट का है। पहले तो यही बात स्पष्ट है यदि इस दूरी को थोड़ा भी कम कर दिया जाता, तो पृथ्वी में इतनी भयंकर ऊर्जा होती कि न तो यह वृक्ष वनस्पति होती, न प्राणी जगत-जीवन के लिए जितने ताप की आवश्यकता है उतना, इतनी ही दूरी में सन्तुलित रहा सकता हैं। बात इतने से भी बनती नहीं थी, यदि पृथ्वी को स्थिर रखा गया होता, तब भी यहां इतनी अधिक ताप आ जाता, लोग भाड़ में भुन जाने वाले पन्नों की तरह, जल कर फुटका हो जाते, इस दृष्टि से पृथ्वी को जान बूझ कर उसकी अपनी ही कक्षा में प्रति घन्टे एक हजार मील की गति से धुमा दिया गया जिससे मरुत देव गतिमान हुए और उनसे ताप और शीत का नियन्त्रण प्रारम्भ कर दिया गया। सूर्य की दूरी पृथ्वी का घुमाव ऋतु परिवर्तन करते है। जो बात सूर्य की दूरी से ऋतु नियन्त्रण पर लागू होती है। वही चन्द्रमा की दूरी पर समुद्र के

नियन्त्रण पर भी प्रभाव रखती है। इस दूरी में थोड़ा भी अन्तर पड़ने से चन्द्रमा ही पृथ्वी को नष्ट भ्रष्ट कर डालता।

पृथ्वी अपनी ही कक्ष में (२३ अंश) झुकी हुई है, यदि ऐसा न होता तो महासागरों का सारा जल वाष्प विभक्त होकर, कुछ उत्तरी ध्रुव में भाग जाता, कुछ दक्षिणी ध्रुव में समा जाता। तय न यह सुहावने बादल होते, न रिमझिम वर्षा होती, न झरनों की झर झर होती, न नदियों की कलकल होती, पौधौ का बढ़ना, फूलना, फलना, सारी शोभा विनाश कि गर्भ में डूब जाती। सूर्य के प्रकाश में यद्यपि केवल सात रंग हैं, परन्तु उनके मिश्रण से लगभग १० लाख रंग बन सकते हैं इनमें से हमारे नेत्र केवल ३७८ रंगों का अन्तर पा सकते हैं।

यह भी सिद्ध हो गया है कि कोशिका मानव शरीर के निर्माण कारक उसी तरह का ब्रह्माण्ड है जैसा हमारा वाह्य दृश्य ब्रह्माण्ड है। दृश्य प्रकृति का निर्माण सूर्य करता है। सूर्य ने दृश्य प्रकृति का निर्माण नहीं किया, यह चेतना ही जीवन है जो कि हरकत देती हैं। जीवन देती है और वनस्पति जगत् प्राणी जगत् में कलाकार स्वरूप विचित्र सृष्टि की रूप रेखा लेती है।

वैज्ञानिकों ने अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला है कि सूर्य पर हर ग्याहरवें वर्ष कुछ धब्बे से बन जाते है, उनका कारण सूर्य मंडल के ग्रहों की गतिविधियां ही हैं। सभी ग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर सूर्य की परिक्रमा करते हैं,और पृथ्वी की भांति अपनी धुरी पर भी घूमते है। सभी जानते है कि कभी भू मंडल के सभी महाद्वीप एक दूसरे से जुड़े से हुए थे, ग्रहों की हलचलों और आकुंचन, प्रसार की प्रक्रियाओं से ने एक दूसरे से दूर हटते गये, हिमालय अब भी लगातार उत्तर की ओर खिसक रहा है। भू वैज्ञानिकों के कथन अनुसार ५ करोड़ वर्ष के बाद सम्पूर्ण

उत्तरी भारत का इलाका हिमालय के पेट में जायेगा। जो तमाशा देखने दुनिया में थे आये हुए।

कुछ न देखा आखिर वे चले पछताये हुए।

यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो हर एक का कोई न कोई एवरेस्ट होता है, अपनी अपनी पहुंचे और समझ के अनुसार, प्रत्येक हाथ उठाता जाता है, पर किसी का हाथ सही बिन्दु पर जा लगता है, शेष लोग हसरत से अपनी निगाहें बिछाये रखते हैं। हमने पीछे अन्तरिक्ष की परिक्रमा करने का प्रयास किया, किन्तु वो भी तो आखिर है एक कल्पना, वो भी यदि कोई दृष्टि में लाने का अभ्यास करे। इसलिए अनन्त का अन्त लेने का प्रयत्न तो करना ही है। शनि, यूरेनियम, पंचून इत्यादि की यात्रा महायात्रा के नाम से कही जाती है, यह ग्रह इन्हीं चन्द सालों में एक कतार में हुआ चाहते हैं, जिसके कारण प्रारम्भ की हुई महायात्रा सुभीता से तय हो पायेगी, वरना ऐसी कतार लगने में फिर ८७ साल लग जायेंगे। यह तथ्य पढ पढकर अचम्भा बड़ा होता है। एक वैज्ञानिक ने अन्तरिक्ष को एक विशाल सागर कह कर एक नई पेचोदिगी पैदा कर दी की है, अन्तरिक्ष बड़ा है या सागर, यह एक और मसला है, अन्तरिक्ष गैसों से भर पूर मान लिया गया है, परन्तु सागर भौतिक सम्पति से लबालब माना जा रहा है। सागर के भीतर की जांच पड़ ताल हम कहीं आगे कर पायेंगे। परन्तु अन्तरिक्ष की बढ़ती हुई विलक्षणता अभी तक समझ में नहीं बैठ रही।

न्यू मौक्सिको के वैज्ञानिकों ने एक ऐसा यंत्र तैयार किया है, जो सौर ऊर्जा को इकट्ठा करता है। उसने पहले ही अनुभव में ४.५ मीटर लब्बी १.८ मीटर चौड़ी फौलाद की चद्दर को सूर्य की ऊर्जा द्वारा गला कर रख दिया हैं, यह चादर दे १/४ इंच

मोटी थी। इस सफलता ने सौर ऊर्जा का एक नया रूप पेश कर दिया है। यद्यपि यह भंडार हमारे आस पास बिखरा पड़ा हैं, जिसे एकत्र करना ताकत का अभ्यास बनता हैं। भू ताप के माहिर सी० गैलमैन ने कुछ दिन पूर्व पैरिस में एक ऊर्जा सम्मेलन में बताया था कि अकेले पेरिस के क्षेत्र में १०० से २०० मीटर गहरे कुंए खोदे जायें तो वहाँ से प्राप्त गर्म पानी इतनी अधिक ताप दे सकेगा जितना कि एक करोड़ अस्सी लाख ईंधन जलाने से मिल सकता है। पेरिस में मैलन नामक स्थान पर १०० क्यूबक मीटर प्रति घन्टा की गति से १० सेंटीग्रेट का गर्म पानी निकालकर लगभग १००० घरों को सप्लाई किया जा सकता है। हिमालय पर्वत में अत्यन्त ठंडे क्षेत्रों में स्थान स्थान पर ऐसे कुंड मिलते हैं जिनमें १५० सेंटीग्रेड तक का गर्म पानी प्राप्त होता है। रूस के उत्तरी ध्रुव में भी पृथ्वी के अन्दर से गर्म पानी प्राप्त करके दो करोड़ टन ईंधन की बचत की जाती है।

यह सारी प्राप्ति सूर्य से होती है। जिससे अनेक कारखाने चलते हैं, ताप मिलता है, और कई वर्षों से यह धरती की पूंजी बन रहे हैं। विचित्र माया है सृष्टि को इस काया की। सूर्य हमारे जीवन का बड़ा सहारा है। ऊर्जा, ईंधन, कोयला, यह तो स्थूल साधन हैं, इससे आगे भूताप, बिजली, और यदि इन कारणों से सृष्टि की मांग न मिटी, तो सूर्य देवता का निजि सीधा अनखुट भण्डार, शक्ति का स्त्रोत, एक से एक बढ़कर, अक्ल को चकरा देने वाले साधन पृथ्वी के अन्तराल में भरे पड़े हैं यद्यपि सूर्य पृथ्वी से १४६०००००००० किलो मीटर दूर है, इतनी दूरी और पृथ्वी के क्षेत्र अनुमाप से अपनी कुल ऊर्जा का ०,००००००००५ वां हिस्सा पृथ्वी को मिलता है। यह शक्ति

भी इतनी विशाल है जिसकी बराबरी २ अरब विद्युत घरों से प्राप्त बिजली ही कर सकती है।

यदि इसे बिजली में बदला जाये तो एक खरब ७३ अरब मैकावाट भार के बराबर बनती है। सारी धरती का यदि हिसाब लगायें, तो इसे सूर्य से प्रति वर्ष १३११ करोड खरब ऊर्जा सूर्य से प्राप्त होती है। मुझे शिकायत लेने का कोई स्थान नहीं यह आंकड़े स्वयं निर्भयता से अपना परिमाण बढ़ाये जा रहे हैं इस सारी ऊर्जा से बनस्पति जगत् संस्कृत होता है। अकेले भारत में २३ करोड पशु खेती के काम आते हैं, जिनकी मुख्य खुराक यही वनस्पति है। पृथ्वी के ३ अरब लोग और करोड़ों गुना जीवजन्तु सूर्य के वरदान में पलते हैं। तभी हम कहते थे, सूर्य हमारी आत्मा है, और दिव्य प्रकाश का अणु हमारे प्राण हैं। जिनके न होने पर फूल भी नहीं खिल सकता, रोगों के किटाणु बढ़ने लगते हैं, हमारा उल्लास प्रसन्नता, तथा ताजादिली लुप्त हो जाती है। फ्रांस ने रास नदी पर समुद्री ३ उभार से २४० मैगावाट बिजली बनाने का कारखाना खड़ा किया है।

अपने देश की धरती में लगभग १४ लाख अरब टन कोयला मौजूद है, जो अगले २४० सालों से ज्यादा ६२.५ करोड़ टन प्रति वर्ष ऊर्जा दे सकता है, यह भी सूर्य देवता की देनमात्र है। सूर्य महाराज अपने ताप से, प्रति सैकन्ड १ करोड़ ६० लाख पानी पकाकर भाप में बदलता रहता है। यह बादल जो वर्षा के दिनों में उमड़ आते हैं, अपने आप हवाई समुद्र बन जाते हैं, जो भाप का एक रूपान्तर है। सूर्य से मिलने वाली कुल ऊर्जा शक्ति का दो तिहाई भाग इसी काम में लगता है, इन तथ्यों को आदि भौतिक दृष्टि से पहचानना मानव का पहला कर्तव्य

है। शक्ति एक ही है, परन्तु प्रयोग अपनी अपनी सामर्थ्य अपने अपने वातावरण अपने अपने क्षेत्र में एक विशेषता का नाम लेते हैं। रूस की एक घाटी में बिजली घर बनाया गया है। जिसमें १३०० शीशे ऊर्जा इकट्ठी करती हैं। यह बिजली घर ५ एकड़ क्षेत्र में है। १०३ फुट ऊँचाई पर रखे बुआलर पर सूर्य की किरणें जल कर २५ लाख किलोवाट विद्युत प्रति घन्टा उत्पन्न कर जाती है।

हमारे पूर्वज लोग स्नान करने से पहले सूर्य में नंगा शरीर करना उचित मानते थे। उसका भी रहस्य सूर्य से अपने शरीर को तप्त कर लेने का, स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त ठीक था। बीज, फल, शाखा के ऊपरी छिलके, महत्वपूर्ण धातु, विटोमिन और प्रोटीन से भरपूर होते हैं, जो इन्हें सीधी सूर्य से प्राप्त होती है, फलों की ऊपरी तह, सीधी सूर्य से तपती हैं, जबकि गूदा परतों में छिपी रहती है, इसी कारण से छिलके अधिक ताकतवर माने गये हैं, छिलकों में थोड़ा कड़वापन और कसैलापन देखकर फेंक देना यूं है जैसा आटे से भूसी निकाल कर फेंक देना, शाक सब्जी के दानों के छिलके उतार देना वस्तुतः इसमें शक्ति ही शक्ति भरी होती है, जो हमारे मुख्य पात्र महाराज के वरदान है! हमने स्तुति की ठीक रूप रेखा नहीं बनायी। माया कह देना हमने सूर्य की पूजा मान ली, दफ्तरों, मकानों के दरवाजे और खिड़कियां बंद करके हमने भीतर ही भीतर, विद्युत प्रकाश में बैठना, काम काज करना सही मान लिया, जबकि तथ्य यह है हमने वास्तविक शक्ति स्त्रोत से पर्दा कर लिया है। और अपने आपको राजी कर लिया, अवास्तविक रूप रेखा से। यह देवता पृथ्वी पर हर समय अपने उपकारों की वर्षा कर रहा है। अन्तरिक्ष में वायुमंडल का अनेक गैसें विद्यमान हैं। सूर्य और वायु का बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। इनके आपस

में लेन देन पृथ्वी की लेन देन के अनुसार अपने तौर पर महत्ता रखती है जो समझ लेने की बात बनती है।

हवा अपनी पृथ्वी की बहुमूल्य सम्पदा है तो भी वह तत्व नहीं है। वह जमीन से लेकर ५०० मील की उँचाई तक फैली हुई है। सूर्य की गर्मी का सीमित मात्रा में आने देने में उसी की भूमिका है। अन्तरिक्ष में भ्रमण करने वाली उल्काओं को वहीं जला कर खाक करती है अन्यथा चन्द्रमा की तरह धरती पर आये दिन उन पत्थरों की बौछार होती रहती और निरन्तर बड़े बड़े खड्डे बनते रहते।

भूतल पर नाइट्रोजन की मात्रा आक्सीजन की तुलना में चार गुनी है। ऊंचे चलने पर क्रमशः नाइट्रोजन बढ़ती और आक्सीजन घटती जाती है। ७० मील की ऊंचाई तक पहुंचते पहुंचते यह दोनों ही समाप्त हो जाती हैं और मात्र हाइड्रोजन बन जाता है। जमीन पर फैले बादल कोहरा कहलाते हैं। बिजली कड़काने वाले बादल सिर्फ १ मील तक पाये जाते हैं। इसके बाद भी बादल होते हैं पर बहुत पतले। चार मील ऊपर जाने पर आँधी तूफान कुछ नहीं दीखते। इतनी सब विशेषताओं के होते हुए भी हवा एक सम्मिश्रण मात्र है उसे तत्व नहीं कह सकते। आक्सीजन और हाइड्रोजन दोनों ही जल उठने वाले तत्व हैं, पर इनके सम्मिश्रण से पानी बनता हैं जो आग को बुझाने के काम आता है। क्लोरीन एक विशैली गैस है, पर सोडियम के साथ मिल कर नमक बन जाती है, जिसे हम रोज खाते हैं समुद्र के बादल उटते हैं वे नमक साथ लेकर नहीं जाते। इसलिए सागर का खारा पानी कम होने का कोई रास्ता नहीं उल्टे नदियों द्वारा जो ६२२४ घन मील पानी हर साल समुद्र पहुंचता है यह नया नमक उसमें बढ़ा देता है इस तरह उसका खारीपन बढ़ता जा रहा है परन्तु यह सूर्य का ही

सौभाग्य है कि नमक, जल, खारेपन का अनुपात बनाता है। आरम्भ में सागर खारी नहीं था नदी नदियों द्वारा तथा नमक धरती की ओर से उसे खारापन थोपा गया जो अब उसका स्वभाव रह गया है।

सूर्य अनन्त अंतरिक्ष का नन्हा तारा है जो १० करोड़ ३० लाख मील की दूरी से प्रकाश किरणें भेजता है जो पृथ्वी तक ८ मिनट में पहुंचती है। दिन भर में यहां के वातावरण में इतनी सुविधाएं एकत्र हो जाती हैं कि रात आसानी से कट जाती है। दिन-रात के इस काम में एक दिन भी अंतर पड़ जाये तो जीवन संकट में पड़ जावे। गृह नक्षत्र की बातें छोड़, प्रमाणु के जिस तालाव में हमजलचरों की तरह जीते हैं उसके एक परमाणु में ही २७ लाख कैलोरी गर्मी भरी हुई है। उसे प्रकृति ने शोषित व प्राप्त न रखा होता तो जीवन का अस्तित्व एक दिनभी न ठहर पाता। परमाणु के इलेक्ट्रानप्रति सैंकड १३५००० किलोमीटरकी प्रचण्ड गति से चलते हैं, यदि यह चार्ज क्रियाशील रहा होता तो पृथ्वी के समस्त प्राणी १६ सैकेंड में ही सूर्य पर जा पटके गए होते, ऐसी विद्युत चुम्बुकीय आंधी चलती जो ब्रह्माण्ड को थरथरा कर रख देती, परन्त रहा संरक्षक ने परमाणु जगत को संतुलित रखकर हमारे ऊपर बड़ा एहसास किया है।

२ फरवरी १९४९ के नेशनल हेरल्ड में एक लेख छपा था "वैज्ञानिक भगवान में विश्वास क्यों करते हैं?" इस लेख में विद्वान लेखक ने बताया है कि सँसार का हर परमाणु एक निर्धारित नियम पर काम करता है, यदि इसमें रत्ती भर भी अव्यवस्था, अनुशासन-हीनता आ जाये, तो विराट् ब्रह्माण्ड एक क्षण भी नहीं टिक सकता। एक कण के विस्फोट से अनन्त प्रकृति में आग लग जाती, और सँसार अग्नि ज्वालाओं के अतिरिक्त कुछ न होता।

सूर्य अपने केन्द्र में १ करोड़ ७० लाख सैंटीग्रेड गर्म है। यदि पृथ्वी के ऊपर अयन मंडल (आइनोस्फीयर) की पहियां न चढ़ाई गई होतीं, तो पृथ्वी न जाने कब जलकर राख हो गयी होती। सूर्य अपने स्थान से यदि थोड़ा सा खिसक जाये, तो ध्रुव प्रदेशों की बर्फ पिघल कर सारी पृथ्वी को डुबो दे, यही नहीं उस गर्मी से कढ़ाह में पकने वाली पूड़ियों की तरह सारा जगत पक कर नष्ट हो जाये।

पीछे वायु देवता की थोड़ी-सी बात की थी जिसे अब अधिक प्रकाश में लाने का प्रयास किया चाहता हूं। सूर्य और वायु का बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है। वायु की गति प्रकाश देव से है। इस देवता के करतब अमेरीकन वैज्ञानिक और कैलिफोर्निया विश्व-विद्यालय के भौतिकी के आचार्य डा० लयोना मार्शल लिम्बी ने उद्घाटन करते हुए कहा है कि तेज भूचाल से जहां जान माल का नुकसान होता है, वहां वायुमंडल को भी गहरी चोट लगती है। वायुमंडल का कुछ हिस्सा कट कर दूर अन्तरिक्ष में चला जाता है, उनके अनुसार प्रतिवर्ष संसार में जो भूकम्प आते हैं, उनके कारण हमारी धरती लगभग १० लाख मोटर टन वायुमंडल से वंचित हो जाती है। तथा वे कहते हैं कि भूकम्प के समय पृथ्वी की सतह पिस्तौल की तरह होती है। हिसाब लगाया गया है कि प्रतिदिन पृथ्वी के वायुमंडल का लगभग १२० टन हिस्सा उल्काओं की भिड़न्तों के कारण अन्तरिक्ष में खो जाता है। लगभग इतनी ही कमी ज्वालामुखी से भी होती है तथा वे कहते हैं कि बादलों की गरज और बिजली की तड़क से भी कुल वायुमंडल का १० भाग समाप्त हो चुका होगा। उक्त प्रो० के अनुसार हमारे मंडल की भिन्न-भिन्न भारी गैसें यथा ऑक्सीजन मैथीन नथोन इत्यादि अपने ऊँचे भारीपन के कारण पृथ्वी के चंगुल से कभी छुटकारा न पा सकतीं, यदि

उन्हें भूकम्प ज्वालामुखी उल्काओं की मारपीट बिजली की तड़क जैसी दुर्घटनाओं का सामना करने का अवसर न मिलता। पृथ्वी की आयु लगभग ४३ वर्ष अरब हैं, ये नुकसान इसी रफ्तार से चलता हुआ हमारे वायुमंडल को समाप्त कर देता, परन्तु वायुमंडल स्थिर है, यह प्रश्न भी विचारणीय है। वास्तविकता यह है कि इसका उत्तर अध्यात्मिक मान्यता ही है, कि सृष्टि में बढ़ना फैलना और स्थिर रहना एक क्रम है जो केवल परमपिता के आदेश से चलता है। सृष्टि का जन्म-मरण भी एक क्रम है, वायुमंडल की यह तोड़-फोड़ किसी महान के सन्तुलन से चलती है, जिसकी ठीक व्याख्या विज्ञान अभी तक नहीं उगल पाया, और आध्यात्मिकता ने इतना कह कर वैराग्य ले लिया है कि लीला भगवान की, रंग उसके निराले हैं। वो ही परम अधिष्ठाता अपनी वरेणयम-प्रेरणा, नियम और स्थिति से यह सब कुछ सम्भाले हुए है। यह वायुमंडल हमारे शरीर का संतुलन भी रखता है, हमारी आयु हमारे जीवन हमारे कार्यक्रम पर भी प्रभाव डालता है। वाय देवता महाराज सूर्य और जल के साथ-साथ अपनी सत्ता बनाए रखते हैं। यथा रेगिस्तान में, गर्म जलवायु के कारण, मनुष्य के शरीर से दिन भर में ५० मिलीमीटर प्रति घन्टा से अधिक पसीना निकलता है, जिसके कारण उसे प्यास लगती है, पानी की कमी के कारण खून गाढ़ा हो जाता है, उसे पम्प करने के लिए हृदय को ज्यादा परिश्रम करना पड़ता है, इसी तरह रेगिस्तानी चूहा भी बहुत गाढ़ा पेशाब करता है—इतना गाढ़ा कि बाहर आते ही वह ठोस रूप ले लेता है। बंवडर हमने सुने भी थे, परन्तु इन्हीं दिनों में इस देवता के प्रकोप के आकार में मूसलाधार बारिश, साथ ही ओले—कोई पीला गोला, कोई काला गोला, तेज चमक, हजार रेल गाड़ियों के एक साथ चलने वाली भयंकर

आवाज बंवडर की संक्षिप्त व्याख्या बनती है। जानो माल तबाह होना, वृक्ष उखड़ जाना, हमारे स्वयं देखें दृष्टान्त हैं।

१७ मार्च १९७८ को ६ बजकर ५ मिनट से ६ बजकर ८ मिन्ट के अन्दर अन्दर इस भयानक बंवडर का हाल देहली में देखा गया। ३ मिनट के अन्दर वह तूफान आया जो देहली ने पहले कभी नहीं देखा था।

१० मार्च १९७७ को लुधियाना में एक हल्का बंवडर दर्शन दे गया। १९३४ में पेशावर में इसका झटका मिला। अमेरिका में तो साल भर में ७०० से ८०० बंवडर आते रहते हैं। पानामा और जावा में औसतन २०० झटके एक साल में मिल पाते हैं। आखिर यह होता कैसा है ? पृथ्वी के धरातल की वायु और ऊँचाई के तापमान के मध्य जब अधिक अन्तर पड़ जाता है, तब बंवडर का जन्म होता है।

उस अवस्था मैं जब वायु में अधिक नमी हो, आस-पास की ठंडी हवा ज्यादा तपी हुई, पृथ्वी की वायु को ऊपर की ओर धकेलती है, जो सांप की कुण्डली का रूप लेती है, और वायु को १५०० प्रतिशत के अनुताप से तपा देती है, जो कि परिणामता ऊंची गरज की आवाज लेता हैं, ऐसा लगता है जैसे गोले चलाये जा रहे हों, तोपों का चलाना हो रहा हो, इत्यादि। उस समय वायु का दबाव इतना ज्यादा होता है कि उस समय जो वस्तु उसके चक्कर के मध्य आती हैं, ठहर नहीं सकती उड़ जाती हैं, यदि बंवडर किसी घिरे हुए स्थान में घुस जाये, उसकी चारदिवारी और छत्तें भी उड़ जाती हैं, जीवधारी मर जाते हैं, इसकी गति ८० से ३०० मीटर प्रति घन्टे की होती है। यह आम तौर पर ३ मिनट से ६ घन्टे तक रहते हैं। और लगभग १०० कि० मी० के क्षेत्र में अपना सिक्का दिखाते हैं।

चक्रवात का बंवडर २४ घन्टे की विनाशलीला, बहरा कर देने वाली गरज के साथ ४०० से ५०० कि० मी० प्रति घन्टा की गति से भयानक हानिकारक होता है। कई वैज्ञानिक यह अवस्था उडनतश्तरी के कारण उत्पन्न हुई बतलाते हैं। परन्तु वह और चीज है और वायु देवता का प्रकोप और चीज है। हमारे प्राण इसी देवता के द्वारा चलते हैं हमारे शरीर के मसाम, हमारी हरकट, इसी देव की कृपा से होती है, इसी देवता का प्रयोग अन्दर और बाहर का जीवन बनाता है। वायु देवता सूर्य महाराज पर निर्भर करते हुए अपनी व्यापकता और प्रभाव का दबदबा देते हैं। यही अद्भुद लीला है।

यह विवरण सूर्य देवता पृथ्वी, वायु के माहोल में देवों के देव की राज्यकता, विवेक पूर्ण रचना, कार्यक्रम, हमें सही अर्थों में स्तुति का पाठ पढ़ाते हैं यदि हम गम्भीरता से भगवत मिलन की पहली सीढ़ी पर आरूढ़ होने का सौभाग्य लेना चाहते हैं ताकि हमारा मानुष जीवन संस्कृत होने का आशीर्वाद प्राप्त कर सके। ऊपर लिखे वातावरण में हम भगवान की परम लीला के दर्शन करके अपनी आत्मा तथा अपने मन को श्रद्धा में आलोकित करने का यश प्राप्त करते हैं, अधिभौतिक जगत् इन महान देवताओं के कारण विशाल परिमाण वाला परमपिता के साक्षात दर्शन का हेतु बनता है।

भेंट चौदहवीं

आदि भौतिक जगत का एक चमकता सितारा सूर्य देवता तो कुछ परखा गया, इसी की तुलना में अपने भीतर के जगत का नूर, शरीर का प्रधान मंत्री भी हमारे देख रेख का सत्पात्र है। जिसका नाम मस्तिष्क है। इसके अन्दर का दौर सारे शरीर पर कन्ट्रोल करना, विचारना, समझना तथा मानने की सम्पदा है। यह भी स्तुति का ताल पेश करता है, स्तुति के साथ प्रार्थना उपासना की सीढ़ी चढ़ाता है। जीवन भर का सर्वोत्तम नक्षत्र यही है। संसार भर इस क्षेत्र की देख भाल में रचा गया हैं। यह स्वयं में लक्ष्य भी हैं, पूर्णपद को प्राप्ति का साधन भी है, अद्भुत भी है, चमत्कार भी हैं, चमत्कृत भी है, तथा दिव्य पथ की पूंजी भी है।

शत्पथ ब्राह्मण में एक श्रुति है—"को वेद मनुष्यस्य" इस मनुष्य को भला कौन जानता है ? सचमुच मानव बहुत रहस्य पूर्ण है। इसका सही समझ सकना एक गूढ विषय है। सबसे वड़ी विपत्ति यह है कि मानव अपनी महत्ता पर आप विश्वास नहीं करता।

महर्षि व्यास से ने महाभारत लिखते एक रहस्य पूर्ण बात कही हैं। वे कहते हैं—मानव कल्याण के लिए एक रहस्य बताता हूं, और वह यह है, कि मानव से बढ़ कर इस संसार में कुछ भी नहीं है। मानव शरीर एक है, परन्तु यह बहुत अधिक

अनगिनत यन्त्रों से गुथम्गुथा हो रहा है। विज्ञान बोलता जा रहा है, और हमारी विस्मयी बढ़ती जा रहा है। हर अंग प्रत्यगं एक कारखाना है, इस सब चेतना का केन्द्र मस्तिष्क स्वयं में एक जादू का पिटारा है। एक हजार लैन्सों वाला सहस्रार है, जो एक सैंकिड के अरबवें हिस्से में सारे ब्रह्मांड को देख लेने, जान लेने, और इस पर किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप कर लेने का साहस करता है। वैज्ञानिक अब बोल रहे हैं कि मस्तिष्क में ऐसे तत्व भी हैं जो २० अरब पृष्ठों से भी अधिक ज्ञान का खजाना अत्यन्त सुरक्षित रख सकते हैं। एक व्यक्ति एक दिन में रेखा लगभग पाँच लाख चित्र देखता है, उनकी बनावट रूप रेवाया रंग स्वरूप सौगंध और भावनाओं का भी निरीक्षण करता है। इनका संसार भी निराला है और विशालकाय सूचनाओं का एक बड़ा सम्राट है।

जर्मनी के कारलोट बालक ने बाल्य अवस्था में आश्चर्यजनक प्रतिष्ठा द्वारा अपने साथियों में से श्रेष्ठता प्राप्त की। वे बालक नौ साल की उम्र में माध्यमिक परीक्षा पास कर लेने के पश्चात् लैजिक विश्व-विद्यालय में प्रविष्ट हुआ, उसने १४ वर्ष की उम्र में पी० एच० डी० (Ph.D.) की पदवी प्राप्त की, सोलह वर्ष की आयु में उसने एल-डी की पदवी प्राप्त की, और उन्हीं दिनों र्बालन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर लग गया। भला १६ साल की भी कोई उम्र है, यह आयु हमारे यहां तो छोकरों की गिनती में आता है।

इस घटना पर विचार करते हुए न्यूरोन फिजियोलोजी इन्ट्रोडक्शन के लेखक ने लिखा है "कि इससे यह सिद्ध होता है, कि मानव को बालक के रूप में प्राप्त किया गया ज्ञान, जन्म-जन्मातरों के संस्कारों के अतिरिक्त क्या हो सकता है?"

इसलिए तो यह भी कहा गया है कि यदि इस जादू के पिटारे को सँभाला जाय, तो मानव त्रिकाल के जानने वाला हो सकता है। भारतीय यह विचार, अब साइंस द्वारा थपकी प्राप्त करके अपने प्राचीन सत्य की महिमा बता रहा है। लार्ड मैकॉले अपने समय के असाधारण ऐतिहास-वेत्ता थे। उन्होंने इंगलैड का इतिहास आठ जिल्दों में लिखाथा, जिसके लिए उन्होंने कोई अन्य पुस्तक उठा कर नहीं देखी। हजारों घटनाएँ, उनकी तिथियाँ, सम्बन्धित व्यक्तियों के नाम, उन्हें स्मरण थे, साथ ही स्थान, वातावरण, इत्यादि भी उन्हें भली प्रकार कंठस्थ थे। लोग उन्हें चलता फिरता विश्वकोष कहा करते थे।

हमारे यहाँ नर्व सैल्स एक विचित्र अजायबघर है। यह सैल्स हमारे मस्तिष्क के सिपाही हैं। जहां ये सिपाही हैं, वहाँ जागरूक भी है, इंजीनियर भी है। इनकी संख्या लगभग दो अरब कूती गई है। इनकी लम्बाई देखते ही बनती है। इनकी कार्यक्षमता अणोरणीयान महतो महीयान की तरह सत्य है। तन्त्रिकाएँ एवं कोशिका का रूप एक इंच के हजारों हिस्से से भी कम होता है। वे वजन में एक औंस का छः खरबवां हिस्से के समान होता है इन्हें आपस में जोड़े रहने का कार्य नर्वकाइबर तान्त्रिका तुन्तुएं करती है उनके इन्सुलेशन खोपड़ी के भीतर खचाखच भरे हुए हैं, से होकर बिजली के इम्पल्ज दौड़ते रहते हैं वही ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से आवश्यक सूचनाएं उस केन्द्र तक पहुंचाते हैं। दिमागी कोशिकाओं को भी अपना काम भली प्रकार निभाने के लिए ऑक्सीजन का ईंधन दरकार है। इसी क्रम में हमारी विद्युत बनती है। सोडियम और पोटाशियम के मिलन से वैज्ञानिकों ने टेपरिकार्डर बना लिये हैं, परन्तु उनमें केवल ध्वनि भर दी जाती है, परन्तु हमारे मस्तिष्क में स्मरण शक्ति के साथ चित्र भी बनते जाते हैं, और एक दीर्घ

आयु वाली सम्पदा तैयार होती जाती है। जिनके मस्तिष्क में ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुंचती, उनकी स्मर्ण शक्ति कमजोर हो जाती है। बुढ़ापे में खून की रगें सख्त पड़ जाती हैं, जिनके कारण खून के बहाव में सही प्रवाह नहीं बना पाता। और मस्तिष्क अपना कर्त्तव्य पालन नहीं कर सकता। मस्तिष्क दिखाई एक पड़ता है, परन्तु इसके भाग बहुत हैं। पृथक्-पृथक् होने पर भी एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। एच्छिक अनैएच्छिक क्रियाएँ, ध्यान, धारणा , सब मस्तिष्कीय सन्तुलन की रूपरेखा लेते है। एकाग्रता प्राप्त करने वाले सभी अभ्यास मनोबल का पुरस्कार लेते हैं, स्मृति के पुट लेते हैं। हमारे मस्तिष्क में कोशिकाएँ छोटे-छोटे ग्रुप में होती है, जो मिल कर किसी भी काम को सम्पूर्ण कर लेने का सौभाग्य लेती है। यह मंडलियाँ कभी-२ तो दस-दस हजार कोशिकाओं की टीम की तरह जुड़ जाती हैं। अभी तो आज का विज्ञान बाल्य काल में है हमारी अनन्त शक्तियों का पूरा लेखा-जोखा जाना नहीं जा सका है। विचार यह है कि अभी तक तो हमको केवल सात प्रतिशत का ज्ञान हो सका है, न जाने शेष कितनी गुथियाँ सैल बन्द स्टोर की तरह सुरक्षित रह रही हैं। सुषुप्ति के विवरण, अनेकों वर्ष पूर्व की स्मृतियाँ, जानबूझ कर किसी घटना को भुला देना, उपासना में ध्यान धारणा द्वारा ज़्यादा जोर देना, भिन्न से भिन्न लाभ, इस देवता की गोद में पड़े और देखे जा सकते हैं, जिनके विस्तार, यथाशक्ति आगे आगे मिलते जायेंगे। एक ही यन्त्र द्वारा खोपड़ी के अन्दर भयानक तूफान उठते और भारी हलचलें होते भी देखे जा चुके हैं। अब तक बने कम्पयूटर में जो सर्व श्रेष्ठ है उसमें दस लाख इकाइयों से अधिक नहीं समा सकीं जबकि इसके मुकाबले में हमारे मस्तिष्क में समायी हुई सम्पत्ति, भूत के अनेकों भण्डार, और भविष्य की उड़ान एक ही समय में एक विचित्र भंडार का दृश्य पेश करते हैं।

गुरु नानक देव ने सत्य ही कहा था—"यदि तू मस्तिष्क को शान्त रख सकता है तो तू विश्व भर में विजयी होगा" इसीलिए तो सारी सृष्टि की विजय इस मस्तिष्क की उपज करार दी गई है। मानवीय मस्तिष्क के स्नायु कोष—नर्वसेल्स—लगभग दस अरब की संख्या में हैं। संसार में इन दिनों मनुष्यों की आबादी चार अरब की है, इस प्रकार संसार के मनुष्यों की तुलना में हमारे मस्तिष्क में बैठे ये कोष ढाई गुना बनते हैं, ये कोष जहाँ शरीर के अंगों में सम्बन्ध रखते हैं, वहां उन्हें ऊर्ध्व गामी बना लेने से, प्रत्येक कोषाणु सृष्टि के दस अरब नक्षत्रों के प्रतिनिधि का काम कर सकते हैं। इस प्रकार मस्तिष्क को ग्रहों नक्षत्रों का एक जगमगाता हुआ यन्त्र भी कह सकते हैं। कैनेडा के स्नायु विशेषज्ञ पेनफील्ड ने एक व्यक्ति के स्मृतिकोष को विद्युत धारा से उत्तेजित किया। जिस पर उसने बीस वर्ष पहले देखी फिल्मों के कथानक और गाने ऐसे सुनाये, मानो अभी अभी देखकर आया है। अब तो मानव की स्मरण शक्ति लुप्त कर देने और बढ़ा देने के नये नये प्रयोग ये बतलाये जा रहे हैं कि इन की सारी क्षमता मस्तिष्क में आधारित हैं। मस्तिष्क को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, वो जिसमें मन और बुद्धि काम करती हैं, एक भाग तो सोचना, विचारना, तर्क, विश्लेषण और निणय करने की क्षमता रखता है, और दूसरा वो जिसमें आदतें संग्रहीत हैं तथा शरीर के क्रियाकलापों का निर्देश, निर्धारण किया जाता है। स्वीडन के एक वैज्ञानिक ने ये सिद्ध किया है कि मानवीय मस्तिष्क स्थिर पत्थर की तरह लकीर नहीं है, उनकी क्षमता को रासायनिक पदार्थों की सहायता से घटाया, बढ़ाया, सुधारा, बिगाड़ा जा सकता है।

मशीगान विश्वविद्यालय के डा० बर्नाड एग्रानॉफ ने सुनहरी

मछलियों पर यह प्रयोग किया कि यदि उन्हें भोजन के बाद पपोरो नाइसीन नामक औषधि खिला दी जाय, तो वह भूल जाती हैं, कि वे भोजन कर चुकी हैं। कुछ कुत्तों को स्मृति नाशक दवाई खिलाई गई, तो वो घर और मालिक को भी भूल गये। इसी प्रकार मन्द बुद्धि लोगों के लिऐ स्मरण शक्ति वढाने के उपाय खोजे जा रहे हैं। यदि ये सफल हो सके, तो छात्रों को पाठ याद करने के श्रम से छुटकारा मिल जायेगा, और वह एक बार ही पुस्तक पढ़ कर ही परीक्षा भवन में पूरे विश्वास और उत्साह के साथ प्रवेश कर सकेंगे। ये तो कर सकने की क्षमता करार दी गई, परन्तु हम तो साक्षात दृष्टान्त लिये बैठे हैं, कि लोगों ने क्या से क्या कर दिया है। ब्रिटिश संग्रहालय के सहायक अधीक्षक रिचर्ड गारनेट बारह वर्ष तक एक संग्रहालय के मुद्रक विभाग के अध्यक्ष थे। इस संग्रहालय में पुस्तकों की हजारों अलमारियां और करोड़ो की पुस्तकें थीं। श्री गारनेट अपनी कुर्सी पर बैठे २ न केवल पुस्तक का ठिकाना वता देते थे परन्तु पुस्तक की भीतरी जानकारी भी दे देते थे।

वास्तविकता तो यह है, कि बाहर से जो कुछ जितने श्रम के, जितने मनोयोग के मूल्य पर प्राप्त किया जा सकता है उससे कहीं कम प्रयत्न से अन्तर्जगत खोजा जा सकता है, और कहीं अधिक मापा जा सकता है। वैज्ञानिको ने कमाल की टांग तोड़ कर रख दी है, अपने नये नये प्रयोग प्रस्तुत करके। आधार की रुचि, शत्रुता, मित्रता, भय, आक्रमण आदि के समान स्वभाव को जिस प्रकार चरितार्थ किया जाना चाहिए, उसे भी भुलाया जा सकता है, और विचित्र प्रकार का आचरण देखा जा सकता है।

एक प्रयोग द्वारा यह देखा गया है कि बिल्ली के सामने चूहा छोड़ा गया, तो आक्रमण करना तो दूर उससे डर कर वह एक कोने में जा बैठी क्षण भर में एक दूसरे पर खूनी आक्रमण करना, एक मिनट बाद परस्पर लिपट कर प्यार करना, यह परिवर्तन उस विद्युत क्रिया से देखा गया है। चाहे हम सो रहे हैं या जाग रहे हों, हर समय तीन पौंड भारी मस्तिष्क मेरु दण्ड लगभग दस अरब तन्त्रिकाओं द्वारा, हमारे देह की समस्त क्रियाओं का नियंत्रण एवं संचालन करता रहता है। उसे करीब २० वाट विद्युत क्रिया की आवश्यकता रहती है।

हमारे मस्तिष्क में एच्छिक व अनैच्छिक क्रिया कलाप भी मस्तिष्क की देख रेख में चलता है। इसका सम्बन्ध पिचिट्युरी गलैंड से गठित है। जो व्यक्ति दोगलापन करते हैं, भय से युक्त रहते हैं, घबराए होते हैं, उनकी यह गलैंड कमजोर पड़ जाती है और वे मस्तिष्क की कार्य क्षमता में लोप का कारण बनते हैं। मेंढक की आंख और मस्तिष्क के बीच में, इस प्रकार के ज्ञान तन्तु होते हैं, जिनके कारण वह अपने दुश्मन की आक्रमण की इच्छा को पहचान लेता है, यह शक्ति मनुष्य के आज्ञाचक्र भू-मध्य में ऐसी संवेदन शील शक्ति होती है जो आक्रमण होने से पहले सूचना दे देती है।

कुछ वर्ष पूर्व इच्छा शक्ति के चमत्कारों का प्रत्यक्ष प्रदर्शन करने के लिए डा० राल्फ ने सार्वजनिक प्रदर्शन मैक्सिको नगर में किया था। इस प्रदर्शन में प्रायः सभी प्रतिष्टित पत्रों के प्रतिनिधि और अन्य अन्य वैज्ञानिक, तार्किक, बुद्धि जीवी, तथा समस्त नागरिक आमन्त्रित किये गये थे। प्रदर्शन यह था कि आकाश में छाये बादलों को किसी भी स्थान से, किसी भी दिशा में, हिलाया जा सकता है, और उसे कैसी ही शक्ल दी जा सकती। बादलों को भगाया बुलाया जा सकता है। नियत

समय पर प्रदर्शन हुआ, उस समय आकाश में एक भी बादल नहीं था। प्रयोग कर्ता ने देखते २ घटायें बुला दीं, और दर्शिकों की मांग के अनुसार, बादलों के टुकड़े अभीष्ट स्थानो पर बिखेर दिये, उनकी अद्भुद शक्लें बना दी, इस अद्भुद प्रदर्शन की चर्चा उन दिनों अमेरीका के समस्त अखबारों में मोटे अक्षरों द्वारा छपी थीं।

भाग्यवान विद्वानों ने निःसंकोच कह डाला है कि हमारा मस्तिष्क दिव्य शक्तियों का भंडार है, मनुष्य की इच्छा शक्ति अपने ढ़ंग की एक सामर्थ्यवान विद्युत धारा है, जिसके आधार पर प्रकृति की हलचलों को प्रभावित कर सकना पूर्णतः विधि सम्मत है। इसमें किसी भी प्रकार की अत्युक्ति नहीं है, कि सारे मंडल की तरह हमारा मस्तिष्क भी निधियों और सिद्धियों की एक विचित्र प्रयोगशाला है। संकल्प, इच्छा शक्ति के क्या कहने—नित्य एक घन्टा विदेशी भाषाएँ सीखने में लगाते रहने के कारण विनोवा भावे २३ भाषाओं के विद्वान बन सके। लिथुयानियाँ का रैवी एलिजा २ हजार पुस्तकों को कंठस्थ रखने के लिए प्रसिद्ध था। कितनी ही बार उलट पुलट कर उसकी परीक्षा की गई और वो खरा उतरा।

संयुक्त राष्ट्र संघ में एक ऐसे भाषा—अनुवादक थे, जो एक ही समय में चार भाषाओं का अनुवाद अपने मस्तिष्क में जमा लेते थे, और चार स्टेनोग्राफर बैठा कर उन्हें नोट कराते चले जाते थे। अमेरिका के एक गौरिज कर्मचारी को सैंकड़ों मोटरों के नम्बर जवानी याद थे और वह उनकी शक्ल देखते ही, पुरानी भुरम्मत की बात भली प्रकार याद कर लेते थे। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने एक बार एक चार वर्षीया बेबिल थाम्पन के गणित अध्ययन के लिए, अतिरिक्त प्रवन्ध किया था, यह बालिका इतनी छोटी आयु में ही अंक गणित त्रिकोण-

मिती तथा प्रारम्भिक मौलिक असाधारण गति रखती थीं।

उस उम्र के बालक की, जिसनें प्रारम्भिक पढ़ाई क्रम विधि से न पढ़ी हो, उसे आगे पढ़ाया जाये, इसे जानने के लिए शिक्षा शास्त्रियों का विशेष पेनल नियुक्त किया गया। मद्रास संगोत एकादेमी न्यास की ओर से रवि किरण-ढ़ाई वर्ष के बालक को, उसकी अद्‌भुत संगीत प्रतिमा के उपलक्ष्य में, विशेष छात्रवृद्धि देने की घोषणा की गई है। यह बालक न केवल कई वाद्य यन्त्रों का ठीक तरह बजाना जानता है, परन्तु दूसरों द्वारा गलत बजाये जाने पर उनकी गलती को भी बताता है। जापान वासी हनावा होकइषी १७२२ में जन्मा, और पूरे १०० वर्ष जी कर १८२३ में मरा। वे सात वर्ष क़ी आयु में अंधा हो गया था। पर उसने बिना नेत्रों के ही दूसरों से सुनकर अपनी ज्ञान वृद्धि आरंभ कर दी। जो सुना उसे पूरे मनो योग के साथ सुना, और ध्यान में रखा, फलस्वरूप, उसके ज्ञान का कोष इतना बढ़ गया, कि उसे इतना अद्‌भुत आश्चर्य माना जाने लगा, उसके द्वारा, नोट कराये गये ज्ञान भंडार को जापान में २८२० खण्डों के एक अनुपम विशाल ग्रन्थ के रूप में छापा गया है, जो संसार का सबसे बड़ा ग्रन्थ है।

सर जॉन कीलडिंग इग्लैंड के एक जज थे वे अन्धे थे, पर उनके काम इतने सक्षम थे, कि अपने जीवन काल में उनको जिन ३ हजार अपराधियों से वास्ता पड़ा था, उन सब की आवाज ठीक तरह पहचान सकते थे, और उनका नाम वता सकते थे। मुकद्दमों के मुद्दतों बाद वे लोग उनसे मिलते आने तो नेत्र हीनता पर भी, केवल स्मरण शक्ति के आधार पर वे उसका नाम और मुकद्दमों का संदर्भ बता देते थे, उनकी यह अद्‌भुत स्मरण शक्ति चिर काल तक चर्चा का विषय बनी रही। फ्राँसिस्को मेरिया गेरी बरडी नामक एक प्रसिद्ध कवि इसलिए

प्रतिभावान सिद्ध हुआ, कि वे दोनों हाथों से दो कविताएँ एक साथ लिखता जाता था।

लाकरोज ने अपनी स्मरण शक्ति का एक अनूठा प्रदर्शन करके दर्शकों को इस तरह चकित कर दिया कि वे विस्मय पूर्ण हो रहे उस सज्जन में अपरिचित बारह भाषाओं की बारह कविताएँ सुनी और दूसरे ही क्षण उसने उसे ज्यों का त्यों दोहरा दिया। ५ अक्टूबर १६०० को लंदन में एक भारतीय महिला शकुन्तला देवी जिन्हें गणित की जादू गरनी कहा जाता है, टेलिविजन पर अपना कार्यक्रम प्रस्तुत कर रही थी, तभी एक सज्जन ने उन्हे एक प्रश्न हल करने को कहा, बिना एक क्षण के विलम्ब किये हुए, उन्होंने कहा कि यह प्रश्न गलत है। यह प्रश्न ब्रिटेन के बड़े-बड़े गणिताचार्यों ने प्रस्तुत किया था, तभी सब लोग एक दम आश्चर्य में डूब गये, कि प्रश्न कैसे गलत हो सकता था। बी. बी. सी. कार्यक्रम प्रस्तुत कर्ता ने प्रश्न की जाँच करायी तो वह विस्मित रह गया कि प्रश्न सचमुच गलत है। उसने यह भी माना "कि हम जितना समझ पाये हैं मन की शक्ति और सामर्थ्य उससे बहुत अधिक है। सिडनी स्थित न्यूसाउथ नेल्स विश्वविद्यालय में उस देवी की प्रतिद्वन्द्वता बीस हजार पौड मूल्य के संगणक (कम्पयूटर) से हुई यह कम्पयूटर विद्युत चालित था। और उसका ऑपरेशन प्रसिद्ध गणितज्ञ श्री आर० जी०, स्मॉट और वैरी थार्नटन कर रहे थे। किन्तु जब भी कोई प्रश्न पूछा जाता था, शकुन्तला उसका तुरन्त उत्तर दे देती थीं, जबकि मशीन के उत्तर की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी।

शकुन्तला के उत्तर शत प्रतिशत सही पाकर वे चौंक पड़े थे। यह असाधारण दृष्टान्त मन और मस्तिष्क की हाजर जवाबी, क्षमता, विशालता, अपूर्व सफलता हमें मजबूर करती

है, कि हम अपने मुख्य पात्र की लीला को मानने वाले बनें। २०० वर्ष पूर्व जर्मनी में एक बालक का जन्म हुआ वह बालक तीन वर्ष का था, तभी उसे हजारों लैटिन मुहावरे याद थे। पूर्व जर्मनी का विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न तीन वर्ष का बालक हानेनकेन मस्तिष्क विद्या के शोध कर्त्ताओं का केन्द्र रहा है। अमेरीका के भौतिक शास्त्री डा० स्टीवेन्स ने ६०० ऐसी घटनाएँ एकत्रित की है, जिनमें किन्हीं व्यक्तियों, विशेषकर १४ वर्ष की आयु तक के बालकों द्वारा, बताये गये, उनके पूर्व जन्म के प्रमाणित सिद्ध हुए हैं। इनमें से १७० प्रमाण अकेले भारतवर्ष के पाये गये हैं। मनुष्व कितना महान् है, सूक्ष्म शरीर के शोधन की, विचारों को ऊँचा उठाने की संकल्प की महत्ता, अनेक पुस्तक भण्डारों में भरी पड़ी है। काश कि मनुष्य अपने विचार नये कर ले, चरित्र को ऊँचा उठा ले, तो वह अपना शरीर ही बदल सकता है। मस्तिष्क के मुख्य भाग सामने वाले माथे की बाबत इतने तक कह दिया गया है, कि वह ६७% इसकी सम्पदा अविज्ञात है। इन बढ़ते हुए प्रयोगों से यह भी माना गया है कि हम जो भी काम करते हैं वह कितना भी छिपकर क्यों न करें, अचेतन मस्तिष्क में वो सब अंकित होता रहता है। कनाडा के शोध वैज्ञानिक डा० पेनफील्ड ने अपने प्रयोगों द्वारा स्मरण शक्ति की पट्टियों के बारे में आश्चर्य-जनक सामग्री एकत्र की है। उन्होंने एक व्यक्ति की स्मरण शक्ति की पट्टी के किसी विशेष हिस्से में विद्युत दौड़ाने पर, उसकी पुनर्जन्म की स्मृतियों को जाग्रत कर दिखाया है, इन उदाहरणों से एक से एक अद्भुत रहस्य, एक के वाद एक, उभरते चले जाते हैं और उनका मूल्यांकन करते करते इस निष्कर्ष पर पहुंचना पड़ता है कि कण कण में, उपयोगिता, विलक्षणता सामर्थ्यता एवं सुन्दरता के भण्डार भरे पड़े हैं,

अब भी मानव उस महान् परमपिता की साक्षी न ले, तो मानव ही दुर्भाग्य पूर्ण है। भगवान का सौभाग्य तो सिद्ध हो चुका है। यह सारे वृत्तान्त, आँकड़े हमीं शुद्ध तथा उपयुक्त स्तुति का पाठ पढ़ाते हैं।

इस संसार में प्रकृति की तीन शक्तियां भरी पड़ी हैं, विद्युत, ताप, और प्रकाश हमें इन्हीं के द्वारा सृष्टि की रचना अपने-अपने ढंग से चलती है। शरीर में भी यह तीन शक्तियाँ विद्यमान है और अपनी स्थिति के अनुरूप विभिन्न अव्यवों में विभिन्न प्रकार के कार्य करती हैं। स्नायुमंडल में विद्युतधारा का संचार रहता है, मस्तिष्क उसका केन्द्र है, इन्द्रिय केन्द्रों पर उसी का अधिपत्य है। ज्ञान तन्तुओं के द्वारा केन्द्र तक सूचना पहुंचाना और वहाँ से मिले विदेशों को अवयवों के द्वारा सम्पन्न कराना इसी शक्ति का काम है। मन संस्थान की समस्त गति-विधियां इसी के द्वारा संचारित होती है। विकास से सम्बन्धित हलचलें प्रकाश तरंगों द्वारा सम्पन्न होती है। सूर्य की प्रकाश किरणें वनस्पतियों की अभिवृद्धि एवं प्राणियों में प्राण संचार का प्रयोजन पूरा करती हैं। आप के साथ होने वाली अभिवृद्धि को यह प्रकाश तत्व ही संजोता है। अध्यात्मिक अलङ्कारों में विद्युत को ब्रह्मा, प्रकाश को विष्णु और ताप को शिव माना गया है। यह शरीर तीन केस पर चलने वाली मोटर है।

मानव मस्तिष्क में प्रायः एक खरब चालिस अरब न्यूरान होते हैं। प्रत्येक न्यूरान स्वयं का काम तो करता ही है, साथ में दूसरों न्यूरानों के कार्य में भी भारी योगदान देता है। समझदारी का सम्बन्ध इस बात से है, कि यह सूक्ष्म खटक न्यूरान कितने और परस्पर कितनी सघनता से सम्बन्धित है। आदमी के नास्तिष्क का वजन समान्यता एक हजार तीन सौ पचास ग्राम होता है। खीजों से स्पष्ट हुआ है, कि मास्तिष्कीय

आकृति व भार से मस्किष्कीय, सक्रीयता व शक्ति का सीधा सम्बन्ध नहीं है। ह्वेल का मस्तिष्क सात हजार ग्राम, हाथी का ५ हजार दो सौ, डालफन का एक हजार आठ सौ, घोड़े का साढ़े छः सौ, गैंडे का छः सौ, गुरिल्ला का पांच सौ, कुत्ते का एक सौ तथा बिल्ली का मस्तिष्क ३० ग्राम वजन का होता है, पर इसी सम्बन्ध से इसके मस्तिष्क की बहिरंग तथा आन्तरिक संरचना के सम्बन्ध में पहले की अपेक्षा बहुत जान लिया गया है। एक समय था जब मस्तिष्क के भीतर भरी मसा, कोशिका तन्त्रिकाएँ ही चिन्तन की आधार शिला मानी जाती रही और समझा यह जाता रहा कि जिसका मस्तिष्क जितना भारी व बड़ा होगा वह उतना ही बुद्धिमान होगा, परन्तु यह विश्वास सही नहीं निकला। अब तो यह समझा जा रहा है कि इस संस्थान के आन्तरिक क्षेत्र में काम करने वाली विद्युत शक्ति ही विचार शक्ति बनती है। इस विद्युत को लगभग उसी स्तर की भौतिक विद्युत द्वारा प्रभावित किया जाता है, और चिन्तन के बाहरी दबाव से उभारा या दबाया या सकता हैं।

मस्तिष्कीय सूत्रों को जोड़ता है एक विद्युत प्रवाह। यह प्रवाह मनः चेतना की इच्छानुसार मस्तिष्क की विभिन्न परतों में तीव्र गति से कौंधता है, और अरबों कोशिकाओं में बिखड़ी पड़ी क्षमताओं और स्मृतियों में से अमुक क्षण विशेष से आवश्यक तथ्य ढूंढ़ लाता हैं। यह विद्युत प्रवाह जितना ही सुव्यवस्थित द्रुतगामी एवं संवेदनशील होगा, मनुष्य उतना ही कुशल एवं बुद्धिमान होगा। जीवशास्त्री जेमन ओल्डस ने चूहों के मस्तिष्क पर आंशिक नियंत्रण की प्रक्रिया खोज निकाली और उसके मस्तिष्क से बिल्लियों के प्रति भय का भाव निकाल दिया, परिणाम यह हुआ वे चूहे बिल्लयां की पीठ पर बे झिझक चढ़ने दौड़ने लगे। उनके प्रति भय का भाव तो विदा

हो गया और वो बिल्लियों को अपने हितैषी वर्ग का मानने लगे। स्नायु विज्ञानी कार्लेलेजले ने खोज की है कि मस्तिष्क के किस स्तर पर किस शक्ति से कितना विद्यु त प्रवाह किये जाने पर, किस काल। खण्ड की (पुरानी से पुरानी) किस स्तर की स्मृतियां ताजी हो सकती हैं। बड़े विस्मय का समय है दिन प्रतिदिन यह खोजें देखते हुए आश्चर्यजनक रह जाना पड़ता हैं और इसी के बल पर अब हमें यह भी मानना पड़ रहा है कि पूर्व जन्म के संस्कार ही मनुष्य को बल शक्ति और क्षमता देते हैं। बड़ी उम्र के लोग, मानसिक पुरुषार्थ के अभाव में जैसी स्थिति में रह सकते हैं, और यदि लगन समझदारी तथा क्रम व्यवस्था का अभाव न हो तो छोटी आयु में भी प्रतिभा का इतना विकास हो सकता है, जो बड़ों से बाजी मार लेता है। शिवाजी ने तेरह वर्ष की आयु में तोरण का किला जीता था। सिकन्दर ने सतरह वर्ष की आयु में शुरोनियां का युद्ध जीता था, अकबर ने सोलह वर्ष की आयु में गद्दी सम्भाली और विशाल साम्राज्य को बुद्धिमत्ता पूर्वक चलाया था, अहिल्याबाई ने अटारह वर्ष की आयु में राजकाज अपने हाथ में ले लिया था। सन्त ज्ञानदेव ने बारह वर्ष की आयु में गीता का ज्ञानेश्वरी भाष्य लिखा था। जगत्गुरु शंकराचार्य ने सोलह वर्ष की आयु में अनेक शास्त्रार्थ जीते थे; रविन्द्रनाथ टैगोर ने चौदह वर्ष की आयु में शेक्सपीयर के 'मैकबैथ' नाटक का बंगला अनुवाद किया था। बंगाली कवयित्री तारादत्त अठारह वर्ष की आयु में विश्वविख्यात हो गयी। सरोजनी नायडू ने तेरह वर्ष की आयु में १३०० पंक्तियों की मर्मस्पर्शी कविता लिख कर साहित्यिक क्षेत्र में चमत्कार उपस्थित कर दिया। डार्ट माउथ कॉलिज अमेरीका में एक प्रयोग किया गया कि छात्रों की पुस्तक पढ़ने की गति तीव्र की जा सकती है? मनोवैज्ञानिक व्यायामों और

प्रयोगों के सहारे हर मिनट २३० शब्दों से अधिक पढ़ने वाले छात्रों की गति कुछ ही समय में बढ़ कर ५०० प्रति सैकिंड हो गयी। मस्तिष्क का सामने वाला भाग सेरे क्रम, संवेदनाओं और इच्छाओं का केन्द्र है। यह भी कहा गया है, कि भूरा पदार्थ मस्तिष्क में बुद्धि का और सफेद पदार्थ क्रिया का संचालन करता है मस्तिष्क का दाहिना भाग शरीर के बायें भाग का और बाँया भाग शरीर के दायें भाग का संचालन करता है। मैं इस बात को मानने के लिए तैयार हूं कि हम क्षुद्रजीवि भगवान की अनुपम और अद्भुत लीला को समझने में असमर्थ हैं। मैं तो स्वयं ही पुस्तक का नाम अद्भुत रख करके अपना सौभाग्य मानता हूं कि भगवान हमारे लिए कितने उदारदानी हैं कभी तो हम निद्रा के पीछे भागते हैं, कभी जागरूकता की प्रकार करते हैं। परन्तु जो ७६ वर्ष में से ३८ वर्ष बिना निद्रा के रह सके, भला उनका क्या कहा जा सकता है यह दृष्टांत जी. डब्लू स्मिथ इंग्लैंड के व्यक्ति का मिला है। पटेल नगर दिल्ली में बाबा रामसिंह नामक एक शतायु सज्जन बच्चों की कापी, पेन्सिल नामक चीजों की दुकान चलाते थे, उनका कथन था, कि गत २२ वर्ष से वे एक क्षण के लिए भी नहीं सोये थे ।मैं तो केवल यह मानता हूं जैसा कि, कसमगौर्की को कहते थे "यह विश्वास रखो कि तुम पृथ्वी के सब से आवश्यक मनुष्य हो। संसार की प्रत्येक शक्ति हमारी प्रगति में अपना हाथ बटा रही है चाहे हम सो रहे हों या जाग रहे हों, हर समय तीन पौंड भारी मस्तिष्क मेरुदण्ड एवम लगभग दस अरब तंत्रिकाओं द्वारा देह की समस्त क्रियाओं का नियंत्रण करता रहता है जिसके लिए २० वाट विद्यु त ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है जो गलो-

कोज एवं आक्सीजन से प्राप्त होती है। ज्ञान भी तो अनन्त है, जितना खोजें उतना पाएं। पर इतने मात्र से, जो सामग्री पेश की गई है, यदि स्तुति साधन से सत्कृत होने का संकल्प बना लें तो हम बड़े सौभाग्यशाली होंगे। जहाँ भगवान के प्रति कृतज्ञता के भाव मे ओत-प्रोत होंगे वहां अपने में आन्नन्दित होने का वर पाकर गद्गद् हो पाएंगे, यही अवस्था अपनाने की है तथा मानव शरीर में अपने को सुशोभित करने की है।

———

"जादू महल"

यह धरा जहाँ मैं रहता हूं यह महल लगा जादूगर का
सब कुछ अद्भुत विचित्र जहाँ है खेल उसी जादूगर का
असंख्य बन्द हैं द्वार लिखा उन पर कुछ कुछ है
अन्दर है रंग मंच जहाँ अभिनय होता है
अपनी प्रकृति के अनुरूप प्रवेश सभी होतें हैं उसमें
पर कथा वही पर नाटक में हम अभिनेता होते उसमें
करते है प्रेम-प्रेमिका से फिर उसकी हत्याकर देते
पहले हम मित्र बना लेते फिर युद्ध उसी से कर देते
जितने द्वारों में हम जाते उतने हैं रूप बदल जाते
हैं कभी-२ मानव होते और कभी भेड़िया बन जाते

———

भेंट पन्द्रवी

भाग्य से निर्मित, दो विभिन्न जाति के प्राणी, जब किसी के शुभागमन में परस्पर मिलते हैं, तब एक आलीशान मन्दिर की तैयारी आरम्भ हो जाती है। पधारने वाले का इतनी प्रतिष्ठा और प्रभाव होता है, कि उसके आ जाने के पूर्व से ही, ठीक रक्षा करने वाली, उत्तम प्रकार के सुख वालो, श्रेष्ठ मार्ग से ले चलने वाली, उत्तम पतवारों वाली, कभी न चूने वाली, अछिद्रा, परिपूर्णा, अंखिडता, प्रकृति रूपिणी दैवी नाव-रथ बनने लग जाता है। इस नाव के नाविक के विषय में कुछ बोल हृथ पहली बारह भेंटों द्वारा परिचित हो चुके हैं। उसकी शोभा में ब्रह्मांड का महान देवता कितनी श्रद्धांजलि व बलि चढाने को उद्यत हुए, की भी रूप रेखा हम कुछ थोड़ी सी तेरहवीं भेंट में देख पाये हैं।

उस इन्द्र देवता का सरताज, हमारे ही भीतर ही भीतर सौर ऊर्जा का स्रोत, विलक्षण क्षमताओं से सम्पन्न, हम चौदहवी भेंट में कुछ देख पाये हैं। अब जरा उस नाव अथवा रथ की सुसज्जा की भी देख पड़ताल कर लें, ताकि अपने को शोभायमान अनुभव करने हेतु, हम सच्ची स्तुति का वरदान पाने का सौभाग्य प्राप्त कर सकें।

हमारी नाव के प्रतीक शरीर-में सबसे पहले चमड़ी दिखाई देती है। मोटे तौर से तो वो ऐसे लगता है जैसे शरीर पर कोई

मोमी कागज चिपका हो, परन्तु जरा बारीकी पर देखने से प्रतीत होता है, जैसे इसमें तो कल पुर्जे और कारखाना जैसा काम हो रहा है। यह त्वचा एक वर्ग इंच में प्रायः बारह फुट लम्बी तंत्रिकाओं का जाल लिए हुए है, इतनी ही जगह में नलिकाओं की लम्बाई नापी जाय तो वह भी बारह फुट से कम न बैठेगी, इसके अन्तर बिछी हुई रक्तवाहिनियाँ गर्मी में फैलती और सर्दी में सिकुड़ती रहती है, ताकि तपमान का संतुलन बना रहे। चमड़ी की सतह पर प्राय दो लाख स्वेद ग्रन्थियाँ होती है, जिनके द्वारा पसीने के रूप में हानिकारक पदार्थ इस नाव से बाहर निकलते रहते हैं, ताकि यह नाव सुरक्षित व चिरायु हो सके। यू तो त्वचा एक सी लगती है पर उसके भी तीन भाग माने जाते हैं, ऊपरी चमड़ी, भीतरी चमड़ी और हड्डी के ऊपर के ऊलका तीसरी पर्ती में रक्तवाहिनियाँ, तन्त्रिकाएँ और वसा के तत्व होते हैं। यद्यपि त्वचा एकसी लगती है पर नारि की त्वचा और नर की त्वचा में भी भेद है। नारी की त्वचा में अधिक सहनशीलता है। इसलिए हम देखते हैं कि एक नारी सर्दियों के दिनों में एक पतले कपड़े में काम काज कर लेती है, जबकि नर तापयुक्त होने की खातिर, स्वेटर आदि ओढ़ लेता है।

शरीर का पचास प्रतिशत भाग मांस पेशियों के रूप में है। मोटे और पतले आदमी इन मांस पेशियों की बनावट और वजन के हिसाब से ही वैसे मालूम पड़ते हैं। प्रत्येक मांस पेशी अनेक तन्तुओं से मिलकर बनी हैं, वह बाल के समान पतले होते हैं, पर मजबूत इतने कि अपने वजन की तुलना में एक लाख गुना वजन उठा सके।

इन पेशियां में एक चौथाई प्रोटीन और तीन चौथाई पानी होता है। चोट लगने पर हड्डियां को टूटने से बचाने का कार्य मांस पेशियां ही करती हैं। मर्दों की पेशियां स्त्रियों की तुलना में अधिक कड़ी व मजबूत होती हैं ताकि वे अधिक परिश्रम से कार्य कर सकें। अन्य अंगों को अपेक्षा हाथों की पेशियां अधिक शक्तिशाली होती है। यूंतो चमड़े के भी सात प्रकार गिने गये हैं। एक पर एक पर्त अपनी लपट से भीतर के तत्वों की सुरक्षा में सम्पन्न हैं, और हमारी मुख्य पात्र नाव के कल्याणकारी होने में पूर्णतः कर्त्तव्य को निभाती है। शरीर के भीतर हृदय मस्तिष्क, अमाशय आंते एक से एक महत्वपूर्ण कलपुर्जे लगे हैं। इनमें सबसे छोटे पेशाब साफ करने जैसे गन्दा काम करने वाले अवयव गुर्दे जैसे छोटे से टुकड़े को देखें, तो प्रतीत होगा कि प्रकृति ने इस नगण्य अंग को भी कितना सुव्यवस्थित सर्वांगपूर्ण बनाया हैं। गुर्दा एक सिरा थोड़ा उभरा हुआ और दूसरा थोड़ा दबा हुआ, आकार युक्त, वजन १५० ग्राम संख्या में दो, मूत्र बनाने की मुख्य सेवा करता है। एक जैसी वस्तु में से आवश्यक और मलयुक्त जल को निरन्तर छांटते रहना और बाहर निकालते रहना, रीढ़ की हड्डी से सटे हुए, एक वांई ओर, और दूसरा दायीं ओर, दायां थोड़ा नीचे बायां थोड़ा ऊपर, ताकि उनके सामान्य क्रिया कलाप में अड़चन उत्पन्न न हो, प्रत्येक गुर्दा लगभग ४ इंच लम्बा, २.५ इंच चौड़ा, तथा २ इंच मोटा होता है।

कमाल की पहचान और निगरानी से, इ समें से घुले हुए नमक, पोटाशियम, कैलशियम, मैगनेशियम पर गुर्दे खूब निगाह रखता है। इनकी मात्रा जरा जरा भी बढ़ जाये, तो शरीर पर घातक प्रभाव डालती हैं। ये छलनी दस लाख से ज्यादा नलिकाओं वाली है। इन सबकी लम्बी कतार में रखा जाय तो

११० मि० मीटर लम्बी डोरी बनती है। एक घन्टे में दोनों गुर्दे इतना रक्त छानते हैं जिनका वजन पूरे शरीर से २ गुना हो जाये। नमक ही सबसे ज्यादा अनावश्यक मात्रा में होता है, यदि यह रुकना शुरू हो जाये, तो सारे शरीर पर सूजन चढ़ जाती है। इसी प्रकार गुर्दें इस अनावश्यक रक्त को निरन्तर बाहर करते हैं। गुर्दें यद्यपि हैं थोड़ा-सा एक दूसरे के ऊपर नीचे, परन्तु बड़े सघन सहयोगी हैं, सच्चे मित्र हैं, एक खराब हो जाये तो दूसरा उसका बोझ अपने ऊपर ले लेता है, और अकेला ही पूरी गाड़ी आजीवन खींच डालता हैं। ये प्रतिदिन प्रायः दो लीटर मूत्र बनाते हैं। कम पानी पीने से मूत्र का रंग गाढ़ा और गहरा हो जाता है। जाड़े के दिनों में पसीना कम निकलता है इसलिए पेशाब की मात्रा बढ़ जाती है।

अभी तो छोटे-छोटे पुर्जों की बात है एक पुर्जा और दाहिनी पसलियों के नीचे, तनुपट से सटटा, हमारा जिगर मर्दों का सवा से डेढ़ किलोग्राम, और स्त्रियों का कुछ हल्का होता है। शरीर का चोथाई रक्त इस जिगर में ही भरा रहता है। ये छोटे से कलपुर्जे की कोशाओं में ये विलक्षण विशेषता है, कि वे अमर हैं, एक बार नष्ट हो जाने पर वे दोबारा बन जाती है, यदि जिगर का तीन चौथाई भाग नष्ट हो जावे, एक चौथाई में भी उसका काम चलता रहता है।

इन अवयवों में से जिस पर भी जरा आँख दौड़ाएँ, विशेषताओं का भंडार ही भंडार मिलता है यहां तक के बाल जैसे निर्जीव और बार-बार खरपतवार की तरह उखाड़ कर फैंक देने वाली वस्तु भी अपने आप में अद्‌भुत है। ओसतन मनुष्य के सिर में एक लाख बीस हजार बाल होते हैं, जो नन्हें गढ़ों से निकलते हैं, जिसे रोम-कूप कहते हैं, जो चमड़ी के शिरोवल्क

के भीरत प्रायः एक तिहाई इंच गहरा घुसा होता है। बालों की वृद्धि प्रतिमास तीन चौथाई इंच होती है, इसके बाद वो धटती जाती है। बालों की आयु डेढ़ वर्ष से लेकर छः वर्ष तक होती है। अपनी आयु बिता कर ये अपने स्थान से टूट जाते हैं, और उसके स्थान पर नये बाल उगते हैं।

अच्छी मोटर होने पर भी अनाड़ी ड्राइवर मोटर को तोड़-फोड़ कर रख देता है, ऐसी दुर्घटना हमारी बनी है, पर भगवान बड़े कृपानिधान हैं, उन्हें तो मानव को जीवित मात्र करना है, इसलिए भिन्न से भिन्न सामग्री द्वारा हमारी नाव की कल्याण-कारिणी सत्ता बनायी जा रही है।

जैसे भौतिक जगत् में जल तत्व प्रधान है, ऐसा हमारे शरीर में भी ६ प्रतिशत पानी है। थल की उपयुक्तता जल के संयोग से ही बनी है। स्थूल जगत में थल और जल का जो संयोग है, वह ही सूक्ष्म जगत में वैभव और भावना का है। इन दोनों के संयोग से ही मनुष्य जीवन्त और रससिक्त दृष्टिगोचर होता है। हाईड्रोजन के दो, ऑक्सीजन के एक, परमाणु मिलने से पानी बनता है। ये इस प्रकार जुड़ जाते हैं कि इनको पृथक् करना असम्भव होता है। भावनाएँ मात्र अन्तःकरण में नहीं रहती वरन मस्तिष्क में विचार पद्धति का तथा शरीर में क्रिया शक्ति का संचार करती हैं। मस्तिष्क जड़ है। उसका स्वतंत्र चिन्तन कुछ भी नहीं, भावनाओं का प्रवाह ही अभीष्ट दिशा में, मन, बुद्धि चित्र अहंकार को धकेलता घसीटता है।

मानव शरीर में जल का अनुपात स्थिर रखने पर ही वो स्वस्थ रह सकता है यदि पांच प्रतिशत की कमी पड़ जाये तो चमड़ी सिकुड़ जाती है, जीभ ऐंठने लगती है, ओर भयानक स्पप्न दिखाई देते हैं। यदि जल पन्द्रह प्रतिशत कम पड़ जाये,

तो फिर मौत के ही दर्शन होते हैं। शरीर में ४७% पानी पेय पदार्थों द्वारा ३९% ठोस समझे जाने वाले आहार से पहुंचता है, चौदह प्रतिशत शरीर स्वयं ही अपनी रसायनिक क्रियाओं द्वारा अपने आप बनाये रहता है। साधारणतः एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर में ५० सेर पानी रहता है, इनमें से २½ सेर पेशाब पसीना आदि निकलता है, और इतना ही खान-पान के माध्यम से भीतर पहुंच जाता है।

पानी के निकास में सांस को प्रतिशत पसीने की ग्रन्थियों को २२ प्रतिशत और शेष श्रम गुर्दों को करना पड़ता है। रक्त में ८३ प्रतिशत और दाँतों के ऊपरी खोल में २० प्रतिशत पानी होता है। सबसे अधिकता और न्यूनता वाले यही दो भाग हैं।

शरीर में कई प्रकार के नमक उत्पन्न होते हैं, उनका सन्तुलन सही बनाने के लिए पानी की सीवर लाइन बरावर चलती रहती है। मनुष्य शरीर के लिए जिस प्रकार जल की आवश्यकता है, उसी प्रकार कृषि उद्योग कलकारखाने भी पानी के बल पर जीवित हैं। एक गैलन पैट्रोल तैयार करने के लिए, उसकी सफाई के लिए ६० गैलन पानी की आवश्यकता पड़ती है। पानी अत्यन्त आवश्यक तत्व है। संसार का ९७ प्रतिशत पानी खारे समुद्रों में भरा पड़ा है। शेष तीन प्रतिशत धरती में तीन मील गहराई पर जल स्रोतों के रूप में, सात मील ऊपर तक भाप के रूप में, और पर्वत शिखर और ध्रुव प्रदेशों में वर्फ के रूप में, बिखरा पड़ा है। जलाशय अपने में मौसम को गर्मी और ठंडक सोख लेते हैं, रात में जब ठंड बढ़ती है, तो अपनी गर्मी और दिन में जब गर्मी बढ़ती हैं फिर अपनी ठंड बिखेरते हैं। इससे बड़े जलाशयों के समीपवर्ती क्षेत्रों में सहने योग्य ताप्मान बना रहता है, इसके विपरीत जहाँ जलाशय नहीं होते वहाँ दिन में गर्मी और रात में सर्दी बढ़ी

हुई होती है। पानी की विलक्षणता यह है कि वह जमने पर फैलता है, जबकि अन्य सभी पदार्थ जमने पर सिकुड़ते हैं।

आंन्तरिक शान्ति मनुष्य को बर्फ जैसा ठोस और शीत बनाती है। शान्त प्रेमी हल्के होते हैं, बर्फ की तरह ऊपर रहते हैं, और नीचे वाले की सुरक्षा में स्वयं ही गलते घुलते रहते हैं, यही शुभ प्रताप हमारे शरीर को भी प्रदान हुआ है। हम ज्योंही गुस्से में होते हैं, अशान्त होते हैं, पानी का गिलास पीने से दुःख भी कम पड़ जाता है, व्याकुलता भी ठंडी हो जाती है, और सर दर्द भी कुछ थम जाता है। यह शरीर हमारे लिए भी पानी का वरदान लिये हुए इसी मात्रा में हमारे जीवन का संतुलन कायम रखता है।

हमारे एक-एक कलपुर्जों के क्या कहने ? हमारा आमाशय तो बहुत ही निकटस्थ सम्बन्धी है। इसमें दो महत्वपूर्ण पाचक रस स्रवित होते रहते हैं, एक हाईड्रोक्लोरिक एसिड दूसरा पैप्सीन, यह रस काफी तेज है, भोजन को वही पचाते हैं, पर यह आश्चर्य समझना चाहिए कि वे आमाशय को नहीं पचा डालते, कारण यह है, कि अमाशय और ग्रहणी दीवारों पर मखमली अस्तर चढ़ा रहता है, जो पाचक रसों और अमाशय की दिवारों को आपस में घुलने मिलने नहीं देता।" अमाशय वे मखमली अस्तर में प्रायः दस अरब अम्ल-स्रावी-कोशिकाएँ होती हैं। ये एक दिन रात में दो हजार घन सेंटीमीटर पाचक रसों का स्राव करती हैं। कुछ व्यक्तियों की कोशिकाएँ बढ़ कर दुगनी तक हो जाती हैं, और अधिक रस स्रवित करती हैं। ऐसे लोगों को पौष्टिक अल्सर हो जाता है। अधिक तले हुए चटपटे पदार्थ अधिक भाग में खाते रहने से आमशय को कुछ रस-ग्रन्थियाँ सूख जाती हैं, और उसमें इन्सोंलीन जैसे उपयोगी रस बनना बंद हो जाते है, जो मधुमय का मूल कारण है।

सारे शरीर में रक्त की एक परिक्रमा प्रायः डेढ़ मिनट में पूरी हो जाती है। हृदय और फेफड़े के बीच की दूरी पार करने, उसे मात्र ६ सेकिन्ड लगते हैं, जबकि उसे मस्तिष्क तक पहुंचने में आठ सैकिंड लग जाते हैं।

रक्त प्रवाह रुक जाने पर हृदय भी पाँच मिनट जी लेता है पर मस्तिष्क तीन मिनट में ही बुझ जाता है। औसत दर्जे के मनुष्य शरीर में ५ से ६ लीटर तक का रक्त रहता हैं। इसमें ५ लीटर तो निरन्तर गतिशील रहता है, और एक लीटर आपत्तकालीन समय के लिए सुरक्षित रहता है, २४ घन्टे में हृदय को १३ हजार लीटर रक्त का आयात निर्यात करना पड़ जाता है, दस वर्ष में इतना रक्त फैंका समेटा जाता है, कि यदि इसे एक बार इकट्ठा कर लिया जाए तो उसे ४०० फुट घेरे की ८० मंजिली टंकी में भरा जा सकेगा।

इतना श्रम यदि एक बार ही करना पड़े तो उसमें इतनीं शक्ति लगानी पड़ेगी, जितनी कि १० टन बोझ जमीन से ८० हजार फुट तक उठा ले जाने में लगानी पड़ेगी। शरीर में जो तापमान रहता है उसका कारण रक्त प्रवाह के कारण उत्पन्न होने वाली उष्मा ही है। सब मनुष्यों का रक्त एक जैसा नहीं होता। इनकी रसायनिक भिन्नता, पृथीकरण, कर दी गई है। जिससे डा० लोग कमी और बेशी की संभाल करके उपचार की क्रिया अपनाते हैं।

शरीर में दो प्रकार के – लाल और श्वेत कणिकाएँ पायी जाती हैं, लाल कण शरीर के प्रत्येक अंग तन्तु और कोष को आहार एवं आक्सीजन पहुंचाते हैं। मलरूप निकली कार्बनडाइ ऑक्साइड गैस को ढ़ोकर, फेफड़ों' तक ले जाते हैं, जहां से सांस

द्वारा उसे बाहर निकाला जाता है ! सफेद कण वस्तुतः कोषाणु हैं, इनकी संख्या कम ही होती है—६५० लाल कणों के पीछे एक ! इन्हें शत्रुरोगाणुओं से लड़ने वाले सैनिक कहा जा सकता हैं, शरीर के किसी भाग में यदि रोग कीट हमला कर दें, तो ये श्वेत कण उससे लड़ने को तत्काल जा पहुंचते हैं आवश्यकता के समय उनमें अपनी जाति वृद्धि कर लेने की क्षमता होती है। साधारणता प्रति घन मिली मिटर रक्त में ५ से दस हजार तक श्वेत कण होते हैं। लाल रक्त कण इतने छोटे होते हैं, कि वे तीन हजार की संख्या में यदि सीधे एक लाइन में रख दिये जायें, तो एक इंच से भी कम लम्बाई होगी।

युवा मनुष्य के शरीर में २५००००००००००००० लाल रक्त कण होते हैं, वे चार महीने जीवित रहकर कर मर जाते हैं, और उनका स्थान लेने के लिए नये पैदा हो जाते हैं। रक्त की चाल धमनियों में प्रति घन्टा ६५ कि० मीटर है, लाल रक्त कणिकाएँ प्रायः चार महीने में लगभग १५०० चक्कर सारे शरीर में लगा देने के बाद बूढ़ी होकर मर जाती हैं। हमारा छोटा-सा शरीर वस्तुतः बहुत बड़ा है एक पूरी पृथ्वी के बराबर जीवधारी उसमें रहते हैं। इसलिए उसकी व्यवस्था कर्मचारियों की संख्या भी लगभग उसी अनुपात में रहती है, इन २५०० करोड़ लाल रक्त कणों को यदि एक सीधी पंक्ति में सटा कर बिठा दिया जाय, तो इतना छोटा आकार रहते हुए भी वे इतनी बड़ी लाइन में होंगे जो समस्त पृथ्वी की चार बार परिक्रमा कर सकें। लाल कणों के अतिरिक्त शेष कर्मचारियों में एक करोड़ बीस लाख श्वेत रक्ताणु और ५० लाख लाल रक्त विम्बाणु और रहते हैं।

एक बूंद में प्रायः ११ हजार श्वेत कण होते है। बीमारियां तभी प्रकट होती हैं जब ये श्वेतकण रोगाणुओं से हारते हैं,

यही कारण है, कि डा० लोग किसी रोगी को वही रक्त चढ़ाते हैं, जो उसके अपने रक्त कणों का सजातीय हो। अंगों का आरोपण करते समय, इन श्वेत कणों को मूर्छित करने की औषधियां देकर चुप करा दिया जाता हैं। एक बूंद खून में इन विम्बाणु की संख्या तीन लाख के करीब होती है, और ये प्रायः दस घन्टे ही जीवित रहते हैं। ये आंकड़े अपने में ही अकड़े हुए लाखों और करोड़ों की संख्या में हमारी स्तुति का योग्य पाठ प्रस्तुत करते हैं। ईश्वर का लाख धन्यवाद है। कि इन रोग किटाणु से भरे शत्रुओं के चक्रव्यूह में आत्म रक्षा करने के लिए हमें श्वेत कणों की सुदृढ़ सेना दी है। किसी प्रकार की डाकटरी का प्रदर्शन न करता हुआ मुझे तो अपने मुख्यपात्र शरीर की व्याख्या में अपने को चकाचौंध करने की बात करनी है।

अब जरा दूसरों से नहीं अपने से अपना कान खड़ा करने का व्ययाम लें। शब्द या ध्वनियां हर एक व्यक्ति को प्रभावित करती हैं। कानों की जो झिल्ली आवाज पकड़ मस्तिष्क तक पहुंचती हैं, उसकी मोटाई एक इंच के ढाई हजारवें हिस्से के बराबर है, फिर भी वो कोई चार लाख प्रकार के शब्द भेद पहचान सकती है, और उसका अन्तर कर सकती है। अपनी गाय को या मोटर की अवाज को हम अलग से पहचान लेते है, यद्यपि लगभग वैसी ही आवाज दूसरी गायों की या मोटरों की होती हैं। पर जो थोड़ा सभी अन्तर उनमें रहता है, अपने कान के लिए उतने से ही अन्तर कर सकना और पहचान सकने का सौभाग्य बनता हैं।

कितनी दूर से किस दिशा से किस मनुष्य की आवाज आ रही है, यह पहचानने में हमें कुछ कठिनाई नहीं होती, ये

कान की सूक्ष्म संवेदन शीलता का ही चमत्कार है। कान जैसा कोई इल्कट्रोनिक मनुष्य द्वारा बन सकना सम्भव नहीं हो सका है।

क्योंकि कान में ऐसी संवेदन शील झिल्ली लगाई गई है जिसकी मोटाई एक इंच का २५०० विलियन (एक विलियन बराबर दस लाख) है। सुनने के प्रयोजन में काम आने वाले मानव-निर्मित-यन्त्रों की तुलना में कान लगभग चार लाख प्रकार की आवाज पहचान सकते हैं, और उनके भेद प्रभेद का परिचय प्राप्त कर सकते हैं। सौ वाद्य यन्त्रों के समन्वय से बजने वाला अगरकैस्ट्रा सुन कर, उनसे निकलने वाली ध्वनियों का विश्लेषण करने वाले कान, कितने ही संगीतज्ञों के देखे गये हैं। कहते हैं कि पृथ्वीराज चौहान ने घन्टे पर पड़ी हुई चोट को सुनकर उसकी दूरी की सही स्थिति विदित कर ली थी।

शब्द विज्ञान आज बहुत बढ़ता जा रहा है। ध्वनि और प्रकाश दो ऐसे जुड़े हुए सम्बन्धी हैं, जिनके आधार पर स्थूल को सूक्ष्म और सूक्ष्म को स्थूल में परिवर्तित किया जा रहा है। अन्तरिक्ष में विविध स्तर के ध्वनि कम्पन निरन्तर गतिशील रहते हैं। ये सब वातावरण हम आज के वैज्ञानिक युग में रेडियो, टी. वी. इत्यादि के द्वारा आए रोज दृष्टिगोचर करते हैं। संगीत का शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य पर जो असाधारण प्रभाव पड़ता है, वो भी हमारे कानों की प्रशंसा में एक विशेषता रखता है। विज्ञान जितना बढ़ता जा रहा है, हमें भी मस्तिष्क उसी अनुकम्पा से बढ़ाना पड़ता है।

एक क्षण में किसी का रोग अच्छा कर देना, एक पल में करोड़ों मील की बात जान लेना, एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र की जानकारी, और शरीर की ७२ हजार नाड़ियों के एक एक

जोड़ की जानकारी, यन्त्र की आलौकिक शक्ति है। यह यन्त्र यह कान अन्दर और वाहर की शक्तियों का सम्बन्ध हमारी अद्भुत क्रिया कलाप का विषय बनता है। नियत गति से शीशे के गिलास के पास ध्वनि की जाय तो वह टूट जायेगा। पुलों पर चलते हुए सैनिकों को कदम मिला कर चलने की ध्वनि नहीं करने दी जाती। ये और विलक्षणता हमारे इन अंगों से सम्बन्ध रखती है। उस ताल बद्ध ध्वनि से पुल गिर सकता है! यह युक्ति अलंकार नहीं वरन यथार्थ है कान की झिल्ली खराव हो जाने पर संसार से समस्त स्वर शब्दों का अन्त हो जाता है। शब्द को ब्रह्म कहा गया है।

'क्रियेटिव एवोल्यूशन' के रचयिता ने इस बात पर अत्यन्त विस्मय प्रगट किया है कि नेत्र के गोलक की संचरना अत्याधिक जटिलताओं के द्वारा बनी है। साथ उनके द्वारा प्रकाश तरंगों को ग्रहण करके मस्तिष्क तक उन संवेदनाओं को पहुंचाने की क्रिया और भी अधिक पेचीदी है। इतने पर भी दृष्टिकार्य अत्याधिक सरल है जो कुछ देखा जाता है उसके स्वरूप को मस्तिष्क क्षण भर में पकड़ लेता है, इतनी लम्बी और इतनी जटिलताओं के बीच घूमती हुई दृष्टि प्रक्रिया इतनी अधिक सरलता पूर्वक गतिशील रह सकती है, इसका जितनी गम्भीरता से विचार करें, थोड़ा है।

आंख जैसा कैमरा मनुष्य द्वारा कभी वन सकेगा? कैमरों में नाभ्यान्तर-फोक्ल लेन्स को वदला जा सके, ऐसे कैमरे कभी नहीं वने। नेत्र संरचना में कोई फोक्स वनाने का प्रश्न ही नहीं वनता ये निकट से निकट, दूर से दूर को भी विना आगे पीछे हिलाए मजे में देखते रह सकते हैं। कैमरे पहले उल्टा फोटो लेते हैं फिर दुबारा प्रिंट करके उन्हें सीधा करना पड़ता है किन्तु

आँखें पहली बार में ही सीधा फोटो ले लेने में समर्थ हैं। नेत्र के पर्दे सबसे सूक्ष्म बनाए गए हैं, इनका प्रकाश से गहरा सम्बन्ध है। पलकें नेत्रों की परम सुरक्षा साथी हैं। आँखों का अपना जल, इन में पड़ी गन्दगी एवं कीटाणुओं को नष्ट करने में सक्षम है। परमपिता का ऐसा आशीर्वाद है कि रात-रात में यह धुलकर दूसरी प्रातः के लिए उजली तथा सशक्त हो जाती हैं। फोटो खिचते चले जाते हैं, सुरक्षा केन्द्र में इन्हें अपना स्थान मिलता जाता है। किसी समय में, किसी काल की किसी घटना का चित्र बिना उलट पलट किए स्मर्ण पटल पर नई ताजगी से प्रत्यक्ष हो जाता है। सबसे बड़ी बात समय की है, आनन-फानन नेत्र अपनी सेवा प्रस्तुत करने में सार्थकता से हरकत लेते हैं। जिसमें भूलचूक का प्रश्न कमोबश बनता है। अत्यन्त सूक्षम यंत्र मानव का भगवान ने नेत्र प्रदान किए हैं। नेत्र उतना प्रकाश धारण कर सकते हैं जो इनकी क्षमता के अनुकूल होता है! यह चमत्कार स्वयं में विस्मयपूर्ण है।

आध्यात्म शास्त्र में सात लोकों का वर्णन है, इन्हें 'भू' लोक, 'भुवा' लोक, 'तप' लोक, 'जन' लोक, और 'सत्' लोक कहा गया है। यह कोई नक्षत्र या ग्रह नहीं, ये लोक हमारे अपने ही अन्दर विद्यमान हैं, वे एक के भीतर एक पिरोये-समाये हुए हैं, शरीर एक, एक शरीर के भीतर अवयव, अवयवों के भीतर मांसपेशियां, मांसपेशियों के भीतर ज्ञान तन्तु, ज्ञान तन्तुओं के भीतर मस्तिष्कीय विद्यु त, ये कई परतें तो हैं। सात लोकों के सम्बन्ध में भी यही समझा जाना चाहिए कि सात लोकों के भीतर उनकी सत्र सूक्ष्म से सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और अतिसूक्ष्म होती चली गई हैं! स्थान उन सब का वही है, जिसमें कि हम निवास करते हैं, ब्रह्माण्ड के भीतर, ब्रह्माण्ड की परिक्रिया उसी प्रकार समझी जा सकती है, जिस प्रकार परमाणुओं क मध्यवर्ती नाभिक

क अन्तर्गत को खोलने पर, उसके भीतर भी अतिसूक्ष्म परन्तु अपने से विशाल ब्रह्माण्ड का प्रतिनिधित्व करने वाला, ब्रह्म बीज विद्यमान मिलता है। मोटे तौर पर इन सात लोकों को सात शरीर कहते हुए, सप्त धातुएं भी कह सकते हैं—रस, रक्त, मांस, अस्थि, मज्जा, शुक्र धातुएं। चेतना शरीर भी इसी प्रकार से सात शरीरों से मिलकर बना है, वे भी एक के भीतर एक, एक ही क्रम से स्थापित हैं, योग शास्त्र में इन्हें चक्रों का नाम दिया गया है, छः चक्र और सातवाँ सहस्त्रार। छः चक्रों के नाम—(१) मूलाधार (२) स्वधिष्ठान चक्र, (३) मणिपूर चक्र, (४) अनाहत चक्र, (५) विशुद्ध चक्र, (६) आज्ञा चक्र सातवाँ लोक सत्य लोक है! सत्य अर्थात पूर्ण परमात्मा! शरीर में छः धातुएं प्रसिद्ध हैं। सातवीं ओजस्व तो आत्मा की ऊर्जा मात्र है! इसी प्रकार साधना में प्रयुक्त होने वाले चक्र तो छः ही हैं, सातवाँ तो ब्रह्म लोक है, जिसमें लय होने की बात है।

सात या छः के भेदभाव को इस प्रकार समझा जा सकता ह, कि अपने स्थान से अमुक देवालय सात मील है, बीच में छः मील के पत्थर और सातवां मील पत्थर प्रत्यय देवालय है।

मनुष्य के सात शरीरों का वर्णन, तत्व मनीषियों ने यूं किया है, स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर, मानस शरीर, आत्मिक शरीर, देव शरीर, और ब्रह्म शरीर। ये सात आसमानों की कथा, सात लोकों की गूँज, सात ऋषियों की यज्ञशाला, यह पुण्य शब्द सात बड़ी समझ विस्तार और जानबूझ का विषय वनता है।

अवतार साथ भी, मौलिक इसी गणना से चलते हैं। अन्तिम विराम सातवें शरीर में पाया गया है। जहाँ शुभ इच्छा

के अतिरक्त, सद्भावना के विपरीत और आत्म समर्पण के अलावा कुछ बचता ही नहीं । यहाँ पर प्राय: दोष-शत्रु तो कोई रहता नहीं ! दोष अपराधों को वे बालबुद्धि मानते हैं और द्वेष दण्ड के स्थान पर करुणा और सुधार की बात पर सोचते हैं ।

हमारा जीवन स्वयं एक क्रम है, सात सीढ़ियाँ चढ़ कर मानव अपने मनुष्य जीवन को सत्कृत करता है ।

सारे शरीर भर में सात ग्रुपों की बड़ी माया है। संगीत के भी तो सात स्वर हैं । मेरुदण्ड वस्तुत: वीणा दण्ड है, सात धातुओं के सार इसमें जुड़े हैं, सप्त विधि, अग्नियों का पाचन, परिपाक चलते रहने से ही तो प्राण को पोषण मिलता है, और जीवन को स्थिर रखा जाता है, ये अग्नियाँ सात धातुओं को पकाती हैं, और परिपाक को तेजस् में बदलती हैं । (१) पेशियों का आकुंचन प्रकुंचन, (२) नाड़ियों का रक्ताभिरण, (३) फफुसों का श्वास परिश्वास, (४) हृदय की धड़कन, (५) मस्तिष्कीय विद्युत का ऋण धन आरोह अवरोह, (६) चित्त का विश्राम जागरण, (७) कोशिकाओं का जन्म-मरण यह सात क्रिया कलाप ही जीवन-विद्या के मूलभूत आधार हैं । इन्हीं को सप्त-ऋषि, सप्तलोक, सप्तद्वीप, सप्त सागर, सप्तमेरु, सप्त सरित, सप्तशक्ति के नाम से पुकारते हैं ।

शब्द सूर्य के भी यही सत्त अश्व हैं । स्वर सप्तक इन्हीं के प्रत्यक्ष अनुभूति हैं । तो ये सात लोक मानव की प्रगति के सात विशेष भाग व रूपरेखा बनते हैं ।

मानव शरीर मस्तिष्क और हृदय दो विशेष देवता माने गये हैं । जहाँ मस्तिष्क की अद्भुत लीला के वर्णन में हमने एक

एक भेंट भर लगा दी वहाँ हृदय की एक विशाल लीला का सूत्रपात है।

हृदय की धड़कन में सिकुड़ने का और फैलने की जो क्रिया होती रहती है, इसी क्रिया के कारण रक्त संचार होता है और समस्त क्रिया कलाप चलते हैं। यहीं प्रवाह नदी नाले की तरह नहीं चलता, वरन पम्पिग स्टेशन जैसी विशिष्टता से काम करता है, पम्प में झटका मारने की क्रिया होती है, उससे, गति मिलती है, नीचे की दिशा में तो प्रवाह अपने आप होता है, पर ऊपर की ओर ले जाना हो, तो उसमें शक्ति का दबाव होना आवश्यक है, आकुंचन प्रकुंचन से झटका लगता है। आकुंचन प्रकुंचन द्वारा जहाँ शक्ति उत्पादन की आवश्यकता पूरी होती है, वहाँ इन दोनों क्रियाओं के बीच मध्यान्तर की अवधि में, विश्राम का लाभ भी उसे मिलता है। एक धड़कन एक मिन्ट के ७२ वें भाग में सैंकिड के $\frac{5}{6}$ भाग में सम्पन्न होती हैं।

इस अल्प अवधि में ही असंख्य विद्युत तरंगें उस संस्थान से प्रवाहित होती है। नवजात शिशु की प्रगति आवश्यकता के अनुरूप उन दिनों हृदय एक मिन्ट में १४० बार धड़कता है, किन्तु जरूरत कम होते जाने से ये चाल भी घटती है, तीन वर्ष के वच्चे का १ मिन्ट में १०० बार और युवा मनुष्य का मात्र ७२ बार धड़कता है। चूहे का हृदय ५०० बार, चिड़ियों का २५०, मुर्गी का २०० बार, खरगोश का ६५ बार, घोड़े का ५० बार, हाथी का ४० बार एक मिन्ट में हृदय धड़कता है।

पुरुष के हृदय का औसत वजन ३३० ग्राम और स्त्री का २६० ग्राम होता है। हृदय एक होते हुए भी उसके मध्य भाग में खड़ी सेप्टम नामक मांस पेशी उसे दो भागों में बांट देती है,

ये दो भाग भी दो-दो हिस्सों में बंट कर चार हो जाते हैं, जिनका कार्य अपने स्थान पर बंटा हुआ चलता है।

हृदय के समान ही अपितु उससे सम्बन्धित फेफड़े आजीवन कभी विश्राम नहीं करते। २० से ३० घन इंच हवा को वे बार-बार भरने और सारे शरीर को ताजगी प्रदान करते रहते हैं। बच्चों की श्वास गति २५ से ४० तक होती है। यथा ये उसका विकास काल होता है। फेफड़ों में आँख भी न दीख सकने वाली बहुत पतली वायुनलिकाएं बहती हैं, इन ४० नलिकाओं के मिलने से एक वायु कोष्ठ बनता है।

यही सघन होकर फेफड़े का रूप लेते हैं। इनकी सख्या प्राय: १६०० होती हैं। इन वायु कोष्ठों में लचक एक विशेषता है, इन्हें पूरी तरह फूलने का अवसर मिले, तो वह समूचे शरीर से ५५ गुने विस्तार से फैल सकते हैं। इन्हें श्वास के सफाई कर्मचारी भी कहा जा सकता है। यह परम सत्य है कि शक्ति प्राप्त करने विषाक्तता निकालने के अनुपात बढ़ जाये, तो उससे आरोग्य वृद्धि में अत्याधिक लाभ मिलेगा। प्रति मिन्ट वे १७ बार के हिसाब ने धौंकनी धौंकते हैं। भगवान की लीला बड़ी विचित्र है, जिस अनुपात से गहरी श्वास के द्वारा ऑक्सीजन अधिक ग्रहण की जा सकती है, उसी प्रकार कार्बन डाई आक्साइड को भी ४.५% के स्थान पर १३.५ के अनुपात से बाहर निकाला जा सकता है। यही लेखा-जोखा हम योगाभ्यास तथा प्राण शक्ति की भेंट में अधिक ध्यानपूर्वक पढ़ सकेंगे।

इस लेन-देन में त्वचा अपना भाग लेती है। शरीर को एयरकन्डीशन बनाये रखने के लिए त्वचा फैलने और सिकुड़ने की क्रिया का प्रयोजन पूरा करती है। त्वचा के बिखरे ज्ञान-तन्तुओं को यदि एक लाईन में रख दिया जाय, तो वे ४५ मील

लम्बे होंगे। त्वचा से कोरियम नामक एक विशेष प्रकार का तैल निकलता रहता है, ये सुरक्षा व सौन्दर्य वृद्धि के दोनों ही कार्यकर्त्ता हैं। उसकी व्यंजक कोशिकाएँ नेलानिक रसायन उत्पन्न करती हैं, यही चमड़ी को गोरे-काले पीले रंगों से रंगता है। तभी तो कहा कि शरीर पूरा जादूघर है।

इस कल कारखाने से एक नया सूत्र मिलता है, "भाग रे भाग शरीर में आग" ये शरीर माटी का पुतला अब बदल चुका है। शरीर के सूक्ष्म आग्नेय स्फुलिङ्ग, जिनसे आत्यचेतना बनती है अपनी नयी महत्वपूर्ण लीला का वर्णन मात्र है। अब तो देश-विदेश में अनेक व्यक्तियों के विद्युत प्रभाव, विद्युत धारण के अनूठे दृष्टान्त मिलते जा रहे हैं। कई बार ये विद्युत अग्नि इतनी प्रचंड रूप में जाग्रत हुई है, कि वह स्वयं धारक को ही ले बैठी। लंदन के सुप्रसिद्ध स्नायु रोग विशेषज्ञ डा० जौन० एस० क्राफ्ट ने एक ग्यारह वर्षीय किशोरी कन्या जैमी भार्गन में असाधारण विद्युत शक्ति की पूरी परीक्षा की। उन्होंने स्वीकार किया कि इस लड़की के शरीर में हजारों वोल्ट विद्युत प्रभार से कम शक्ति नहीं हैं। अमरीका में अब तक ऐसी दो सौ मौतें हो चुकी हैं। चेम्सफोर्ड इंग्लैंड में २० सितम्बर १९३८ को एक ऐसी ही घटना घटी। भारत वर्ष की तरह जापान भी धार्मिक आस्थाओं का केन्द्र होने से अपने मध्य इस प्रकार की विद्युत धारणा के अनेक दृष्टान्त पेश कर रहा है। एक घटना के माध्यम से जापानी वैज्ञानिकों ने ये निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है, कि शरीर में विद्युत की उत्पति का कारण ज्ञात नहीं किन्तु जिनमें भी असमान्य स्थिति पायी गई, उनके मनो-विश्लेषण से पता चलता है, कि ऐसे व्यक्ति या तो जन्स जात

अध्यात्मिक प्रकृति के थे, या कालान्तर में उनमें विलक्षण अतीन्द्र क्षमताओं का भी विकास हो जाता है। मानवीय विद्युत इस जगत की एक प्रचंडतम ऊर्जा मानी गई है। हम अपने यहाँ तो सुनते ही थे कि ऋषियों के आश्रम में सिंह और गाय प्रेम पूर्वक निवास करते थे। निःसन्देह मनुष्य एक जीता जागता बिजली घर है। इनके प्रतिपादनों के अनुसार ज्ञान तन्तु एक प्रकार विद्युत सेवाही तार हैं, जिनमें निरन्तर बिजली दौड़ती रहती है। पूरे शरीर से इन धागों का समेट कर यदि इक लाइन मैं रखा जाय तो उनकी लम्बाई एक लाख मील से भी अधिक बैठेगी। शरीर के एक अवयव मस्तिष्क का स्वतन्त्र रूप विश्लेषण करें तो उसमें लगभग दस अरब नस कोष्ट नयूरान हैं, उनमें से हर एक का सम्पर्क लगभग २५००० अन्य नस कोष्ठों के साथ रहता है। भिन्न देशों के अनेक वेज्ञानिक इस ओर अपनी छान-बीन बढ़ा रहे हैं। जीव शास्त्री तो अब ये कहने लग रहे हैं, कि विचार शक्ति से वस्तुओं को प्रभावित एवं परिचालित करने की सामर्थ भी होती हैं, जिसकी पीट पर अन्तर अग्नि या अन्तर विद्युत हो एक मात्र कारण माना गया है यह सारी बातें पारस्परिक सम्बन्धित है, ओर हमारी मुख्य अपील और दलील, कि सच्चे भगवान की सच्ची स्तुति, हमारे लिए एक बड़ा वरदान बनती है। भला हो इन विज्ञानकों का जो हमारी आस्तिकता में अपरा शुभ योगदान देकर मानवता का सच्चा उपकार करते हैं।

यूं तो किस २ कल पुर्जे की देखभाल करें यहाँ तो सारी की सारी व्यवस्था कौतूहल पूर्ण है फिर भी यथाशक्ति नई से नई जानबूझ परखने की इच्छा तो होती है, जिह्वा को ही लें

यूं तो इसे उच्चारण तंत्र कहते हैं, पर है यह दुहरी इन्द्रिय जो ज्ञान भी देती है, कार्य भी करती है। कमाल की बात यह हैं कि शरीर की आन्तरिक स्थिति को भी अपनी छाती पर लिख कर बता देती है। जीभ की ऊपरी सतह पर स्वाद कलिकाओं का क्रमबद्ध व्यूह रचना होती है। सूक्ष्म रोमों के रूप में, छोटे बड़े ऊँचे-नीचे आगे-पीछे तथा अगल बगल में छाए हुए इन रोगों की अंकुरक (पेपिली) कहते हैं। जीभ की नोक पर इनमें से कुछ संकरे कुछ उभरे भी रहते हैं, वहां इन्हें सूत्री अंकुरक कहते हैं। अन्य स्वाद कलिकाओं में से कुछ टोपीदार और कुछ कुकुरमुते जैसी उठी रहती हैं।

अंसख्य कोशिकाओं युक्त एपीथेलियम जीभ की ऊपरी सतह को ढ़के रहती है उसी में भिन्न स्वादकलिकाएँ रहती हैं। कुशल चिकित्सक रोगी की योग्य जाँच पड़ताल के लिए जीभ की अवस्था की जरूर दृष्टि लेता है। यह भी सत्य है कि प्रकति ने जीभ में यह व्यस्था केवल इसलिए कर रखी है कि मनुष्य को आहार की उपयोगियता अनुभव रहे, जितना मानव भोजन में रुचि लेगा उतना वह संतुष्ट तथा सुख का उपभोग करेगा। स्वाद कलिकाओं की संख्या में मनुष्य की आयु के साथ परिवर्तन होता रहता है। बाल्यावस्था में यह संख्या सैकड़ों तक की होती हैं, जबकि प्रौढ़ अवस्था में केवल ७०-८० तक रह जाती है। न्यूयार्क के डाक्टर जान डब्लयू टिनटेरा का कथन है कि अमेरिकी पागलखानों में ८० प्रतिशत रोगियों को मस्तिष्कीय रोग नहीं होता अपितु रक्त म शर्करा की अल्पता होती है जो कि गलत खान पान से बनता है। रक्त में शर्करा की कभी की स्थिति अत्यधिक चीजें खाने से होती है। सामान्यत: एक व्यक्ति आधे से एक औंस नमक रोज खा जाता है। इसी अनुपात से जब चूहों को नमक खिलाया गया तो उनके रक्तचाप बढ़ गया।

यदि स्वाद ही प्रकृति का मुख्य उद्देश्य रहा होता तो शरीर इन स्वादों के प्रति इतनी कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्तन करता, मीठा खाने से जीभ पर फीकापन, कड़ुआहट से अरुचि, खट्टे से ऊब्र, खारे से मितली, जीभ पर न पैदा होती। कयाकमाल कि जीभ इन स्वादों को चखते ही सूचित कर देती है कि गलत चीज आ रही है तथा हमें स्वास्थ्य के लिए सावधानता, जीभ का मुख्य लक्षण तथा उपकार बनता है।

———

भेंट सोलहवीं

न्यूयार्क की एक अदालत में, नगर के एक ही दम्पत्ति ने अलग-२ मुकदमे दायर किये, पति ने पत्नी पर, और पत्नी नें पति पर लांछन लगाकर परस्पर सम्बन्ध विच्छेद की अभि-याचनाएँ प्रस्तुत कीं। एक दूसरे पर लगाये गये अभियोग सच रहे या झूठ, इनसे एक बात निर्विवाद सी थी, कि उनमें पारस्परिक स्नेह और आत्मीयता लुप्त हो गयी थी। विद्वान न्यायधीश ने सजा सुनाते हुए कहा—"आप दोनों एक वर्ष तक चिड़ियाघर में जानवरों के बीच रहिऐ ताकि आप लोगों को यह बात ज्ञात हो जाये कि पारस्परिक प्रेम और पारिवारिक जीवन क्या होता है।" हमने अपने बारे में—सूर्य देवता और मानव शरीर के सौर मंडल तथा स्वयं शरीर के विषय में कुछ न कुछ देख ही लिया है। मुझे तो न्यायधीश के एक संदेश मात्र से वास्ता है, कि पशु पक्षी भी, जिन्हें हम घटिया समझते हैं, हमारे लिए बड़े ज्ञान का स्रोत हैं, अर्थात् हमारे ईद गिर्द घूमने वाले, हमारी ही सेवा में रत हमारे ये सहचर हम से कम नहीं अपितु हमें शिक्षा देने वाले बनते हैं।

डा० इराउल्फेट ने अन्टार्टिक प्रदेश की यात्रा में बड़े रोचक वर्णन प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने इडला (पैन्गुइन) पक्षी के पारिवारिक सौहार्द का चित्रण करते हुए बताया है, कि यह पक्षी समुद्र में रहता है, दक्षिण ध्रुव प्रदेश होने के कारण वहां

का समुद्र आठ-आठ फीट मोटी चदरों से ढ़का रहता है, जहाँ यह पक्षी तीस मील प्रति घन्टे की गति से चल सकता है, अण्डे देने और बच्चे सेने के लिए, यह पक्षी गोल पत्थरों से एक बिलक्षण घौंसला बनाता है, जिसे 'रूकरी' कहते हैं, आदा कोजब अण्डे देने होते हैं, वह इसी रुकरी मैंचली जाती हैं। नर "एडीली" (पैन्इगुइन) को इसका अनुमान रहता है, जबकि वो स्वयं ठीक समय पर मादा के पास पहुंच जाता है, प्रसव काल के लिए मादा कीक्षुधा मिटाने के साधन प्रस्तुत करता है। जब परिवार का कोई सदस्य आता है, भेजमान नर पक्षी अपने स्थान से उछल कर आगे बढ़ता, चोंच और गर्दन हिलाता, तथा गा गा गा शब्द द्वारा उसका स्वागत करता है। इस नर पक्षी को कई बार छह सप्ताह तक, बिना आहार अपने बच्चों के पोषण और सुरक्षा में बिताने पड़ते हैं, इससे यह सिद्ध होता है कि जीव जन्तुओं में कई गुना अधिक सहिष्णुता तथा स्नेह भरा होता हैं।'

सीमर जीव जब अपने शरीर की सफाई करता है, तो उसके बहुत से बाल दांतों में फंस जाते हैं। उस बेचारे को जिदगी भर उस पेरेशानी का सामना करना पड़ता है। परन्तु रचयिता ने उसके जीभ के नीचे दूसरी कंघीनुमा जीभ लगाई हुई होती है, जिससे वो अपनी सफ़ाई कर पाता है। और हर प्रकार की सम्भव परेशानी से मुक्ति लेता है।

धोंघे को अपना आहार खोज कर खाना होता है; इसलिए उसकी जीभ में प्रकृति ने दांत लगाये होते हैं, इन दांतों की संख्या १२ से १४ हजार तक होती है। इन दांतों द्वारा कुरेद २ कर अपने साधन इकठ्ठे करता रहता है ताकि उदर पूर्ति कर सके।

ह्वेल सौ फुट लम्बी, वजन १२५ टन, जिसके शरीर में ३५ टन चर्बी और ७० टन मांस होता है। यदि इसे हाथियों से तोला जाये तो दूसरे पलड़े पर २० से २५ हाथी चढ़ाए जायें। अकेले उसकी जीभ ३ टन और हृदय २ मन वजन का होता है। जो ८ टन खून की नियमित सफाई में दिन रात लगा रहता है, जिसके लिए उसके फेफड़े एक बार में १४ हजार लीटर वायु खींचते हैं। नवजात शिशु का वजन ३ टन होता है और उसकी वृद्धि एक क्विटल प्रतिदिन के हिसाब से होती है। परमात्मा के सर्वोपरी कलाकार होने के प्रमाण में इस मछली की सत्ता एक अद्‌भुत लीला बताती है।

वीटल कीटक की आँखों पर प्रकृति ने एक चश्मा चढ़ा दिया है; ऊपर की आंखों से वो हवा में देखता है, परन्तु जब वो पानी में चला जाता है, तब वह नीचे की आंखों से देखने लगता है।

एलेक्ट्रिक-रे या टारपीडो फिशका विद्‌युत भागपीठ पर होता है। यूनान के एक जीव विज्ञानी ने बताया है कि एक लड़का त्रिशूल मछलियों का शिकार करता था ! एक दिन उसने अपना निशाना उस मछली को बनाया परन्तु त्रिशूल ने जैसे ही मछली का स्पर्श किया, उसे अचानक झटका लगा और वो पानी में जा गिरा। विद्‌युत शॉक के कारण उसे कई घन्टों बाद होश आया।

सात आठ फुट लम्बा २॥-३ मन वजन का शुतुर्मुर्ग बालू में सिर घुसेड़ लेने की मूर्खता के लिए ही विख्यात नहीं पर उसके तेज दौड़ने की गति भी बड़ी प्रसिद्ध है, जो कि साठ मील प्रति घन्टा को है इसकी चोंच का प्रहार इतना तीक्ष्ण होता है कि लोहे की चद्दर में भी छेद हो जाता है। इतने भारी वजन का शुतुर्मुर्ग इतनी स्पीड से भाग सकता है यह भी विलक्षण बातहै।

संरचना की दृष्टि से एक मक्खी भी मनुष्य से कम रहस्य-पूर्ण नहीं ! मक्खी जहां बैठी वहां एक विशेष सराव होता है और उसके कारण उस स्थान की भोजन सामग्री को वह पैरों से चूस कर सारे शरीर में पहुंचा लेती है, उसकी आंखें विलक्षण होती हैं, यद्यपि हम इसे मार डालने में बड़े उत्सुक रहते हैं, परन्तु पृथ्वी पर इसकी लगभग अस्सी हजार जातियां हैं ! जहां इसके पंख कुशल और सन्तुलन वाले हैं वहां इनकी इन्द्रियाँ बोध क्षमता का लाभ लेती हैं। उसके पंख सीधे मस्तिष्क के ज्ञान तन्तुओं से सम्बन्धित होते हैं, जिससे वो तुरन्त परिस्थिति के अनुरूप इससे काम ले लेती हैं। इसकी प्रजनन शक्ति भी विचारणीय है।

मादा मक्खी एक ही बार में १२५ से लेकर ५ हजार बार अण्डे देती हैं, न जाने इसमें क्या ऐसा तंत्र है, जो यदि उसे ५ मास की जिन्दगी मिल जाये, तो इस अवधि में ५ खरब बच्चे पैदा कर देगी। यदि एक ही जोड़ा पितामह बनने तक जीवित रहे, तो वह इतनी संतान पैदा कर देगा, जो ६ माह में ही सारी पृथ्वी में ५० फुट ऊंचा विशालतम ढेर लग जायेगा। इसका बच्चा ६ दिन में विकसित हो जाता है, और १० दिन में मर भी जाता है। कनाडा की (पाइनसा) मक्खीयां प्रति वर्ष हजारों एकड़ भूमि की ऊपज हजम कर जाती हैं। मछलियां एक नियत समय पर अपने सामान्य निवास से चलकर किसी विशेष समय में अण्डे देती हैं। विकसित हो जाने पर स्वयं ही उनके बच्चे अपने माता-पिता की जन्मभूमि को लौट आते हैं ! वे किस बौद्धिक सूझबूझ और अंतःप्रेरणा से ऐसा करती हैं, यह जानने के लिए वैज्ञानिक लोग अब भी इस ओर जुट रहे हैं। उड़ने को अमेरिका की कुछ गिलहरियां भी उड़ लेती हैं !

मलाया लिंगापुर की छिपकली और सांप उड़ानों के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं ! उड़ान में तो मनुष्य मक्खी से भी हार मानता है, जबकि सफेद अनेमिया जाति की मक्खी ८१६ मील प्रतिघंटा की भयंकर गति से सक्षम है। अद्‌भुत की व्यवस्था अद्‌भुत है। यह सारे वृतांत हमें इतना तो विवश करते हैं, कि हम ये मानने के लिए पाबंद हो जायें, कि ये जगत किसी नियत्ता के नियंत्रण में चलता है, जिसमें हर एक आत्मा अपनी अपनी क्षमता से विद्यमान है ! अतिन्द्रज्ञान का यही आधारभूत सिद्धांत डा० विकेतागिवली ने लिखा है, कि ये क्षमता हर प्राणी में विद्यमान रहती है, किसी में कुछ कम तो किसी में कुछ अधिक। कुछ प्राणी इस तरह की क्षमताएं जन्मजात लेकर आते हैं, और कुछ प्रयत्न करके उन्हें बढ़ा लेते हैं।

प्राकृतिक घटनाओं के पूर्वाभास की क्षमता कई पशु पक्षियों में विशेष तौर पर पायी गई है। भूकम्प से पहले, पशु पक्षियों के व्यवहार में आये परिवर्तनों को यदि सही ढंग से पहचान लिया जाय, तो घंटों नहीं, दिनों पहले, होने वाले नुकसान से बचाव के प्रयास किये जा सकते हैं। मिस्टरपार्ट जीव शास्त्री ने लिखा है, कि जब भूकम्प आने की सम्भावना होती है, तब गाय, भैंस, घोड़े, गधे आदि चोपाये वाड़ें में नहीं जाते ! वाड़े में जाने के स्थान पर वे ऊल्टे भागने लगते हैं।

उस समय चूहे और सांप भी अपना बिल छोड़ कर भागने लगते हैं, सहमे हुए कबूतर निरन्तर उड़ान भरने लगते हैं, और वापिस अपने घौंसले में नहीं जाते, मछलियाँ भयभीत हो जाती है, और पानी की ऊपरी स्तर पर घूमने लगती है। खरगोश अपने कान खड़े कर लेते हैं, और भयानक उछलने कूदने लगते हैं। प्रकृति के अनुदान अन्य प्राणियों को भी मिले हैं, ये वास्तवितका

अद्भुत लीला का शृंगार बनती है। रेगिस्तान का जहाज कहा जाने वाला ऊंट एक बार में ७० लीटर जल पी जाता है और तीन-चार दिन तक मरुभूमि में बिना पानी के रह जाता है। वनराज शेर यूं तो किसी का भी शिकार कर लिया करता है, किन्तु जिराफ उसे पाँच मील दूर भी दीख जाये, तो वह पास के अन्य शिकार को छोड़ कर उसे मारने का प्रयत्न करता है। जिराफ शेर को गुलाब जामन जैसा स्वादिष्ट और प्रिय है, परन्तु भगवान ने उसकी खाल इस प्रकार की बनायी है, कि वह पेड़ों के बीच इस प्रकार छिप जाता है, कि पास ही होने पर शेर उसे पहचान नहीं पाता। दक्षिण अमेरीका में रेलगाड़ी नामक २ इंच लम्बा कीड़ा होता है, जिसके मुंह में लाल दीपक होता है, और दोनों ओर हरे हरे ।। दीपक होते हैं। अपने अण्डों की संरक्षण के लिए मछलियों द्वारा सरिताओं, सरोवरों या जलस्रोतों पर बनाये गये भवन, उनकी वैज्ञानिक जानकारियों के प्रमाण देते हैं। स्ट्रीकल बैंक नामक मछलियों के नर, मई जून में रस्सी के छोटे टुकड़ों को तथा समुद्री से बाहर लेकर अपने भीतर से निकाले गये धागों से, उन्हें बुनते हैं, और घर बनाते हैं।

क्वींजलैंड की वरनेट नदी में इरयस नामक मछलियां बीस इंच व्यास वाला एक गहरा वृत बनाती है, जहां वे अण्डे देती हैं।

शार्क मछली भयानक होती है, उसके दांत तीक्ष्ण तलवार की धार जैसे होते हैं, लेकिन कछुए के खोल पर उन दांतों का कोई असर नहीं होता। समुद्र में दस मुंह वाला एक घोंघा होता है, यह अपने शरीर में हवा भर लेता है, फिर दौड़ लगाता

है, तो पानी को जैट इंजन की तेजी से चीरता जाता है। गिरगिट अपना रंग इसलिए बदलतो हैं कि वह विपत्ति से छिपने के लिए प्रयास करती है। सागरवासनीय कटिल नामक मछली विपत्ति का आभास पाते ही, अपने वातावरण व अपने निवस स्थान जैसा ही रंग बदल लेती है। अमेरीका का आजरों और आस्ट्रेलिया का डिगो नामक कुत्ता आपत्ति आने पर मरने का अभिनय करता है, वह भूमि पप्शव आसन में लेट जाता हैं, काँचन हिरण भी मृत्यु अभिनय में प्रवीन होते हैं। खटमल व अन्य कीड़े भी इसमें निर्गुण होते हैं। वे सिर पर खतरा देख सहसा शव वत् हो जाते हैं।

खतरा टल जाने का अनुमान कर पूर्ववत चलने लगते हैं। छिपकली तो विपत्ति आते ही अपने पूंछ को तोड़ कर अलग कर देती है। वो पूंछ कुछ देर तक उछलती कूदती रहती है। जिससे शत्रु उसे ही छिपकली समझ भ्रम में पड़ जाता है। खरगोश विपत्ति देखते ही अपने पिछले पैरों पर खड़ा होकर, जमीन खोद कर आवाज करता है, इससे सभी खरगोश बन्धु चौकस हो जाते हैं। गाय का वात्सल्य प्रसिद्ध है। बछड़े को जन्म देने ही गाय के थनों में स्फूर्ति व सक्रियता आ जाती है। घास पचने से बना हुआ रक्त जब सक्रिय हो उठे थनों के भीतरी कोशों से गुजरता है, तो उस ग्रन्थि के सैल, उस रक्त को दूध में बदल डालते हैं।

मधु मक्खी की प्रत्येक नृत्य मुद्रा का विशिष्ट अर्थ होता है। भोजन मंडल पास ही मिल जाये, तो वो छत्ते की ऊपर घुमरी जैसा नाचती है। यदि मंडल अधिक दूर हो तो सीधा उड़ती ऊपर जायेगी, और फिर जिस दिशा में भोजन हो उधर उड़ेगी। वे दूरी को भी नृत्य द्वारा संकेतित करती है। उनके संकेत इतने सही होते हैं, कि मधुमक्खियां विशष्ट दिशा में ही उड़ती हैं।

यूनान के एन्रोक्लीज और शेर की कथा प्रसिद्ध है। एक शेर के पांव में चुभे कांटे को देख कर उसकी सह करूणा जाग उठी थी, और वो निडर भाव से शेर के पास जा, उसने चुमा शूल निकाल दिया। शेर ने गहरी आत्मीयता से एन्रोक्लीज को देखा। एन्रोक्लीज ने आहत शेर का उपचार भो किया। जिसे शेर ने एन्रोक्लीज की स्मृति पटल पर आंक दिया। कालान्तर में एन्रोक्लीज से क्रुध राजा ने उसे दण्ड दिया, और कई दिनों से भूखे शेर के पिंजरे में एन्रोक्लीज को फैंक दिया। शेर, जो मांस की गन्ध के लिए तड़प रहा जा, एन्रोक्लीज को देखते ही पहचान गया, और उसने उस व्यक्ति को खरोंच तक नहीं पहुंचाई, अपितु प्यार भरे नेत्रों से उसे देखता रहा।

हम पशु पक्षियों में व्याप्त इन्द्र आत्मा की बातें करने में जुट गये, ताकि विलक्षणताएँ हमें चकाचौंध कर पायें, परन्तु बात चली थी न्यायधीश महोदय की, कि जिसने पशु पक्षियों के स्नेह और सौहार्द वृत्ति के बारे में निर्देश किया था।

अब जरा देखिए हाथी महोदय जो कि अपनी विशालता और रूप में वड़ा हट्टा कट्टा और प्रतिष्ठित पशु माना गया है। इन के स्वभाव भी देखिए। हाथिनी जब प्रसव करती है, तो हाथियों का सारा झुण्ड उसे घेर कर खड़ा हो जाता है। हाथियों का वात्सल्य प्राणी जगत् में असाधारण माना जाता है। छोटे बच्चों की सुरक्षा का वे पूरा-पूरा ध्यान करते हैं। नवजात शिशु पर चढ़ी हुई झिल्ली को उतारने, उस पर लिपी श्लेषमा को साफ करने सूंडों का सहारा देकर खड़ा करने के प्रयास में सभी सहेली हथिनियां, प्रसव के समय हथिनियां की

देखभाल करती हैं, और अपना अपना काम बांटती है झुण्ड की हथिनियों का कार्य इस अवसर पर देखते ही बनता है। प्रसूता आश्वसत होकर, मुदित मन धातृ कर्म, इस कुशलता से निपटाये जाने पर सन्तोष प्रकट करती रहती है। बच्चा जब तक अपने पैरों नहीं खड़ा हो जाता तब तक समवेट समूह विसर्जित नहीं होता। प्रायः तीन महीने में हथिनि प्रसूति जन्य दुर्बलता से मुक्ति पाती है, और चरने के लिए जाने के योग्य होती है, तब तक अन्य हाथी उसकी भोजन सुरक्षा का पूरा-पूरा ध्यान रखते हैं। अफ्रीकी हाथियों के विशेषज्ञ डा० हैमलटन ने बताया है कि हाथियों के झुण्ड का नेतृत्व नर हाथिनी नहीं वरन् मादा हथिनी करती है। शिशुओं पर हमला करने वाले सिंह को कई बार क्रुद्ध हथिनियों ने मिल-जुल कर पकड़ कर पैरों तले रोंद डाला है। हाथियों में से यदि किसी की मृत्यु भी हो जाय तो लाश को घेर कर देर तक वे उदास बैठे रहते हैं, और शोकाकुल स्वर में बारी बारी से रुदन करते हैं।

बच्चा मर जान पर हथिनि उसे सूंड में लपेटे कई दिन तक इधर-उधर घूमती रहती हैं, और प्रत्यन करती है, कि किसी तरह बच्चा चलने फिरने लग जाय। जब सफलता नहीं मिलती तो पैरों से मिट्टी खोद कर उस गड्ढ़े में अपने प्यारे शिशु को दफनाती है ताकि कोई हिंसक पशु उसकी दुर्दशा न करपाये। सिंह विशेषज्ञ जार्ज शैलर का कथन है, कि सिंहनी अपने बच्चों को शिकार करने की कला विधिवत् सिखाती है। बच्चे को यह सब कुछ जन्मजात रूप में नहीं आ जाता, परन्तु शिक्षा उनके लिए एक विशेष क्रम लेती है। टोलो में एक राजा होता हैं, सिंहनीयां उसकी रानी होती हैं, सभी पात्नियां बिना ईर्ष्या द्वेष के सहेलियां बन कर रहती है। इतना ही नहीं, वे एक

दूसरे के शिशु पालन में भी बड़ी सहायता करती हैं। यह सोचना सही नहीं कि पशुओं में मादा दुर्बल होती हैं वरन वे नर की तुलना में अधिक बलवति व साहसी होती हैं। अमेरीका में पाया जाने वाला ओपोसम अजीब प्रकार का जीव है उसकी मादा प्रायः एक दर्जन बच्चे एक साथ जनती है, और साथ ही लगभग इतने ही गर्भ में धारण किये रहती है। आधी आधी इंच के ये बच्चे मां की पीठ पर व तबी पूंछ पर लद जाते हैं बच्चे अपनी पूंछ व दांत के सहारे पकड़े हुए सवारी किये रहते हैं।

प्रकृति की इच्छा है कि हर प्राणी अपने नियत कार्य नियत समय पर सम्पन्न किया करे। काल और दिशा सम्बन्धी प्रकृति प्रेरणा, प्रत्येक जन्म और वर्ग की अपनी अपनी देन है। चींटियां अपना विवाह रचाने के लिए, वर्ष में एक निश्चित दिन ही अपने बिल से निकलती हैं, और उस दिन उनका एक ही धन्धा रहता है। चींटियों के पञ्चाङ्ग में उनके विवाह की एक नियत तिथि होती है, वे ठीक उसी रोज सुहाग मनाने के लिए उद्विग्न होती है, और खाने-पीने के ढर्रे को बदल कर वे उसी गोरख धन्धे में उलझी रहती हैं।

समुद्र तट पर पाया जाने वाला एक विशेष प्रकार का केकड़ा दिन के चढ़ाव उतार के साथ अपने रंग बदलता रहता है। इन्हें पकड़ कर घोर अंधेरे में रखा गया, ताकि उन पर सूर्य का प्रभाव न पड़े, तो भी उसका रंग इसके अनुसार बदलने का क्रम जारी रहा। रचयिता की रचना का वह कमाल, कि साथ-साथ उस केकड़े का रंग गहरा होने में कृष्णपक्ष और शुक्ल पक्ष के हिसाब प्रतिदिन ५० मिन्ट का अन्तर आता रहता है।

फ्रांस वैज्ञानिकों मधुमक्खियों पर अनेक प्रयोग किये हैं। इन मधु मक्खियों, तिलचट्टे, केकेड़े, चूहे मक्खी आदि की दिनचर्या उनके निर्धारित समय क्रम से आरम्भ होती है। मधुमक्खियों पर प्रयोग करते हुए यह ज्ञात हुआ कि उन्हें शर्बत का गोल चाटने के लिए सवा आठ बजे पात्र रखे गये, कुछ दिनों में समय सम्वन्ध में वे पूर्ण अभ्यस्त हो गयीं। अव उस छत्ते को हवाई जहाज में अमेरीका भेज दिया गया। पेरिस के सवा आठ बजे अमेरीका में रात के सवा तीन वजे होते हैं। साधारणतः उस समय मक्खियाँ विश्राम किया करती हैं। पर देखा यह गया कि रात के सवा तीन बजे उन मक्खियों के छत्ते में भिन्नभिन्नाहट शुरू हुई, और वे पास रखे हुए शर्बत के घोल पर टूट पड़ीं। तीन हजार मील की दूरी, मक्खियों के समय, ज्ञान सम्बन्धी चेतना को भुलावे में नहीं डाल सकीं। पक्षियों का संध्या होते ही घौंसले मे लोटना, प्रभात होते ही उड़ जाना,प्रायः सांयकाल का पहचानना बताता है, मानों उन्होंने अपनी कलाई पर घड़ियां बांध रखी हों। उड़ते हुए अमुक दिशा में जाना और लम्बी उड़ान के बाद बिना भटके अपने घर घौंसले में आना, उनमें दिशा ज्ञान की सार-गर्भिता बताता हैं।

यूं तो मनुष्य को समय के लिए घड़ी और दिशा के लिए कम्पास चाहिए परन्तु प्रजापति की चेतना जो पक्षियों को सौंपी गई है हमारे विशेष बोध का आधार बनती है।

इंग्लैंड के पक्षियों में एक जाति ऐसी है, जो लम्बे पर्यटन पर चली जाती है, परन्तु उनके बच्चे घौंसले में ही रह जाते हैं, वे जब बड़े होते हैं, तो अपने अभिभावकों के रास्ते ही उड़ते हैं,

और वहीं जा पहुंचते हैं, जहां उनके जन्मदाता निवास कर रहे होते हैं। परिव्राजक पक्षियों के पैरों में ऐसे छल्ले भी पहना कर भेजे गये जिनमें उनके समय निवास आदि का वर्णन था। अन्य देशों में चले जाने पर जब वे पकड़े गए तो पता चला कि वे दो हजार से लेकर पच्चीस हजार मील की यात्रा कर चुके हैं। वे अपना उड़न पथ ऐसा निर्णय करते हैं, जिससे दुर्गम पर्वतों से टकराना भी न बने और मार्ग सीधा व साफ रहे इनकी उड़ान २४ घन्टों में २५० मील अर्थात् १० मील प्रति घन्टा मापी गई है।

उत्तरी ध्रुव में ऐसी असह्य सर्दी की ऋतु आने से पूर्व हंस तथा मुर्गाबियाँ उड़ कर उष्ण कटिबन्ध के देशों को चली आती हैं, महाबलि पुरम से मद्रास जाते समय कोई सात मील आगे एक छोटा सा नगर है, पक्षी तीर्थम, यहां ५५० सीढ़ियां चढ़ने पर पहाड़ी पर अवस्थित एक मन्दिर हैं, जहाँ अनेकों देवी-देवताओं की मूर्तियां रखी हैं। मन्दिर के पिछवाड़े लगभग १५० फुट लम्बी और १५ फुट चौड़ी ढलवां चट्टान है, इस पर दोपहर को ११-१२ बजे के बीच दो सफेद गिद्ध पक्षियों का जोड़ा नित्य ही मन्दिर का प्रसाद पाने पहुंचता है। दर्शक लोग इन पक्षियों के समय पर पहुंचने और प्रसाद ग्रहण करमे के स्वभाव का आनन्द लेते हैं। दर्शकों की भारी भीड़ के बीच मन्दिर का पुजारी दोनों हाथो में दो प्रसाद की कटोरियाँ लेकर खड़े हों जाते हैं। सफेद गिद्ध प्रसन्न मुद्रा में नियत समय पर आते हैं, और चोंचों में प्रसाद भर कर उड़ जाते हैं। वहां की किंवदन्ति के अनुसार वे पक्षी कोई दो पुन्य आत्मा हैं, जो नित्य वाराणसी में गंगा स्नान करने आते हैं, वहां से लौट प्रसाद ग्रहण करते हैं, और फिर कहीं एकान्त मे जाकर ध्यान भजन करते हैं।

चाहे जो भी हो, दो विशेष पक्षियों का वहां पर प्रतिदिन नियत समय पर, नियत स्थान पर, और नियम पूर्वक भोजन करने आना, चकाचौंध तो करने वाला है ही। भगवान की ऐसी कृपा है कि ये पशु जगत प्रकृति को प्रेरणा का तनिक भी उल्लंघन नहीं करते, और प्रकृति दत्त अनुदान के अनुसार, अपने दिशाज्ञान प्राकृतिक स्वभाव और नियम पालन में, मानव से कहीं बढ़कर प्रतिष्ठित बन रहे हैं ! किस किस का कुछ कहें—खच्चर की सहजता, उपवास रखने वाला कुत्ता, कीर्त्तन प्रेमी सर्प, परउपकारी चील, कुत्ते और बिल्ली की मैत्री, चोरों को भगाने वाली मैना इत्यादि अनेक कथाएं हमारे पढ़ने में आती हैं, जिसे आश्चर्यजनक मानकर अपने अद्भुत लेखों एवं व्याख्या के दृष्टान्त बनते हैं। यदि पशुओं पक्षियों से मनुष्य की तुलना का निरादर न समझा जाय तो यह भी मानना पड़ता है कि पक्षी कई क्षेत्रों में हमसे बहुत आगे है।

गुरुड़ की उड़ान २०० मील प्रति घंटा की रफ्तार, शतुर्मुर्ग–६ फुट ऊंचा—३०० पौंड भार—४० मील, प्रति घंटे की रफ्तार–१५-१५ फुट की ऐसी छलागें लगाने वाला–घुड़सवारों को भी मात कर देने वाला, ध्रुव प्रदेश में बसने वाला पेनगुइ–६ फुट ऊँचा–दो सौ पौंड भारी वजन—मनुष्य की तरह खड़ा होकर दो पैरों पर चलने वाला–समुद्र जल में तैरने वाला–शीत सहन करने वाला–तेज ठंड के दिनों में तीन-चार महीने बिना खाये गुजारा कर लेने वाला–घर के मानव की तरह पूरी जिम्मेवारी संभालने वाला, केकडा भारी शंखों के खोल में घुस जाने वाला–प्रति वर्ष दस मील की यात्रा कर लेने वाला अपने वजन से दस गुना तक बोझा ढो लेने वाला, हैंसिगवर्ड चिड़िया—तीन इंच लम्बी परन्तु ५ इंच चोंच वाली

मनुष्य की अपेक्षा में ४५० गुनी शक्ति के अनुपात से अपना आहार जुटा लेने वाली—ऐसी गहरी नींद के कोई ढेला समझ कर उसे उठा ले—करवट न बदलने वाली—मुर्दे जैसी निष्चेष्ट बया का लटकता हुआ घोंसला—अत्यन्त सुन्दर और सुगढ़—निर्माता की भूरि-भूरि प्रशंसा बतलाने वाला—भिन्न प्रकार की टहनियों—भेड़ों की ऊन से अपने मकान की रचना कर लेने वाला, चमगादड़—-जिसकी हृदय धड़कन १८० बार प्रति घंटे होती है—पर सुशुप्ति अवस्था में चाल कर प्रतिमिन्ट ३ रह जाने वाली, श्वास क्रिया ४८० प्रति मिन्ट से घटकर ८ रह जाने वाली—२० वर्ष की आयु आसानी से भोग लेने वाला—ये पक्षी दिन में हमारे अन्धा समझा जाने पर भी अत्यन्त बारीकी से बुने हुए जाल में से अपना रास्ता निकालने वाला, इत्यादि अद्भुत ज्ञान का विषय बनते हैं।

भला हो विज्ञान का कि दिन प्रतिदिन नई से नई बातें बतला कर हमें अद्भुत भगवान की, अद्भुत लीला का प्रसाद दिये जा रहे हैं। कभी तो हम मानते थे कि सिंह आदि बड़े हिंसक पशु हैं परन्तु हाल में मिले "रीडर डाइजस्ट"—जनवरी १६७६ में एक लेख शेरों के बारे में पढ़ कर अत्यन्त विस्मय का वषय बनता है जबकि शेरों को समझ सकने वाले जीव शास्त्रीयों ने अफ्रीका जैसे देश का विवरण देकर हमें उनके स्वभाव सिहृदयता और परिवार नियोजन के दृष्टान्त बतलाये हैं। एक महाश्य रेलस वर्गर इतने तक कह गये हैं कि इन हिंसक पशुओं के प्रति हमारी गलतफहमी बनी रही है। दुःख इस बात का है कि हमने उनकी रक्षा नहीं की और इस अज्ञान में हमने अपने आप को नहीं समझा।

मानव अपने से बड़ा उपकार करे यदि वह इन तथ्यों को

समझ कर अपने दिमाग में स्थान देने वाला बनें।

एक जीव शास्त्री ने तो इतने तक लिखा है मनुष्य की तुलना में शु पक्षी चाहे जितने पिछड़े हुए हों, परन्तु उनकी चेतना मनुष्यों से कहीं अधिक बढ़ी चढ़ी होती है, जिनके आधार पर वह अपनी दिनचर्या सुविधापूर्वक निभा डालते हैं। देखने सूंघने की क्षमता प्रकृति ने इन प्राणियों को बहुलता से दी है, ताकि इनके द्वारा वे आत्म रक्षा करने के साथ साथ, सुविधा सामग्री प्राप्त करने में सरलता पूर्वक सफल हो सकें।

गहरी झीलों में रहने वाली मछलियाँ वर्फ पड़ने से कुछ समय पहले, गर्म स्थानों पर चली जाती हैं। वायुयान वना कर मनुष्य ने उड़ने की कला का प्रदर्शन किया परन्तु ये पक्षी लोक चिरकाल से ही आकाश में उड़ना जानते हैं, जो अपने भार के अनुसार, अपना सन्तुलन रखते हैं, भार के अनुसार तीव्र व मन्द गति की कला बाजी मारते हैं। चीता थलचर प्राणी साठ मील प्रतिघंटा से दौड़ लेता है, कभी-२ तो वे सौ० मील की रफ्तार भी पकड़ लेता है। आस्ट्रेलिया का कंगारू ४० फुट ऊँची छलांग लगा लेता है। हाथी की सूंड में ४० हजार मांस पेशियों होती हैं। ये सूंड बहुत भारी वजन भी उठा लेती हैं, परन्तु लचक इतनी कि पृथ्वी पर पड़ी सुई तक को भी नहीं छोड़ता।

शेर का पंजा, ह्वेल की दुम बहुत सशक्त मानी गयी हैं। अष्ट पद जलचर गहरे समुद्र का वासी ऐसा प्राणी है जिसका धड़ और सिर आठ भुजाओं के बीच में होता है। यदि कोई प्राणी अभाग्यवश इन भुजाओं में फंस जाये, तो मृत्यु के सिवाय उसका कोई साथ ही नहीं देता।

उल्लू को हमने गाली देने की संज्ञा से याद कर रखा है, जिसे हम दिन में अंधा भी मान लेते हैं, परन्तु उसकी दृष्टि कौशल एक नया रूप पेश कर रही है। बाज हजारों फुट की ऊँचाई पर उड़ते हुए देख लेता है। एक हजार फुट ऊँचे उड़ते हुए भी वह घास में छिपे सांप, मेंढ़क, और चूहों का शिकार कर लेता है, जब कि हम पांच फीट की दूरी से इन्हें नहीं देख सकते ! खरगोश की आँखों की बनावट ऐसी कि वे सामने की तरह पीछे भी साफ साफ देख सकता है। कुत्ते की स्मरण शक्ति बहुत विख्यात है। अनेकों वर्ष बीत जाने पर भी दूर-२ स्थान पर पहुंच जाने पर भी, वो अपने मालिक की सलामी पूरी तरह से करता है। अन्तः-प्रेरणा इन्हें भगवान का ऐसा वरदान मिला है जिसके वृनान्त पढ़ते और सुनते ही बनते हैं।

किसी अंधेरे कमरे में बहुत पतले ढ़ेरों तार बांधे हों, उसमें चमगादड़ छोड़ दी जाय, वो बिना तारों से टकराये अपनी उड़ान पूरा कर लेते हैं। यह इसलिए होता है कि उसके शरीर से निकलने वाले कंपन, तारों से टकराकर जो ध्वनि उत्पन्न करते हैं, वो ध्वनि चमगादड़ के कान पकड़ लेती हैं, और तार कहाँ-कहाँ बिखर रहे हैं, ये दिशा ज्ञान पहुंचा देते है।

मेंढ़क केवल जिंदा कीड़े खाता है, वो कभी मरी मक्खी पर हाथ नहीं डालता, ये उसकी विशेष नेत्र संरचना, क्षमता को प्रदान करती है। यदि अत्युक्ति न मानी जाये तो यह कह डालने में कोई शर्म की बात नहीं, कि हमने अपने बहुत सारे यंत्र इन क्षुद्र पक्षियों से ही समझे और सीखे हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार चींटी की मस्तिष्क की तुलना में हमारे वर्तमान कम्पयूटर अनपढ़ बालक की तरह पिछड़े हुए

हैं। फिर वही बात कि मनुष्य तो मकड़ी से भी पिछड़ा है। चतुरता और कुशलता की बड़पन का पैमाना इस मकड़ी में बहुत अधिक है। हवा का रूख देखते ही वह हवा में तैरती हुई अपने मुंह से निकलने वाले जाले के सहारे नदी पार करके किसी पेड़ पर जा पहुंचती हैं।

मकडी का औसत धागा जो हमें दिखाई देता हैं, एक इंच का एक लाख भाग ही मोटा होता है। इसके जाले के ऐसे तुन्तु मिलते हैं जो फौलाद सेभी अधिक मजबूत हैं। इन धागों से पूरी पृथ्वी को लपेट सकने लायक लम्बाई का वजन ४०० ग्राम सेभी कम होगा। अठाहरवीं सदी में एक धुन के धनी ने मकड़ी के जाले से ही हाथों के दस्ताने और पैर के मौजे बनाये थे। ये अद्भुत लीला अद्भुत भगवान की महिमा में अपनी रूपरेखा बढ़ाते ही बढ़ाते जा रहे हैं।

जोड़ की जगह से धागा फिर दो बारा नहीं टूटता। यह जाला रेशम से भी अधिक मजबूत माना गया है यहां तक इन धागोंसे मछलियां पकड़ने के जाल तक बनाए जाते हैं। प्रायः १४००० जाति की मकड़ियां खोजी जा चुकी हैं। एक च्यूंटी अपने वजन का ५० गुना वजन उठा लेती है। एक छछूँदर ६ मीटर खंदक खोद लेता है; सांप अपनी जबान से सूंघता है जो गंध धरती व हवा से प्राप्त होती हैं। चमगादड़ ही एक दूध देने वाला पक्षी है जो उड़ लेता है, घोड़ा खड़े-खड़े नींद कर लेता है, भेड़ कभी चलते हुए पानी में से प्यास नहीं बुझाती। क्या यह सारे तथ्य, यदि अब भी भगवान की स्वीकृति में सहायता नहीं देते तो दोष हमारे भाग्य का है, इन जीव जन्तुओं का नहीं, विचार-णीय यह कि सांझे परमपिता ने बड़ी कुशलता, सहृदयता से प्राणी जगत में हमारे साथी बनाकर, हमें शिक्षा का एक भारी पाठ पढ़ाया है, यह मुंह बोलती तसवीरें, हमारी श्रद्धा तथा

विश्वास को एक बड़ी भारी चुनौती देकर, एक ओर हमारा दर्प ढ़ीला करती हैं और साथ में नियंता के उपकारों में एक वास्ततिक दृष्टान्त प्रस्तुत करती हैं। सबसे बढ़ कर मेरे उद्देश्य की पूर्ति कि अद्भुत को अद्भुत लीला अत्यन्त माननीय व वेरणयम है, हमने तो केवल इस भेंट में थोड़े से पशु पक्षियों को समझने का प्रयास मात्र किया है, कीड़े जो कि इस जगत का ७० प्रतिशत बनते हैं, के समाचार वो हमने जाने ही नहीं यद्यपि ये सारे एकत्र हो जायें तो मानव मात्र का तो जनाजा ही निकाल दें। इस समय तक कीड़े वर्ग की एक करोड़ जातियां जानी जा चुकी हैं, जिसमें से ७० हजार जातियां तो केवल भारतवर्ष में ही पायी गयी हैं। हर एक जाति की अपनी शान अपना स्वभाव अपनी उपयोगिता देखते बनती हैं।

———

अठाहरवीं भेंट

एक रोज संध्या समय, घर की सौभाग्यशालिनी, अपने आँगन में खड़ी थी, अँधेरा हो रहा था, और उसका बालक घर की छोटी सी बगिया में, एक झाड़ी से कुछ पत्ते तोड़ने लगा। मैंने आवाज देकर ऐसा करने से मना किया। स्वभावानुकुल बालक ने पत्ते न तोड़ने का कारण पूछा। माता ने उत्तर दिया—रात्रि में पेड़ पौधे सो जाते हैं। उन्हें अचेत नहीं करना चाहिये। बालक विस्मय पूर्वक कह बैठा—"क्या हमारी तरह ये पेड़ पौधे भी रात्रि को नींद करते हैं। मेरे लिए यह एक विस्मय का विषय है"।

ये एक नया तथ्य अब सिद्ध हो गया है, कि वनस्पति जगत मनुष्य से कहीं अधिक संवदेनशील है। पवित्र अन्त:करण वाला व्यक्ति दूसरे की भावनाओं की परख स्वत: ही कर लेता है। पेड़ पौधे जिन्हें न किसी से लगाव होता है न द्रराव, निष्कलंक पवित्र अन्त:करण वाले व्यक्ति की तरह, यह भी ताड़ लेते है, कि पास आने वाला व्यक्ति शत्रु अथवा मित्र है। अमेरीका के प्रो० मरकिल बोगल ने इस तरह के कई प्रयोग किये और एकत्रित जानकारियाँ बेहद ही चौंका देने वाली और आश्चर्य जनक बतायी हैं।

ये पेड़ पौधे न केवल भावों को पहचानते हैं, अपितु उन भावनाओं से प्रभावित भी होते हैं, ये भी सिद्ध हुआ है, कि

पौधे उन्हें उखाड़ने व नष्ट करने के विचार मात्र से पूरी तरह आतंकित हो जाते हैं। इन लम्बे प्रयोगों के बाद प्रो० व्रोगल ने यह भी सिद्ध किया है कि सचमुच हमारे मानसिक उभार का प्रभाव, इन पौधों पर पड़ता ही है। एक यन्त्र द्वारा इन उभारों का दर्शन कागज पर कम्पन के रूप में देखा गया है। पेड़ पौधे भी अनुभव करते हैं और उनमें भी संवदेनाएं होती हैं, इस तथ्य को न्यूयार्क के प्रसिद्ध वनस्पति विज्ञान वली बैकस्टर ने अपनी प्रयोगशाला में साक्षात करके देख लिया है। इस महोदय ने पेड़ की एक पत्ती को उवलती काफी की प्याली में डाल दिया। पत्ती पेड़ से जुड़ी हुई हालत में डाली गयी थी। परन्तु इस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। इस पर उस सज्जन ने एक दूसरा प्रयोग किया, उसने विचार किया कि वो पत्ती को जला कर राख कर देगा, जिसके लिए माचिस की तीली को जलाने हेतु, अपने हाथ को आगे बढ़ाया। परन्तु वो माचिस हाथ में उठा भी नहीं पाया था कि गेलविनोमीटर ने पेड़ में कम्पनों को तेजी से अंकित करना आरम्भ कर दिया।

पेड़ की नोक बहुत तेजी से कागज पर चलने लगी थी। वेक्स्टर के मन में यह प्रश्न बिजली की तरह कौंधने लगा और उसकी उत्कंठा का आश्चर्यजनक रूप सिद्ध हो गया, कि पौधे आन्तरिक भावों को किस तरह पहचान लेते हैं। भयभीत होने, प्रसन्नता व्यक्त करने, शत्रु को पहचानने के अतिरिक्त, पेड़ पौधे गर्मी और सर्दी भी, महसूस करते हैं। उन्हें प्यास भी लगती है, उन्हें पोषक तत्वों की आवश्यकता होती हैं, ये खोजें उसके प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री पनिशकिन इत्यादि ने करके देख ली हैं।

उन्होंने एक विशेष यन्त्र को सेम के पौधे के साथ जोड़ा, और यन्त्र को चालू कर दिया, जब पौधे को पानी की जरूरत

पड़ती वह यन्त्र पर एक विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा संकेत देता, ये संकेत देखकर पौधे को विशेष विधि से पानी दिया जाता, ये भी देखा गया, कि पहले दो मिनट तक पौधे ने पानी लिया, किन्तु फिर उसने पानी के प्रति अनिच्छा व्यक्त की, इसके घन्टे भर बाद, पौधे ने पुनः पानी का संकेत किया, इस बार भी उसने केवल दो मिनट तक पानी लिया, और फिर पानी लेने में अरुचि दर्शायी।

मनुष्य और वनस्पति में अन्तर तो इतना भर ही कि वनस्पति मनुष्य की भाषा में बात नहीं कर सकता है। ये तथ्य हमारे देखने और समझने का विषय बनते हैं। ये कई बार विचार आता है कि क्या हम वृक्ष वनस्पतियों से भी पिछड़े रहेंगे ? प्रकृति के नियम सृष्टि सन्तुलन में आवश्यक स्थान लेते हैं। हर एक पौधा अपना बीज रखता है। हर एक बीज परमाणु की तरह स्वतन्त्र सत्ता, महत्ता का स्वामी है। बड़े आश्चर्य की बात है कि हलका फुलका बीज का दाना पूरे वृक्ष का भविष्य अपने दामन में छिपाये होता है यही एकभाव, ज्ञान, वास्तबिकता अपने में बहुत महान् और विलक्षणता का स्रोत बनती है। यूं तो बीज कुछ भी नहीं, सड़े गले बीज से वंश वृद्धि नहीं हो सकती, इस जगत की छानबीन हमें चकाचौंध करती है। बीज एक रंग के होते हैं परन्तु उनमें से फूल भिन्न-भिन्न प्रकार के निकलते हैं; फलों में गूदा भरा होता है और गूदे में बीज। गूदे का उद्देश्य है बीज को पोषण देना, परिपुष्ट करना, प्रौढ़ अवस्था तक पहुंचाना। एक वृक्ष अनेक फल और प्रत्येक फल में अनेक बीज इसलिए उत्पन्न करता है, कि उसकी सत्ता को अधिक अधिक विस्तृत होने का अवसर मिले, उसे प्रत्येक दायरे में संकीर्णता की परिधि में अविकसित रहकर रहने का कलंक न सहना पड़े। वृक्ष भी इसी प्राकृतिक प्रेरणा का अनुसरण

करते हैं। जहां प्रत्येक बीज एक वृक्ष ला खड़ा कर देता है, परिपुष्ट होने के पश्चात् उसका अगला उद्देश्य यह रहता है, कि वो अपनी जाति के नये वृक्ष उत्पन्न करे। यह क्रम कितना सुन्दर, भावुकता पूर्ण, तथा उपकार का द्योतक है, वनस्पति जगत् की ये विशेषताएँ हमें अनुग्रहीत करती है।

फल के भीतर सारे बीज एक जगह ही इकट्ठे चिपके नहीं रहते, गूदे के भीतर वे थोड़ा-थोड़ा फासला देकर, अलग-अलग, जमे होते हैं, इसका सार यह है कि उन्हें पृथक पृथक रूप से सुदूर क्षेत्र में जाने की ओर सुविस्तृत परिधि में विस्तार का अवसर लेने की क्षमता रहती है।

यदि गूदे में सब बीज इकट्ठे रखे होते, तो फल के पकने पर गिरने पर, वे सभी एक जगह ही उगते। फलतः वे सभी एक-दूसरे की खुराक छीनने, फैलने का स्थान न ले पाते, और मुरझा कर समाप्त हो जाते। विस्तार के लिए ये आवश्यक है कि पुरखों के घर आँगन को छोड़कर अन्यत्र भी फैलने का प्रयत्न किया जाये। इस भाव की पुष्टि के लिए, प्रकृति ने अनेकों प्रकार की व्यवस्थाएँ कर दी हैं। वनस्पति जगत के विस्तार में वायु, पक्षी अथवा पशु वर्ग का मल इत्यादि भी साधना का रूप लेते हैं। हवा असंख्यों बीजों को अपने साथ उड़ा कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाती है। कुनीन जिस सिनकोना पौधे से बनती है, उसके बीज इतने हलके होते हैं, कि एक औंस में ७० हजार तोले जा सकते हैं। आरकिडो के बीज इससे भी हलके होते हैं, इनकी बनावट भी ऐसी होती है जैसे पक्षी के परों की। पानी में उगने वाले वनस्पतियों के बीजों को लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती हैं। ये बीज हलके और हवा भरे स्पज की तरह होते हैं। कई फल ऐसे होते

हैं जिनके छिलके बड़े कड़े होते हैं। पक जाने और सूख जाने पर वो बीजों को बाहर नहीं निकलने देते।

इस कठोर नियंत्रण की उग्र प्रतिक्रिया होती है। बीज विद्रोह कर बैठते हैं, और भीतरी तनाव से छिलका विस्फोट की तरह फटता है, तथा बीज उछल कर बाहर निकल जाते हैं। गुल मेंहदी, वुडसेरिल, राइट जरेमिन, अरण्ड, कालमेघ, वज्र-दती, पलाक्स, कचंन लता आदि फलों में अकसर फलने और बीज उछलने की प्रतिक्रिया देखने को मिलती है। कुछ बीज ऐसे होते हैं, जो हवा, पानी मनुष्य आदि की सहायता न पाने पर स्वयं ही, प्रकृति प्रेरणा से अपना रास्ता बना पाते हैं, जिसका आंचल हाथ लगे, उसका सहारा लेकर आगे निकल पड़ते हैं। तट जीरा, गखरू, वन ओखरा, चोर कोट्टा चित्रक ठीकरी, आदि के फल अथवा बीज अपने कांटों के साथ पशु पक्षियों के शरीरों अथवा मनुष्यों के कपड़ों को पकड़ लेते हैं और इस सवारी द्वारा कहीं के कहीं पहुंच जाते हैं।

पक्षियों के पैरों में चिपकी मिट्टी के साथ अथवा उसकी बीट के माध्यम से, अनेक वनस्पतियां तथा वृक्ष लम्बी यात्रा करते हुए पृथ्वी के एक छोटे से दूसरे छोर पर जा पहुंचते हैं। मनुष्य की तरह वनस्पतियां भी ये आत्म विस्तार की अपनी संभाल, अत्यन्त प्राकृतिक और दक्षतापूर्ण हैं। हर एक पौधा सम्पन्न है अपनी वंश वृद्धि और मानव हित कल्याण की शुभ भावना में ओत प्रोत।

जब वृक्ष वनस्पतियां इस शुभ प्रेरणा से सम्मानित हैं तो फिर विवेकवान और सहृदय समझे जाने वाले मनुष्य को इनसे पीछे न हट कर प्रकृति की लीला को साक्षात करने का सुअवसर

लेना चाहिए । अनेक फल, अनेक वृक्ष, अनेक वाटिकाएँ, जहां धरती मां की गोद को सुशोभित करती हैं, सुगन्ध, सुन्दरता तथा रंग-बिरंगे वातावरण को उल्लास देकर हमारी दिनचर्या में सुशोभित होती हैं, हमारा भी कर्त्तव्य बनता है कि हम इन मित्रों को जाने, मानें, तथा इनकी मैत्री प्राप्त करके अपनी कृतज्ञता की श्रद्धाञ्जलि दें । विज्ञान तो अब ये रूप ले चुका है, कि पुस्तक की तरह पन्ने पलटते जाओ, और नई से नई बात देखते जाओ ।

अब तो पैट्रोलियम भी वनस्पति से पैदा किये जाने की आशा बंध गयी है । वैज्ञानिक अब इतना कह रहे हैं कि भारत के सूखे इलाके को ऊबड़ और बंजर भूमि में हाइड्रोजन कार्बन युक्त पौधों की फसल भली प्रकार पैदा की जा सकती है । एक मोटे अन्दाजे के मुताबिक, एक एकड़ फसल में से हर साल, दस से १५ बेरल तक तेल की प्राप्ति सम्भव है । हमारे यहाँ लखनऊ के राष्ट्रीय वनस्पति संस्थान ने ऐसे पौधों की खोज निकाली है जिससे पैट्रोलियम निकाला जा सकता है ।

कौंपल हेंटरनामी एक झाड़ी के दूध से पैट्रोलियम मिल गया है । खास बात यह है कि पौधे की फसल कृषि के लिए बेकार और गैर मुफीज़ है यह झाड़ी बंजर इलाके में उगाई जा सकती है । यह झाड़ी यू० पी० के उत्तरी क्षेत्र, बंगला और तामिल-नाडू में पायी जाती है । इस झाड़ी को पूरी तरह ऊंचाई तक पहुंचने के बाद जमीन के पास से काटने के बाद गन्ने की तरह पेल कर, 'क्रूड आयल' अथवा कच्चा तेल प्राप्त किया जा सकता है । धरती में बचा ठूंठ किसी की सहायता के बिना, फिर बढ़ना शुरू हो जाता है । ऐसे पौधों का जीवन २० वर्ष गिना गया है । [illegible] है तो हमारा [illegible] कि इन मित्रों की [illegible] के

बिना हम अपने अनजाने पड़ोसियों से शत्रुता कर रहे हैं। हम तो कृतज्ञता की बजाय, वनस्पति संसार से बेजार होकर, इन्हें उखाड़ फैंकने के लिए उत्सुक हो रहे हैं। हमारी सृष्टि में लगभग २० हजार खास पौधे हैं, जिनमें से ७०० के लगभग हमारी वेपरवाही से लोप हो रहे हैं। अमेरिका में कुल बीस हजार में से, २ हजार ४९ लुप्त हो रहे हैं, जिनमें से ७६१ का तो नामो निशान नहीं मिलता, ब्रिटेन में ३०० में से १०० विशेष वृत्ति वाले पौधे समाप्त हो रहे हैं।

एक जजीरा में एक स्कीम का नारियल होता है, जिसका एक ही फल लगभग ४० पौंड के वजन का होता है, जिसके पकने और तैयार होने में दस साल लग जाते हैं। ये नारियल के प्रकार का फल तमाम विष से मुक्ति देता है। इसे प्राप्त करने के लिए राजे लोग, बड़ी-वड़ी रकम खर्च कर देते थे। किसी वादशाह ने तो केवल एक फल का दाम २५०० डालर अदा किया था।

चिनार का वृक्ष, सुना हमने बहुत है. लम्बाई में बहुत ऊंचा, छाल सफेद, पतला दुबला, परन्तु इस पर फूल कोई नहीं लगता; सर्दी में इसके पत्ते झड़ जाते हैं, और फिर बसन्त में निकल आते हैं। कोई पक्षी इस वृक्ष पर नहीं बैठता - चाहे गीद्ध चाहे चील। ये एक विशेष वात है कि पक्षियों का भी वृक्षों के साथ क्या सम्बन्ध है। कई वृक्षों के वीज नया जन्म देने के लिए फूटते नहीं, यूंही जमीन पर गिर जाते हैं। परन्तु वे केवल तब फूटते हैं जव विशेष पक्षी की बीट के द्वारा वे बाहर निकलते हैं। मौरिशस में पाये जाने वाला कालभैरों वृक्ष इस बारे में विशेप नाम रखता है। डोडो पक्षी इसका फल बड़े प्यार से खाता है। एक ऐसा वृक्ष भी होता है जिसका एक फल २५ से ५० पौंड का वजन रखता है। वे वड़े वदनसीब थे जिन्होंने ये कहा था कि ये संसार किसी की देख-रेख में नहीं रचा गया।

ये नास्तिक पापी तो थे ही, परन्तु अज्ञान के अन्धकार में वे धरती पर बोझ रूप ही थे।

विश्व औसत के मुताबिक अनुकूल मिट्टी की सतह सिर्फ आठ इंच तक ही रहती है। इसमें नाइट्रोजन, पोटाश, फास्फेट के अतिरिक्त तेरह भिन्न सूक्ष्म तत्व अनगिणत जीवाणु रखते हैं। जिसके बलबूते पर कृषि होती है। वनस्पति विज्ञानी बृक्षों के तनों में बनने वाले वर्तुलों द्वारा वृक्षों के जीवन का अध्ययन करते हैं। देखा गया है कि बृक्ष में प्रतिवर्ष एक वृत बनता है, जो कि उसके द्वारा छोड़ी गयी छाल से विर्निमित होता है। हर ग्यारहवें वर्ष यह सामान्य वृतों की अपेक्षा बड़ा बनता है वैज्ञानिकों ने अब ये भी कह दिया है कि हर ग्यारहवें वर्ष जब सूर्य पर आणविक विस्फोट होते हैं, तब वृत का भी तना मोटा हो जाता है, और उसी कारण वृत बड़ा बनता है। इससे ये भी सिद्ध होता है कि सूर्य चन्द्रमा के परिवर्तनों से पेड़ पौधे भी प्रभावित होते हैं।

नेचर मैगजीन के ६१ वें अंक में श्री हेनरिकहॉज ने मैनग्रोव नामक एक ऐसे बृक्षा का उल्लेख किया है, जो यायावर जिन्दगी बिताता है। परिव्राजकों की तरह घूम-घूम कर लोगों में कौतूहल, सौन्दर्य और जीवन को मात्रप्रवास मानने की प्रेरणा देता रहता है। समुद्र का सौन्दर्य बढ़ाने वाले इस मैनग्रोव के लिए जीवन व्यवस्थाएँ समुद्र से ही उसे स्वयं मिल जाती हैं। ये घुमक्कड़ वृक्ष फिनिफ्लोरिडा से कुछ १००० मील का समुद्री सफर तय करके पेनिनसुला तक तथा केरैवियन समुद्र तक प्रशान्त तथा हिन्द महासागर के तट पर फैल कर उन्होंने शास्त्रीय अभीमत का पालन किया है। इस गतिशील स्वभाव के कारण ही ये रोग शोक से मुक्त परमात्मा की सृष्टि के मात्रदृष्टा होने का आनन्द लेते रहते हैं।

सामान्य अवस्था में मैनग्रोव की जड़ें जहाज द्वारा लङ्गर डाल लेने के समान कीचड़ को पकड़े रहती हैं और वायु द्वारा कोड़े की तरह जड़ें आगे भी बढ़ती रहती हैं यह गति यद्यपि मन्द होती है पर कुछ ही समय में वे न जाने कहां से कहां पहुंच जाती है।

उत्तराखण्ड में पेड़ पौधों की रक्षा के लिए एक अद्भुत प्रयोग चिपके अंदोलन का जन्म हुआ 'हम पेड़ों को चपक करउन कीरक्षा करेंगे कटने नहीं देगें' इस संकल्प ने देशहित में बड़ा काम कर दिखाया। हमारे लोग वृक्षों को देवता मानते रहे हैं, इस भावना से पर्वतीय लोगों के परिवारों में पेड़ पौधों को जोड़ने, उनकी सेवा शुश्रपा करने की प्रेरणा मिली जिस से हमारा वातावरण खुशहाल हरा भरा आह्लाद वर्धक बनता रहा जिपके कारण चारों ओर हरियाली ने हमारे मध्य हमारी मित्रता का अन्दोलन बनाए रखा।

अमेरिका में ऐसे भी वृक्ष हैं जिनकी आयु ३००० वर्ष आंकी गई है वह १०० फुट ऊंचे हैं उनके तनें एक हजार टन का वजन रखते हैं पर उन के बीज इतने छोटे कि सात हजार बीज केवल एक औंस का भार लेते हैं, अमेरिका में सबसे बड़ा विशाल उद्यान है, जहां तीस करोड़ वृक्ष हैं, सबसे ऊंचे वृक्ष की लम्बाई ३६८ फीट है।

भगवान के रंग बड़े निराले हैं चीन में एक इलीचीका पौधा २८००० वर्ष पुराना है जो एक मन्दिर में उग रहा है यह ६०३ मीटर ऊंचा है आश्चर्य यह कि अब तक भी इसके फल लगते हैं।

तीन लाख ५० हजार पौधों पर प्रयोग करके वैज्ञानिकों ने यह तथ्य निकाला है कि पौधे सर्वोत्तम मौसम विशेषज्ञ हो

सकेत हैं, तथा वे ब्रह्मांड की ओर सूक्ष्मतम हलचलों की जानकारी दे सकते हैं। उनकी इन विलक्षण समझ शक्ति को सैंट लारेंस ने मानव मस्तिष्क के समान विराट बताया है। पीपल को तो देव वृक्ष तक इसी आधार पर माना गया है, कि उसकी संवदेनशीलता अन्य वृक्षों के समान अधिक होती है। वोहड़ वृक्ष हमारे यहां विशालता में विशेष माना गया है,' जिसकी जड़ें पाताल तक जाती हैं, इसकी छाया बहुत विस्तीर्ण होती है। हमारे ऋषि वर्ग इन गूढ़ तत्वों के विज्ञ होने के कारण वृक्षों वनस्पतियों से परामर्श और सहयोग तक प्राप्त किया करते थे। सैंट लारेंस ने अपने शोधों के आधार पर, यह बताया है कि पौधों में इलक्ट्रोडोयनिक गुण का होना यह सिद्ध करता है, कि वे वातावरण के संकेत व प्रभाव संगठक से भी विस्मय कारक ढंग से ग्रहण करते हैं। ये तो ज्ञात नहीं कि उनमें मनुष्य की तरह का मन होता है कि नहीं, परन्तु वे प्रतिक्रिया निश्चित रूप से व्यक्त करते हैं।

इन दिनों विज्ञान की एक नई शाखा इकालोनी का त्रिकास हो रहा है, जिसकी मान्यता यह है, कि संसार का हर कण एक ही जीवित चेतना से पिरोया है। सृष्टि के किसी भी कोने में हलचल हो, उसकी प्रतिक्रिया ब्रह्मांड के हर कण में होती है। इस विज्ञान के पंडित डा० इवान ने वनस्पति विज्ञान की शोधों को फोड़ते हुए लिखा है, कि वनस्पति जगत एक दिव्य प्रभा से मुक्त है, और उसका अध्ययन अलंकारित रूप से नहीं अपितु यथार्थ और वैज्ञानिक ढंग से यह सिद्ध करती है कि यदि दिव्य शक्ति है तो वो सर्वव्यापी है। हमारे यहां डा० ज०च० वसु ने पेड़ पौधों में जीवन अस्तित्व का सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसने वैज्ञानिक जगत में एक नई हलचल मच गई। उनके अनुसार

अभी पौधों में भावना व कल्याणशील आत्मा का अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए बड़ा कार्य शेष था। वृक्षों के पत्तों में रगें और नसें समान्यता दृष्टिगोचर हैं, जो शरीर की भाँति खून पहुंचाने सबजाजार होने और नेत्रों में तरोताजगी पहुंचाने में विशेष प्रभाव रखती हैं।

डा० वैक्सटर के परीक्षणों ने यह बताया है कि यदि कमरे में बैठे किसी व्यक्ति की उंगली या डाढी बनाते ब्लेड लग जाये तो समीपवर्ती पौधा तत्काल प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। किसी ऐसे स्थान जहां हत्या हुई हो, पशु मारे जाते हों, या शवदाह किया जाता हो, वृक्ष भय की ऐसी प्रतिक्रिया धारण कर लेते हैं, कि उसका प्रभाव लम्बे समय तक उन में बना रहता है। पशुवध तथा शवदाह के समीप वाले पौधों में जीवन के प्रति अनुत्साह बना रहता है। वैज्ञानिक तो अब यहां तक सोचने लगे हैं कि ऐसा यन्त्र निर्मित हो सकता है जो अपराधी का हुलिया तक बता देने में सहायक होगा।

पेड़ पौधों के प्रति पूजा भाव की अपनी परम्परा बहुत पुरानी है। संसार भर में अपना ही एक ऐसा देश था, जहां एक त्यौहार इसी लिए मनाया जाता था, कि उस दिन हर व्यक्ति वृक्षारोपरण करे। इस पर्व को ब्राह्मण पर्व कहा जाता था। अर्थात् वृक्षारोपण को ब्रह्म कर्म के समतुल्य माना गया। महाभारत में तो एक वृक्ष लगाने को सौ पुत्रों से बढ़ कर पुणय माना है। पर दुर्भाग्य हमारा ये कि हम मित्रों की कृतज्ञता न मान कर, जंगल साफ करते जा रहे हैं, वृक्ष उखाड़ते जा रहे है, जिसके कारण ऑक्सीजन और कार्बन डाई आक्साइड का संतुलन बिगड़ रहा है। ऑक्सीजन की जमा पूंजी कम और खर्च बढ़ने से पिछले पचास वर्षों में कार्बनडाई आक्साइड की मात्रा ०.०३० से बढ़ कर ०.०४४ प्रतिशत हो गई है।

कार्बनडाई आक्साइड के अतिरिक कल कारखानों से सल्फरडाई आक्साइड इत्यादि का विष बढ़ता जा रहा है।

टोकियो, न्यूर्याक, तथा लन्दन के कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहां साँस लेने तक में कष्ट होता हैं, जिसका मूल कारण वृक्षों की कमी है। यहां पर फैला हुआ विष मनुष्य देह के लिए प्रतिदिन ४० सिगरेट पीने के बराबर होता है। एक वृक्ष एक ऋतु में वायुमंडल से १३० लीटर पैट्रोल के शीशे का अंश सोख कर उसे लैड फाँस्फेट में बदल देता है। वड़े कारखाने जो ताप पैदा करते हैं, स्वयं प्रकृति की गर्मी की असह्य मात्रा को भी संतुलित रखने में ये वृक्ष ही सहायक होते हैं। हमारे देवता ये वृक्ष यदि इस फैलते विष को पीयें नहीं तो हर व्यक्ति रोग शय्या पर पड़ा हुआ पाया जायेगा।

एटामिक रैडिएशन (अणुविकरण) जैसे हानिकरक प्रभाव से भी वृक्ष हमारी रक्षा करते हैं। एक महा विद्यालय में हुई शोधों से यह माना गया है कि साधारण घास तक रेडिएशन से रक्षा करती है अतएव पृथ्वी में हरीतियां अभिवृद्धि, वृक्षारोपण, पुष्पवाटिका अभियान को नैतिक कर्त्तव्य के रूप में पूरा करना उचित है, शहरों में तो लान और पार्क इतने अधिक आवश्यकता हैं कि उन्हें मनुष्य जीवन का हृदय ही कहा जा सकता है, वह दिमाग को केवल दृष्टि मात्र से निद्रा प्रदान करने वाली शीतलता देते हैं। यदि शहरों में पार्क न हों तो पागलपन की मात्रा इस कदर बढ़ सकती है जिसकी सम्भाल ही दुष्कर हो जाये। जेट हवाई जहाजों, भारी मात्रा में रेलों, वसों, भार वाहनों तथा फैकटरियों आदि के सारे ग्रल से कानों में सीधा आघात पहुंचता है। वृक्ष न हों तो यह शोर गुल ही लोगों को वहरा वना दे। हर समय वृक्षों के पत्तों की संनसनाहट हिलते रहना, वायु से सीधा सम्पर्क, हमारे शोर गुल को पकड़ना,

अपनी हलचल से पंखे की तरह हल्का करना, दूर हटाना, सृष्टि रचना का एक आवश्यकता पहलू बन रहा है।

घरों के आस-पास वगिया, लकड़ी के गमलों छोटे-२ पौधें हमारे लिए दोहरी सेवा करते हैं, हमारी गन्दी वायु को जज्ब करना शोधना तथा सुन्दरता का रंगरूप हमारे कौशल का एक निराला अभियान बनता है। बात बढ़ती जा रही है अब तो यह भी एक ललकार वन गई है कि हम पाप न को, पौधे वाल-रहस्य खोल देंगे, विज्ञान की प्रगति मानव जीवन को शोभायमान करने में वड़ा उपकारी सिद्ध हो रहा है।

स्थूल शरीर इस सूक्ष्म गति विधि का वाहन मात्र है वस्तुतः सूक्षम सूत्र हमारे सत्कृत होने के नित नट राज खोल २ कर हमें सच्चे अर्थों में भगवान के प्रति कृतज्ञता पूर्ण अपनी श्रद्धांजलि देने में सहायता दे रहे हैं। यही अद्‌भुत लीला उस महान अद्‌भुत की स्तुति गीत प्रस्तुत कर रही है

उन्नीसवीं भेंट

शान्तिनिकेतन विश्वविद्यालय के आचार्य कृष्ण मोहन एक मित्र के साथ प्रातःकाल, एक दिन भ्रमण के लिए बाहर निकले। भ्रमण का रास्ता गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर की कोठी के बाहर से लगता था। बाहर से हीदोनों सज्जनों ने देख लिया, गुरुदेव अपनी वाटिका में घूम रहे थे। शुभ विचार की प्रेरणा मिली कि चलते-चलते गुरुदेव को नमस्कार तो कर दें। ये सज्जन तो गये थे आशीर्वाद लेने, पर सोच और विचार की मूर्ति, कला और ज्ञान के स्रोत, हर समय अपनी धुन में ही व्यवस्त रहने वाले हैं, उसी आदेश में, गुरुदेव ने नमस्कार का जवाब तो क्या देना था, दोनों सज्जवों से प्रश्न ये कर मारा कि "आचार्य वर कभी सोचा है कि भीष्मपितामह को अवतार क्यों नहीं कहा गया।" जबकि महाराज कृष्ण भी अवतार बन गये,

नारद मुनि को भी अवतरित कर दिया, और अवतारों की वड़ी सूची प्राचीन काल की देखने में आती है पर भीष्मपितामह जैसा विद्वान्, नेता, और ज्ञानी को खोज करना कठिन है, जिसकी गवाही महाभारत का शान्ति पर्व ही दे देता है, जहां नीतिशास्त्र की खाल उधेड़ कर रख दी गई है, शान्ति का स्रोत बहा दिया गया हैं। आचार्य ने उत्सुकता से प्रश्न तो सुना, पर वो उत्तर के मूड में तीन थे, तुरन्त ही कह

बैठे—" न तो उन्हें कभी ये प्रश्न सूझा था, न ही इसका उत्तर विचार में आ रहा था।" गुरुवर ने आचार्य के मित्र से भी पूछा, वी भो दाँतों में उंगली दबा कर रह गये। दोनों ने श्रद्धा-पूर्वक गुरुवर से ही प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की प्रार्थना की। गुरुदेव बोले कि, भीष्म पितामह की विद्वता, उनकी भीषण प्रतिज्ञा, कि वह आयु पर्यन्त विवाह न करेंगे—स्वयं ही एक श्रेष्ठतम उदाहरण है, उनकी नीति और बुद्धिमत्ता, सारे राज दरबार की शोभा थी, क्षत विक्षत हुए तीरों की सेज पर अपने आप को लिटा देना उनकी अध्यात्मिक शक्ति का एक प्रतीक था, वे इतने उच्च संकल्प के स्वामी थे, कि अपनी इच्छानुसार मृत्यु को भी टाल सके थे, और किसी विशेष दिशा और समय में अपने शरीर को छोड़ने के पाबन्द हो गए, संसार भर में इसका उदाहरण ढूंढ़ते ही नहीं मिल सकता, सरकंडों की चटाई पर, जख्मी जिस्म को जिन्दा रहने देना, निज कल्पना की उनमें बड़ी छलांग और फिर ऐसी व्यथित अवस्था में बहोशो-हवास, युधिष्ठर महाराज के प्रश्नों का उत्तर देते रहना, उनके ऊँचे दिल और दिमाग की एक साक्षात तस्वीर थी, इन तमाम गुणों के असाधारण सामर्थ्य और के अतिरिक्त भी, ये प्रश्न, कि उन्हें अवतार क्यों नहीं माना गया, गुरुवर को स्वयं सता रहा था। अवश्य वो उस अवस्था में अपने जीवन की गलतियों को सोच पा सके होंगे, यद्यपि परसुराम जैसे को दस अवतारों में स्थान मिल गया था, सर्वोपरि वो तो बालब्रह्मचारी भी थे। बात सोचते-सोचते गुरुवर भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य को भी तुलना ले बैठे।

द्रोण आचार्य होने के बावजूद भी रण विद्या के माने हुए शूरवीर थे, कौरवों के दरबार से पूरी प्रतिष्ठा के अधिकारी परन्तु अपनी हालत यह कि अपने लिए एक गाय नहीं पाल सके

थे, एक बार विचारी ब्राह्मणी (उनकी धर्मपत्नी) ने चावल धोने का पानी देकर बच्चे को दूध की वजाए देना पड़ा, परन्तु उस आचार्य ने कभी अपना धर्म, अपना ईमान, अपना विश्वास बेच नहीं डाला था। अपितु उस अवस्था में पूर्णतया सन्तुष्ट और शान्त होते हुए नियमानुसार जीवन विताने में विश्वास रखते रहे। वह जो जानते वही मानते थे, उस पर पावन्द रहते हुए वे जीवन निभा लेना अच्छा समझते थे।

जवकि भीष्म पितामह सब कुछ न जानते हुए भी, अपनी सत्ता के बलबूते पर अपना अधिकार जमा सके, कौरवों को नहीं बदल सके, उनके अन्न से विरक्त होकर अपना स्वतन्त्र जीवन नहीं बिता सके, अपनी आँखों अत्याचार और अन्याय को साक्षात् देखते हुए भी वे अपना संकल्प अपने विचार और अपने आदर्श समय और काल के माध्यम में प्रस्तुत नहीं कर सके, समय पर भीष्म पितामह कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य की तशखीश नहीं कर सके, बहुत कुछ जानने पर भी ऐन समय पर फैसला नहीं कर सके, आँख मूंद लेना, चुप्पी साध लेना, अधिक प्रिय वन बैठना, नीतिशास्त्र के माने हुए सिद्धार्थी, समय पर अपनी राय की कीमत नहीं डलवा सके, जोकि एक बड़ी भारी भूल थी, शिक्स्त थी, हट थी, जन उपलब्धि थी।

यही कमी भीष्म पितामह को अवतारों की श्रृंखला में न विठा सकी।" बात बड़ी पते की थी। गुरुदेव का फैसला, अतीत के अनुभव, वास्तविकता और तारतम्य की आवाज दे रहा था। भीष्म पितामह के अपने समय में न सही, हजारों सालों से उसकी ये कहानी दोहराई जा रही है। द्रोपदी का उलाहना "कि जब भरे दरबार में नारी तिरस्कार हो रहा था वो क्यों कर चुप रहे," कथानक द्वारा, नाटकों द्वारा, चरित्र-चित्रण द्वारा, निरन्तर, चित्र पटल पर पेश किया जा रहा है।

सचमुच भीष्म पितामह से सहानुभूति भी होती है, परन्तु देखा जा रहा है कि वे बड़े आदमी इतिहास बनाया करते हैं— जो सोचे हुए और किये हुए के दो पहियों से व्यक्तित्व की गाड़ी हांका करते हैं। केवल सोचने वाले, सोचे हुए को अमल न ले आने वाले, इतिहास के रथ से फिसल जाया करते हैं। इतिहास अपने दामन में स्थान ही उसे देता है जो ज्ञान और कर्त्तव्य के साथ-साथ पालन में निखर उठता है। विद्वान बहुत देखे पर ज्ञानी वो ही निकले जिन्होंने प्राप्त हुई विद्या को अपने अम्ल का पानी दिया। गरीब रावण का जलूस, काले कपड़ों के साथ चमकती तलवार के साथ, हर साल निकाला जाता है। ऐसे आदमी के बुत को जला देने में प्रत्येक प्रसन्नता और दिल बहलाव की श्रद्धांञ्जलि देता है। जिसकी तह में नुक्ता फिर वही कि ज्ञानी होने के अतिरिक्त भी रावण अपनी संभाल की सँभाल न कर सका। यही गलती भीष्म पितामह ने अपने समय में कर दिखाई और यही गलती हम अपने मध्य दोहरा जाने पर लग रहे हैं। ये अद्भुत अवस्था मेरी इस मेंट की प्रतिमा है।

हम भी बड़े २ ग्रन्थ हांक जाते हैं, गर्व से महापण्डित होने से कम पर अपनी पदवी स्वीकार नहीं करना चाहते परन्तु पड़ी हुई बात की क्रिया में तबदीली किसी २ के भाग्य में उदय होती है, यह एक बड़ी अद्भुत अवस्था है जो आज के धनुर्धारी नेता गण में प्राय: चल रही है जिसका परिणाम यह कि खोखलापन बढ़ रहा है, शरीर चमक रहा है, आत्मा मैली की मैली निज यात्रा में धूमिल हो रही है। पढ़े हुए पाठ को सक्रिय कर सकने में केवल एक साधन बनता है, जिनका शुभ नाम है संकल्प विरलेजन पढ़े और गढ़े को गाँठ लगा पाते हैं। शिव संकल्प एक महान् विभूति है जो भाग्य में आती है, आत्मवान के

अध्यात्मिक के, प्रतापी के, दिव्यता वाले के, जो सही कुंजी बनती चरित्र चित्रण की ओर व्यक्तित्व उभार की इसलिए इसे व अत्यन्त आवश्यक मानता हुआ, संकल्प बल में पूरा विश्वास रखता हुआ इस सद्प्रेरणा के गुणगान में कुछ उदाहरण प्रस्तुत करके श्रेष्ठता का समर्थन करना चाहता हूं।

(क) राजा रथवीति ने एक महान् यज्ञ रचाया। जिसमें बड़ी रौनक, धूमधाम थी, इसमें अभी अत्रि के सुपुत्र रचनाना को भी निमंत्रित किया गया। यज्ञ में बैठी राजकन्या रचनाना के दिल को भा गयी। अत्री मुनि ने राजा से अपनी सुपुत्री के विवाह का सुझाव अपने सुपुत्र के साथ पेश भी कर दिया, जिस पर राजा ने रानी से विचार विमर्श की मोहलत मांग ली। परन्तु जब महारानी से राय की गई, महारानी ने इस सुझाव को अस्वीकृत कर दिया, यथा वे स्वयं एक राजऋषि की बेटी थीं, वे अपनी बेटी को केवल एक ब्रह्मचारी को कैसे दे सकती थी, जब तक रचनाना राजऋषि न बन जाये। रचनाना को ये निर्णय ऐसा चुभा, कि उसने तपस्या साधली, और राजऋषि की पदवी प्राप्त कर पायी। इसके पश्चात सुझाव फिर पेश हुआ और राजऋषि रचनाना को राजकन्या सौंप दी गयी।

(ख) संकल्प ऐसा है जैसे कदम उठा लेना। कुरूक्षेत्र में एक ऋषि रहते थे जिसका नाम मुदगिल था। उनका नियम यह था, कि खेत से काटे अनाज के बाद जो दाना दाना धरती पर गिरा होता, उसे चुन कर अपने लिए अन्न स्वीकार करता। उन दिनों में न तो अनाज की कमी थी, न ही उनकी प्रतिष्ठा की। परन्तु अपने परिश्रम से, बिना दर दर से माँगे, वे अन्न ग्रहण में तपस्या द्वारा अपना स्वाभिमान लेते थे। उनके आत्म सम्मान इतना था, कि किसी कारण वो अपनी इस मान्यता से

हट नहीं पाते थे। एक दिन एक और ऋषि ने उनकी परीक्षा लेनी चाही। वे अपने आश्रम के अनेक ब्रह्मचारी अतिथि बना कर वहाँ ले आये। परन्तु मुदगिल ऋषि ने सहृदय उनकी सेवा शुश्रषा की। दाना दाना चुने हुए अन्न में से उनके आतिथ्य में कोई कमी न रखी गयी, जिस पर वे ऋषि बड़े प्रभावित हुए, और उनको वरदान भी दे गयें कैसा वक्त होगा जब परीक्षा लेने वाले भी तपस्वी विचार के धुनी और परीक्षा देने वाले भी परमनिष्ठा के मूर्तिमान हुआ करते होंगे। जीवन निर्माण की ये रूप रेखा बिचित्र भी लगती है, न मानने के योग्य भी और प्रतीक भी ! सम्भवतः यही कारण है कि आज तक उन महान् आत्माओं के नाम पुण्य स्मृति बन रहे हैं।

(ग) एक ऋषि अपनी कुटिया में विराजमान थे। "भवति भिक्षाम देहि" स्वर उनके [कानों में पेड़ी। ऋषि अपने आसन से उठ दरवाजे पर आये। तपस्वी दुर्वासा ऋषि कुटिया के बाहर पधार चुके थे—महर्षि मुदगिल अपने को धन्य मान कर दुर्वासा ऋषि को कुटिया के भीतर ले गये, जो कुछ मौजूद था प्रसाद के रूप में भेंट किया। उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया और अपने आश्रम को लौट गये। ये घटना उन दिनों की है जब महर्षि मुदगिल तपस्या कर रहे थे। तपस्या की अग्नि जहां मन में अग्नि पैदा करती है वहां साधक को शुद्ध, उज्जवल भी बनाती है, वहां मन की गति को तीव्र और कुशाग्र भी बनाती है। साधक के लिए यह समय एक कसौटी का होता है। अगर इस साधना में मन वश में आ जाये तो उसका अग्नि रूप विराट आकाश को भी चीर कर दूर से दूर बिन्दु तक जा पहुंचता हैं और साधक के लिए सिद्धियों का भंडार खुल जाता है। एक दिन, अन्नमय कोष की पवित्रता का क्रम महर्षि मुदगिल ने अपने लिए नियत कर रखा था, जब वे बिना स्वाद के अन्न

का विचार किये, सप्ताह भर में केवल एक दिन एक ही समय अत्यन्त पवित्र अन्न का भोजन किया करते थे। एक उसी दिन प्रातःकाल साधना से निवृत होकर दोपहर तक खेतों में गिरे' हुए दाने चुनने में लगाकर कठोर तप के पश्चात उन्हें अन्न ग्रहण करना होता था। कठोर तप से सप्ताह भर के विना भोजन के वे पहले ही क्षीण हो चुके होते थे, परन्तु आत्मा की शक्ति, उत्साह से उनका नियम पालन कम नहीं हुआ था। ऐन खाना खाने के समय महर्षि दुर्वासा फिर पहुंच गये और "भवति भिक्षाम देहि" की ध्वनि पायी गयी। मुदगिल ऋषि चित विभोर हुए, व्रत से निवृत होने के ऐन समय में, यह भिक्षाम् देहि, का स्वर मुदगिल के चेहरे को उज्जवल कर रहा था, उन्होंने हंसते हंसते अपना खाना दुर्वासा ऋषि को समर्पित कर दिया और इस प्रकार मन का नियन्त्रण करने का नया पाठ इतिहास के लिए छोड़ दिया। दुर्वासा तो जानबूझ कर उसकी परीक्षा में लग रहे थे, वे बार बार नियत दिन तथा नियत समय पर पहुंच जाते तथा व्रति मुदगिल ऋषि की परीक्षा में लगे रहे। मुदगिल ऋषि को कई मास से भोजन नहीं मिल पा रहा था। केवल जल ही एक सहारा रह गया था। इस निर्बलता के अतिरिक्त भी एक दिन दो मुट्ठी भर दाने एकत्रित किये थे, जिन्हें भोजनशाला में रखा ही था कि फिर वही "भवति मिक्षाम् देहि" की गूंज सुनाई दी। पर मुदगिल ने महर्षि का फिर भी सम्मान किया। फिर एक दिन ऋषि के व्रत खोलने का समय था, उनमें उटने की तो हिम्मत न थी। कई बार कोशिश करने पर भी शरीर ने साथ न दिया। ऋषि ने वाहर से फल तोड़ने का संकल्प किया परन्तु द्वार तक पहुंचना भी दुष्कर रहा। व्रत खोलने का समय हो चुका था। भगवान सूर्य अस्त हो रहे थे इतने में दुर्वासा को

फिर पुकार कानों में पड़ी। आज मुदगिल दुःखी थे, यह सोचते हुए कि वे आदरणीय अतिथि का किस प्रकार सम्मान करेंगें ?

इसी कल्पना ने उनकी आँखों में पानी ला दिया और वो दुर्वासा के चरणों में गिर पड़े। उनकी बन्द जबान उनके उज्जवल पवित्र मन की झंकार दे रही थी। दुर्वासा भांप गये और बोले—"अब तुम साधारण मानव नहीं रहे, तुम्हारे भीतर का ऋषि जाग चुका है।" इतना कह कर दुर्वासा ने मुदगिल को गले लगा लिया। मुदगिल की निराशा उसी दिन उनकी समाधि में बदल गयी। ये है अद्‌भुत अवस्था जो किसी साधक की किसी परीक्षा में सम्भवतः हो सकती है। जिसका विवरण हमारा पुरातन इतिहास अपने दामन में संजोये, सम्मान का पात्र हो रहा है।

उन महान आत्माओं का शरीर तो था ही परन्तु किसी विलक्षण अध्यात्म शक्ति की तालश में ये अपने को कड़े से कड़े व्रत में डाल सकते थे, ये बात हमारे समझने की है। हमारे अतीत को एक नहीं अनेक ऐसे उदाहरण के स्वामी बनने का एक बड़ा सौभाग्य है। भगवान जैसी महान शक्ति को प्राप्त करना तभी तो उनके सौभाग्य में हुआ करता था।

ऊपर वाली तीन घटनाओं से हमारा संकल्प नयी से नयी उड़ान लेता है, महारानी को योग्यवर मिल रहा था, अपनी कन्या के लिए पर ये विचार कि वे स्वयं एक राजर्र्षि की बेटी थी, अपनी बेटो को उस पद से वे कैसे दूर रख सकती थीं, ब्रह्मचारी रचनाना ब्रह्मचारी तो थे ही परन्तु राजऋषि पद के लिए तुरन्त चौंक पड़ें, इन दोनों चरित्रों में हमें अनेक पाठ भांपने को मिलने है, यज्ञों में मुलाकातें योग्य और

अयोग्य की परख, निष्ठा और संकल्प हमारे अतीत के सामाजिक जीवन का ऊंची स्तर पेश करते हैं।

(घ) राजा हरिश्चन्द्र की कहानी सतयुग की एक बेमिसाल दृष्टान्त पेश करती है ये कथा हमारी बहुत जानी-पहचानी है जिसके दोहराने का कोई लाभ नहीं, परन्तु एक ऋषि का एक राजा की परीक्षा कर सकना, राजा का निर्विवाद परीक्षा में उत्तर पड़ना, उस समय के संकल्पों का एक विचित्र गठ जोड़ देता है, जो कि सत युग की महिमा का एक पहलू बनता है। राजा का सत्य के लिए अनेक दुःख स्वीकार करना, रानी की दुर्दशा, बालक की आहुति, शवदाह के लिए शुल्क की अविद्यमानता, काल और समय की सेवा में अपने को सतपात्र बनाते हैं, रोंगटें खड़े करने वाले बनते हैं। परन्तु मानवता के नाम पर एक बहुत ऊंचा प्रतीक पेश करके समाज और लोक के लिए एक पाठ प्रस्तुत करते हैं।

(ङ) तपस्या की भी कोई हद हुआ करती थी। संस्कृत में बाल्मीकि शब्द दीमक का अर्थ रखता है। तपस्या में शरीर का निढाल हो जाना और बात है पर तपस्या में उस पर दीमक का मुल्लमा चढ़ जाना और अर्थ रखता है। ये वाल्मीकि ऋषि जिन्होंने रामायण को अमर ग्रन्थ बना दिया, इतने तपस्वी बन निकले कि उनके ऊपर दीमक का खोल चढ़ गया। संकल्प का कोई क्या कहे इसकी उड़ान की कोई अवधि दीख नहीं पाती।

(ङ) च्वयन ऋषि तपस्या में लग रहे थे एक राजा शिकार खेलने उस बन में आये। राजा श्रीयानी अपनी सुकन्या को भी साथ ले गये। राजसुपुत्री च्यवयन ऋषि को मिट्टी का ढ़ेला

समझ कर उन पर कंकड़ मार बैठी जिससे ऋषि को दुःख हुआ। जब राजा अपने शहर लौट गये वहां कोई सामाजिक गड़-बड़ हुई। जिसकी जांच पड़ताल में निष्कर्ष यह मिला कि राजकन्या ने एक ऋषि के शरीर को दुःख दिया था इसलिए वहां अशान्ति फैली थी। राजा ऋषि से क्षमा याचना के लिए वन में गये। निज कन्या को भी साथ ले गये, और प्राश्चित में सुकन्या को ऋषि के समर्पण कर आये। समय पाकर ऋषि की तपस्या समाप्त हुई। राजकन्या से इनका विवाह हो गया। उस समय के सामाजिक जीवन का यह दृष्टान्त कि गलती हो सकती थी, समाज में विध्वंस की जांच पड़ताल भी हो सकती थी, प्राश्चित में उसका हल भी ढूँढ जाता था, ये रूप रेखा समाज और समय की अपनी मिसाल बनती है।

(च) ऊपर वाली बातें तो पुरानी हैं। मानवता अब भी उजड़ नहीं गयी। बाबा कैलाश नाथ त्यागी ने ६५ वर्ष की आयु में सन्यास ले लिया। अपने जन्म स्थान बड़ा गांव को उचित स्थान मान कर वहां एक मन्दिर बनाने का संकल्प कर डाला, ग्राम ग्राम, नगर नगर, घूम कर केवल एक पैसा प्रति व्यक्ति एकत्र करने का विचार बनाया था, जिस पर पाबन्द रहे और ६ हजार की रकम इकट्ठी कर डाली' जिससे १९५७ में वहां मन्दिर खड़ा करा दिया। कुछ दिनों के बाद गांव वालों ने इच्छा प्रकट की, कि क्या ही अच्छा होता जो बाबा एक स्कूल भी चालू कर देते। बूढ़े सन्यासी को जब यह विचार दिया गया उन्होंने दो दो रुपये प्रति व्यक्ति एकत्र करके वहां एक औधोगिक विद्यालय एक लाख के खर्च मे बना डाला, जहां अब भी ३०० विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं, इसी तरह बाबा ने इस कथानक को सही बता दिया है कि बूद बूद से घड़ा भरता हैं। यह धुन, यह सद्प्रेरणा, यह सत्पात्रता है,

आशीर्वाद है, भगवत कृपा है, जिसे मिल जाये, उसके लिए तख्ता दुनिया पर एक अजब करिश्मा है अथवा संकल्प एक कदम है पर जिसका उठ जाये ।

(छ) बात १९७२-७३ की है जब महाराष्ट्र में अकाल आ गया । एक कौंदीबा गायकवाड़ औरगांबाद के करीब गांव से बम्बई अपनी रोटी तलाश करने चला आया, और आते ही झाड़ू तैयार करके रोटी कमाने लग पड़ा । बम्बई में उन दिनों भीख मांग करके पैसे बना लेने का पेशा बढ़ रहा था । विशेष तौर पर अंधों के लिए कौंदीबा आठ साल की उम्र में अंधा हो चुका था, जब उसे चेचक का प्रहार हुआ था । बम्बई आने पर उसकी आयु पच्चीस साल की थी । एक कालोनी में वे अपने परिचित परिवार के साथ रहता था, दिन भर भिक्षा मांग लाता और अपना गुजारा करता था ।

५ दिसम्बर १९७५ का दिन था जब वे अपनी कुटिया में अपने मित्र टीकाराम जम्बूरी और उसकी धर्मपत्नी के साथ बैठा था ।

उस कालोनी के मध्य में एक कुंआ था, कुंए के भीतर सब्ज धारा वाला पानी नजर आ रहा था, जिसके चंद मिलीमीटर नीचे कुछ दिखाई नहीं पड़ता था, तब यह कुंआ अँधा कहलाता था, जिसके ऊपर कुछ वृक्षों के तने रख दिये गये थे, ताकि कोई उसमें गिर न पड़े । कुएं की चार दिवारी भी नहीं, इधर-उधर की ईंटें गिर गिर कर, कुएं को गहराई से दूर कर रहीं थीं । समय दोपहर का था, जब सब लोग अपने काम काज में घर से जा चुके थे, परन्तु कौंदिवा प्रतिदिन की लगभग ५-६ रुपये की भिक्षा प्राप्त करके लौट चुका था । अकस्मात उसे आवाज सुनाई दी कि कुंए में कोई गिर गया है, उस समय कौंदिवा खाना खा

रहा था, उसने खाना छोड़ दिया, उसके संकल्प ने जोर पकड़ा और उसने प्रार्थना की कि उसे कुंआ पर, जिसमें किसी के गिर पड़ने का समाचार मिल रहा था, पर पहुंचा दिया जाये। कुंए पर पहुंचते ही, कमीज उतार फैंक, वह नेत्र हीन सैकिंडों में कुए के अन्दर कंकड़ों के मध्य पहुंच गया। बताया उसे यह गया था, कि एक लड़का पानी भर लेने के प्रयास में फिसल गया था, एवं अन्दर गिर चुका था। उसके दो साथी कोशिश कर चुके थे, कि किसी तरह उसका मित्र अरविन्द नजर आ जाये, परन्तु व्यर्थ, वो चौदह साला अरविन्द लापता बन रहा था। कौंदीवा बचपन से तैराक और पुरुषार्थी था। अपने समय में कुंओं के अन्दर से गिरी हुई वस्तु को ढूंढ़ लाना उसके बायें हाथ का खेल हुआ करता था, परन्तु अब तो वो नेत्र हीन, निढाल, कोपोषण और दरिद्रता का शिकार था, कोंदिबा ने गोता लगाया, उसके हाथ लोगों से फैंके हुए टूटे घड़े के टुकड़ों के सिवा कुछ न लगा। निराश कोंदीबा पानी की सतह पर लौट आया, लम्बा साँस लिया, अधिक गहराई में पहुंच जाने के लिए फेफड़ों को समर्थ किया, पर कुएं के अन्दर धंसी हुई रेत में उसके पैर फिसल रहे थे, अरविन्द को गिरे हुए दो मिन्ट से अधिक समय हो रहा था, उस बालक की चाची चिल्ला रही थी, परन्तु किसी की हिम्मत न पड़ी, कि वो अन्धे आदमी का हाथ बटायेअन्धे को भला कोई सहायता भी दे तो कैसे दे। अन्धा जो स्वयं कुदरत का दुतकारा, अपने में आप शर्मिन्दा, एक बार फिर नीचे गया, पर निराश फिर ऊपर उभर आया, तीसरी बार गोता लगाने पर कोंदिबा को लड़के की सांस चलने की आवाज सुनाई दी, गदले पानी में वो बेचारा देखता भी तो क्या। इतने में तीन पहलवान वहां से गुजरे, परन्तु अपनी अपनी मजबूरी पेश करके वह भी

चलते बने, कोंदिबा चकनाचूर हो रहा था, उसके अंग दर्द कर रहे थे, परन्तु बालक अन्दर की झाड़ियों में फंस रहा था, उसके सांस जवाब दे रहे थे, परन्तु कोंदिबा को ईश्वर प्रेरणा बल दे रही थी, शुद्ध विचार का वो स्वामी, सत् प्रेरणा से सत्कृत संकल्प शक्तिका वो सत्पात्र, फिर जुट गया, जोर से लड़के की टांगों को उसने पकड़ लिया, झटका दिया, बालक अन्दर के गन्दे से बच कर कोंदिबा के हाथों पड़ गया, इन हालात में आनन फानन, किसी दिव्य शक्ति के संयोग से भूख का मारा वो भिखारी, दृढ़ता से लड़के को उठा कर कुएं के किनारे पर फेंक पाया। उसमें दम नहीं था कि वो बालक के बारे में कोई राय दे सके।

बाहर खड़े लोगों ने बालक के सांस चालू करने की तरकीब की, उसे हस्पताल ले गये। कोंदिबा भी किसी मजदूर भाई की सहायता से अपनी झोपड़ी में पहुंच गया, उसके मित्र की धर्मपत्नी उसे शाबाश की थपकी दे रही थी, उसने आधा बचा खाना समाप्त किया, और नींद में पड़ गया। शाम को एक सिपाही आया और यह कह गया कि अगर कोंदिबा उसे पाँच मिन्ट तक हाथ न डाल लेता तो अरविन्द दूसरे लोक चल पड़ता। सिपाही ने अरविन्द के स्वास्थ में लौटने की सूचना भी दी।

अगले रोज अरविन्द स्वयं कोंदिया के पास आया, उसके पांव छुए, अपनी कृतज्ञता का प्रकाश किया। कोंदिबा ने एक जान बचायी थी जिसका मुकाबला नहीं था। कौदिबा को आखिर रोटी की तलाश करनी थी, वो खाली बोरी लेकर बम्बई की सड़कों पर अपने भाग्य ढूंढ़ने लगा, परन्तु उसके बारे में उसकी तस्वीर अखबारों का विषय बन चुकी थी, उसके उत्साह और साहस का चर्चा बन रहा था।

गवर्नर और चीफ मनिस्टर बम्बई ने, अन्य परोपकारी जीवों ने, मिलाकर १२६७० रुपये की राशि उसे पेश की। उसे बेनर्जी इन्डस्ट्रीयल होम में अन्धों के साथ जगह मिल गई, जहां उसने कुछ कला कौशल सीख लिया, उसका विवाह भी हो गया, और वो आज सन्तोषजनक जीवन बिता रहा है।

यह सारा खेल तमाशा केवल एक संकल्प का कालान्तर है "कि कोई कुएं में गिर गया है और मुझे उसे बचाना है।" यही एक धारा उस मानव को कहां से कहां ले गई। इस प्रकार मानव वो अपने भाग्य भी बदलता है दूसरों के भाग्य भी बदलता है, अपना घर भी बसाता है दूसरे का भी आबाद करता है, यह विचित्र और अद्भुत लीला है, जिसे हमें अपने मस्तिष्क में स्थान देना है।

(ङ) एक यात्री आगरा से रेल द्वारा पास के स्टेशन को जा रहा था, जब प्लेटफार्म पर पहुंचा तो उसने एक सात साल के बच्चे को अकेला हाँपता हुआ, नंगा, प्लेटफार्म के फर्श पर पड़ा पाया। वो यात्री रुका, उसे उठा कुछ सहायता करना चाहता था, परन्तु साथ वाले मित्र ने कहा—"अजी रहने दो न, यह ऐसा ही चलता है, यह गरीब पैदा भी ऐसे होते हैं, और मरते भी ऐसे ही हैं, इनमें किस-किस पर कोई ध्यान दे" पर यात्री से रहा न गया उसने बच्चे को गोद में लिया, ट्रेन में सवार पास वाले स्टेशन पर उतर कर बच्चे को ईसाई हस्पताल ले गया, वहां एक नर्स ने सहसा बच्चे को गोद में ले लिया, यात्री का धन्यवाद दिया, वो तुरन्त बालक की सेवा में लग गई। यात्री अपनी राह लेता बना, और प्रसन्न था कि उसने दूसरों की राए पर ध्यान न देते हुए अपनी आत्मा की आवाज को सम्मानित किया था—यही उसकी बड़ी उपलब्धि थी, कि उसने

सुने को अनसुना कर दिया; और अनदेखे को देखा कर लिया फिर नाटक ऐसा देखा कि एक घटना से कितनी आत्माओं का उद्धार हो जाता है। मुझे तो निम्नलिखित पद बड़े प्यारे लगते हैं।

"ढूंढते फिरते हैं भगवन को कभी मन्दिर में कभी मस्जिद में,
कैसे बन्दे है कि भगवान की पहचान नहीं
वो तो हर घड़ी हर जगह हर चीज में रहते हैं
वो तो हर एक के हैं किसी खास के महमान नहीं।"

(ट) संकल्प बड़ी क्षणिक चीज है आई और गयी। पर जिसने उसे पकड़ लिया उसके जादू का खेल हो गया और जिसने उसे जाने दो, ट्रेन से मिस हो गया। मि० राकफोलर जब स्ट्रेन्डर्ड, आएल कम्पनी के चेयरमैन लगे, एक दिन अपनी वर्कशॉप में निरीक्षण हेतू चले गये, और उस स्थान पर रुके जहां तेल साफ किया जाता था। तेल साफ करने के पश्चात पीपों में बंद किया जाता था और पीपे सीलबंद किये जाते थे। ध्यान पूर्वक होने की ये अवस्था, उन्होंने गिना, कि पीपे का ढकना रांगे के टांकों में भरा जाता था और पूरी ३९ बूंदे रांगे की प्रयोग में लायी जाती थी, राकफीलर महोदय को प्रश्न हुआ कि ३९ बूंदे क्यों लगती हैं, कम और अधिक क्यों नहीं। इसका उत्तर फोरमैन भी न दे पाया। चुनाचे आज्ञा दी कि कल से ३८ बूंदे काम में लायी जाये। जो कि अगले रोज टैस्ट के वाद सील बंद उतनी ही सुरक्षित पायी गयी जितनी ३९ बूंदों से।

चेयरमैन का आर्डर था, अगले रोज से एक बूंद कम ही करके, मि० राकफीलर ने अपनी कम्पनी का ७.५० लाख

डालर प्रति वर्ष का खर्चा बचा दिया। फिर पुराना प्रश्न कि एक ही घटक से कहां की कहां यात्रा हो जाती है, यह सचमुच बड़ी मार्के के बात है।

लन्दन में दो भाई रहते थे दोनों मैट्रिक की परीक्षा में बैठे, परन्तु फेल हो गये, इसके बाद पुरानी किताबें लेकर सिविल सर्विस की कोशिश करने लगे, वो पुस्तकें उनके बहुत लाभ की न निकली, गरीब तो वो थे ही, चुनांचे इन पुरानी किताबों को बेचने का प्रयास किया, पर वो बिक नहीं पायी, इसलिए उन्होंने छोटा-सा विज्ञापन दे दिया, जिसके उत्तर में उन पुस्तकों की बड़ी मांग पड़ गयी, इस घटना चक्र में एक ही विचार कि पुरानी पुस्तकें भी अच्छे दामों पर बिक सकती हैं, उन्हें बल युक्त भोजन दे गया, उन्होंने एक छोटी सी दुकान खोलली और जहां कहां से पुरानी पुस्तकें लेकर, पुनः बेच देने का काम कर लिया, काम इतना बढ़ गया, कि अब उनका काम काज ९ एकड़ भूमि में चलता है।

शौक का भी कोई अन्त नहीं, इन भाइयों में अपने कार्य बढ़ा लेने की निष्ठा इतनी दृढ़ थी कि वह वृक्ष की तरह फैलते गए, हजारों पत्र उनके पास प्रतिदिन पुस्तकों के विषय में पहुंच जाते हैं, सैंकड़ों पत्र आ जाते हैं, पाठकों के लिए, जो वहां पढ़ सकें, सुविधा दे डाली गई है, अनेक क्लबों को पाठ तव्य मैगजीन इत्यादि मुफ्त चला रखे हैं। बात मूलतः यह थी कि पुस्तकों की प्राप्ति, पुस्तकों की अत्यन्त मांग, पुस्तक रूपी धन की सुरक्षा का एक मात्र विचार उनके भाग्य तथा उनकी ख्याति का कारण बना। नौ एकड़ भूमि साधारण परिधि नहीं। कल्पना द्वारा उनके कारोवार का अंदाज लिया जा सकता है। मेरा मुख्य उद्देश्य कि संकल्प के सामने सब तुच्छ हैं, भगवान

की सब शक्तियां संकल्पवान के सामने आ खड़ी होती हैं, यह एक अद्‌भुत आशीर्वाद प्राप्त करने के योग्य है।

उत्साह का उचित रूप मिल सके तो नोट करने की बात है कि छोटे से कमरे से उन्होंने काम शुरू किया था जब हिटलर लन्दन में बम्ब फैंक रहा था, लोग वहां पुस्तकें पढ़ने में व्यस्त थे, अब हालत ये है, कि यदि उनकी पुस्तकों की अलमारियों को एक लाइन में लगाया जाये, तो उनकी ३०० मील लम्बाई बनती हैं, जब कि ब्रिटेन के अजायबघर की अलमारियां केवल ७५ मील की लाइन बनाती हैं, उनके यहां ६०० आदमी काम करते हैं, प्रतिदिन ६ और ७ बजे के बीच ५०० से ४०० ग्राहक आते हैं, उनके पास इस समय ४० से ५० लाख किताबें है, और उनकी खोज का ये हाल, व जो पुस्तक कहीं न मिलती हो वहां मिल जाती हैं। चर्चिल क्वीन इलस्वेथ जैसे सम्मानित व्यक्ति भी वहां पुस्तकें ढूंढते पाये गये हैं। वे लगभग २० लाख पुस्तकें नई और पुरानी, एक साल में बेच लेते हैं। दरिद्र छात्रों की सेवा में वे अपना विशेष मान लेते हैं। ये है विस्तार एक लघु से शब्द संकल्प का जो चल पड़ा और लम्बा हो गया। संसार में भिन्न से भिन्न ऐसे दृष्टान्त चकाचौंध करने वाले मिल रहे हैं।

"दिवाना और पागल दुनियां को चलाते हैं, ये एक समस्या थी, पर मैं अपने पर ही क्यों न करके देख लूं, यें एक ही रास्ता उन को दिखाई दिया।" लाहौर का आर्य समाज का वार्षिकोत्सव मनाया जा रहा था। एक वृद्ध वकील उसकी अध्यक्षता कर रहे थे। जब एक विशेष सम्मेलन शिक्षा पद्धित पर विचार विमर्श हेतु उत्सव में निर्धारित किया गया था। प्रधान महोदय ने ब्रह्मचर्य आश्राम पूर्वक गुरुकुल का सुझाव जनता के

सामने प्रस्तुत किया। उनके प्रवचन के बीच में किसी नें प्रश्न किया कि इस नयी शैली को चालू करने के लिए धन कहां से आयेगा ?

इस का उत्तार प्रधान मोहदय ने तुरन्त दे डाला "मुंशीराम जब तक तीस हजार रुपया एकत्र नहीं कर लायेंगें अपने घर में नहीं घुसेंगे।" वास्तव में मुंशीराम जी ही प्रधान थे। जबान से तीर निकल गया, और आर्य समाज की भावी सन्तति की एक प्रतिमा सामने ला दी गई। जब मुंशीराम जी लाहौर से जालन्धर को आये, जहाँ उन्होंने अपने लिए घोड़ा गाड़ी रखी हुई थी, घोड़ा गाड़ी उन्हें लेने के लिए रेलवे स्टेशन पर आयी, पर वे मुंशीराम जी घोड़ा घाड़ी पर अपने घर नहीं गये। आर्य समाज में उतरे वहीं समान रख दिया। सारथि द्वारा घर में सूचना भेज दी उन दिनों ताई जी जो उनकी घर की देखभाल करती थीं, यह खबर पाकर बड़ी क्रोधित हुई, वे ऐसा सोच रही थी कि न जाने क्या हो गया कि मुंशीराम घर से नाराज हो कर आर्य समाज में रहने का संकल्प ले रहे हैं। दुःखी ताई ने मुंशीराम जी के ताया जी को शिकायत की, परन्तु वो अपने हुक्के में मस्त कुछ अधिक न बोल पाये, बच्चे हैरान थे, पिताजी के मिलने की उत्सुकता में उन्होंने मिलने का समय पुछवा भेजा।

समयानुसार ताई जी ताया जी और बच्चे आर्य समाज मन्दिर पहुंच गये, जहां मुंशीराम जो ने अपनी प्रतिज्ञा का वर्णन किया, उस समय किसे क्या मालूम था, कि गुरुकुल किस चिड़िया का नाम है, परन्तु भविष्य की नब्ज पहचानने वाले उस वकील साहब ने अपने मस्तिष्क में एक रूप रेखा देख ली थी, वे धुन के धनी गुरुकुल बसाने के संकल्प में सचमुच पागल

हो गये । इस लक्ष्य में दिल्ली में एक साधारण सभा बुलाई गई, उस सभा में मुंशीराम जी फकीर के रूप में, झोली खोल कर खड़े हो गये, और एक साथी ने, उठ कर यह कहा—

"ये फरिश्ता है, गदाये-वतन हैं, ये फेरी मामूली फकीरी नहीं हैं, खुदा की फकीरी है, ये दिवाना है, पागल है, कौम की लाज के लिए, ये भीख मांगता है, ज्ञान के लिए, अमीरो रईसो, दिल्ली की लाज बचा लो, इस फकीर की झोली भर दो, ये फकीर तुम से भीख मांग कर ही तुम्हें खिलाने वाला है। तुम समझते हो ये फकीर हैं, नहीं-नहीं ये अमीर है। दौलत का नहीं, दिल का इस की फकीरी में कुछ भीख डाल दो, ये अपनी सारी कमाई फूंक चुका हैं, फिर भी धूनी रमा कर, कौम के लिए भीख मांग रहा है, कहता है हिमालय से भी शुभ, ऊंचा ब्रह्मचर्य आश्रम ऋषियों का तपोवन, हिमालय के सामने खड़ा करना चाहता है, यही इसकी आस है, इसे एक ज्ञान गंगा बहा लेने दो, ये वो गंगा होगी, जिसमें हमारे पाप धुल जायेंगे। जिसमें अमीर और गरीब सब नहा सकेंगे।

वतन के ज्ञान की खेती उजड़ चुकी है, उसे हरी भरी करने में इसे मदद दो। सैकड़ों मासूम बच्चे कौमी शिक्षा के लिए तरस रहे हैं, उन सब का माई बाप ये फकीर होगा। गजब तुम्हारे लखते जिगर, इधर उधर बिलायती शिक्षा हासिल करें और तुम्हारा दिल न हिलने पाये, असम्भव चाहो तो ढेर लगा दो चाँदी का, ताकि लोग कह सकें कि दिल्ली अब भी जिंदा है।

इस फकीर की झोली की लाज तुम्हारे हाथ में है, अपना खून यह कौम के पसीने पर गिरा रहा है, कहीं इसकी आँखों से आँसू टपक पड़ा तो कहिर हो जायेगा, यहाँ से जाये तो झोलियाँ

भर कर जाये।"

क्या वो निराला समय था, दिल्ली वालों ने दिल की दाद दी, मुंशीराम की झोली भर दी गई, और ऐसी खूब्ब भरी, कि गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की शक्ल बन गय्यी। शक्ल भी क्या, संसार के लिए एक नया अनुभव, शिक्षा पद्धति का एक निराला दस्तूर, भारत क्या संसार भर क पुरानी वेद मर्यादा का एक नया दर्शन, नवयुवकों का उत्साह —जहाँ सबसे पहले अपने ही सुपुत्रों को इस नयी शिक्षा पद्धति का सत्पात्र बना दिया—रौ चल पड़ी और हमने अपनी आँखों देखा कि उस काल के ब्रह्मचारी जहां जहां भी जाते, वैदिक धर्म की जय से वहाँ का वातावरण गूंज उठता था, यह भी तो एक संकल्प था, जो एक संकल्पवान ने मान मर्यादा पूर्वक, सम्मानित करके भारतीय इतिहास को चार चाँद लगा दिये थे। मुझे तो इस दृष्टान्त में संकल्प का रूप प्रस्तुत करन मात्र है, जो समय की एक अद्‌भुत लीला थी।

मैक्सिको के सागरीय क्षेत्र में, टलाइटिक नाम का एक गाँव है, जहाँ सातशत के लगभग रैड इंडियनज रहते हैं। ये लोग पत्थर के बिस्तर पर सोते हैं, इनका भोजन केवल सीम, फल, मक्की और मिर्च है, यहां के लोग खेती बाड़ी करते हैं, जिसके लिए उन्होंने पत्थर और लकड़ी के हथियार बना रखे हैं, ये जायोटिक कबीला से सम्बन्ध रखते हैं। क्षमा और उदारता में इनकी कोई मिसाल नहीं परन्तु विशेषता ये है कि ये सबके सब अन्धे हैं। इनके गाँव में जो बच्चा पैदा होता है वो जन्म के समय अच्छा खासा होता है, परन्तु जन्म के कुछ सप्ताह बाद उनकी आँखों की ज्योति चली जाती हैं, मानव मात्र ही नहीं, वहाँ सब जीवधारी नेत्र ज्योति से हीन होते हैं।

कुत्ता, चूहा, तोता इत्यादि भी। गांव में एक ही सड़क है, इसके किनारे गांव वाले झौपडियों में रहते हैं, जिनके दरवाजे खिड़कियां नहीं होतीं। पौ फटने पर जंगली जानवर, मेंडक, आवाजे देते है, जिससे लोगों की आंखें खुल जाती हैं, वो काम काज करने लगते हैं। आदमी खेतों में चले जाते हैं, स्त्रियां घरेलू काम करती हैं, वहां की देवियां चरखा कातती हैं, बच्चे पेट के बल रेंग रेंग कर कदम भरते हैं, यही इनके खेल बनते हैं, दिन भर की कड़ी मेहनत के पश्चात् सारे गांव वाले शाम को एकत्र होते है। छोटेमोटे पारस्परिक झगड़े और मतभेद मिटाते हैं।

१९२७ में सबसे पहले मैक्सिको के मशहूर समाज शास्त्री डा० जारोध ने इसकी जांच पड़ताल की और आखिर निष्कर्ष यह निकला कि ये भयानक बीमारी 'पास' नामक एक कीड़े के कारण होती है। एक प्रकार की शहद की मक्खी इन कीड़ों को फैलाती और पालती है, ये मक्खियां १।। इंच लम्बी होती हैं, इस तरह से उनका संसार बढ़ता और चलता है। ये प्रजापति की सृष्टि में अद्भुत और निराला बसेरा है।

अनन्त भगवान के अनन्त रूप, अनन्त प्रेरणा तथा दैवयोग सचमुच कौतूहल पूर्ण है। भावना भी मानव की एक विशेष विभूति है। प्रत्येक के हृदय में जो लेने की हवस, अपना मार्ग निकाल लेने की उत्सुकता सब में व्याप्त रही है। यह भी एक अद्भुत लीला है कि यदि मानव में से भावनाएं निकाल दी जाएं तो शेष जो बचेगा वह नफरत के योग्य होगा, भावनाएं एक दूसरे का जोड़ बनाती हैं भावनाओं के बिना तो मरघट का ही दृश्य दीख पड़ेगा। परमपिता की रचना में भावनाएं भी एक एक बढ़ कर प्रेम सान्निय तथा आत्म त्याग को सत्कृत कर रही हैं, भावनाओं का निरीक्षण अपने में एक महान अद्भुत लीला है।

अचम्भा

"जहां कुछ दिन पूर्व कुछ भी नहीं था"
मैंने लगाई थी अपने गमले में
एक गुलाब की कलम
सीचता रहा प्रतिदिन
देखता रहा उसकी आँखों को
जहां से प्रगट होगा एक दिन जीवन
पर अभी वहां कुछ भी नहीं था
एक दिन प्रातः मैंने पाया
उस पर उगी नई नई लाल लाल पत्तियां
सुन्दर शिशु सी
प्रसन्न था जैसे मैंने दिया इन्हें जन्म
मुझे तो अद्भुत सी लग रही थी।
उस महान कलाकार की रचना
जहां कुछ दिन पूर्व कुछ भी नहीं था
मैं सींचता रहा और देखता रहा
उसका बदला हुआ जीवन
एक सांझ देखी उस पर
एक अध खिली कली
बेचैन रहा प्रतीक्षा थी
आने वाली प्रभात की
जब इस पर खिला होगा
एक सुन्दर फूल
प्रातः उस फूल के साथ
खिल उठा मेरा तन मन
इस पूरे जीवन काल में
नहीं देख पाया था
उस पर लगे कांटों को
क्योंकि केवल फूल
देखना चाहता था
जहां कुछ दिन पूर्व कुछ भी नहीं था —दिवानकुल भूषण

बीसवीं भेंट

प्राय: यह अवस्था—कि भगवान इतना कहां सर्वव्यापक तथा सर्वशक्तिमान हो सकता है, जो प्रत्येक के कर्मों की साक्षी ले सके, उसके अनुसार तोल माप कर सके, तथा परिणामत: फल दे सके, न समझ में बैठती है, न हमारे मस्तिष्क में स्थान ले सकती है, खास तौर पर इसलिए भी हमने भगवान की सर्वव्यापकता तथा सर्वशक्तिमता का पूरा अन्दाजा लगाया ही नहीं। इसी कारण मानव भगवान का भय नहीं मान रहा, पाप से बच से नहीं रहा, तथा उसके न्यायालय से दूर दूर भाग रहा है। दलील के तौर पर भी कई बार इस सत्य को हम ठुकरा कर, अपने को निर्विघ्नता पूर्वक, दुष्कर्मों में लगाये रखने में सन्तोष लेते हैं, अथवा यदि किसी का शासन नहीं, तो संसार का हर प्राणी अपने अपने सुख दु:ख का क्यों कर भागी बन रहा है। सोच विचार के पश्चात् इसे मानना ही है, कि एक न्यायकारी प्रजापति की सत्ता में संसार चलता है, यहां अद्भुत शासन की अद्भुत प्रणाली मैं पेश करने जा रहा हूं, उसका आधार व वर्णन साफ साफ यह है, कि प्रत्येक के अन्दर तोल माप का अपना यन्त्र विद्यमान है, अपने कृत्य कर्मों का ब्योरा स्वयं मानव बुनता है, जिसके अनुसार सुख दु:ख, पाप के फल, अवश्यमेव भोगना, अपने किये के जाल में स्वयं उलझ लेना, अपनी गवाही आप बनना, अपनी प्रारब्ध आप लिख

लेना, इस अवर्णनीय रचना की अत्यन्त अद्‌भुत प्रणाली है, संसार में अपराध नहीं छिपता न समाज से, न अपने आप से, इसी तथ्य को सम्मुख रख कर यह प्रयास—"कि अपने कर्मों के हम दोषी, अपनी पकड़ के हम साधन, अपनी सजा के हम अधिकारी बनते हैं," प्रस्तुत करके अन्तिम भेटे द्वारा नियन्ता का नियन्त्रण पेश करने जा रहा हूं, जिसका भाव अर्थात् सन्देश एक ही है "जो जैसा करता है वैसा भरता है और मानव अपनी सजा को आप ही बुलाता है, भुगतता है।" यद्यपि यह बात विचित्र सी लगती है, परन्तु हैं अत्यन्त सत्य। अपराधों का बीज जहां बुरे फल का दाता बनता है वहां अपनी प्रकृति को घटिया बना कर मानवता के स्तर को तोड़ देता है, जिससे जन्म जन्मान्तर के दुःख, हानि, अपयश इत्यादि का भागीदार बनना पड़ता है। ये बड़ी विचित्र बात है कि अपराधी कितना ही चतुर कितना ही चालाक न हो, जब वो अपराध करता है तो अपराध स्थल पर कोई न कोई ऐसा चिन्ह उससे छूट जाता है, जिससे उसकी पकड़ बन जाती है।

भारत की राजधानी दिल्ली के राष्ट्रीय संग्राहलय में २५ अगस्त १९६९ को हुई चोरी इतनी सफाई से की गई थी, कि अपराधी का कोई चिन्ह ही पता नहीं लगता था। वहां कांच के एक टूटे टुकड़े पर पड़े अदृश्य, अंगुल की छाप मुद्राओं के द्वारा ही अपराधी को पकड़ा और पहचाना जा सका। अन्य सूत्रों के आधार पर अपराधी की कद काठी का भी अनुमान लगाया जा सकता था। अपराधी ने खिड़की में लगी लोहे की सलाखों को मोड़ कर एक वर्ग फीट जगह बना ली थी, उसी से वो अन्दर घुसा था। राष्ट्रीय संग्राहलय में हुई इस चोरी में १ लाख ७५ हजार रुपये मूल्य के गुप्त एवं मुगलकालीन रतन जड़ित आभूषण

तथा स्वर्ण मुद्रायें चोर ले गये थे। अपराध विज्ञान के विशेषज्ञ इतना ही अनुमान लगा सके कि अपराधी अकेला था नाटे कद का तथा शक्तिशाली था। और पुष्ट देह का स्वामी था कांच के टुकड़े पर तीन अदृश्य अंगुल मुद्राएँ देखीं और उन्हें ग्रेपाउडर से उभारा गया और अपराधी चित्रित कर लिया गया।

इसी आधार पर उक्त घटना के ७० दिन बाद आंध्रप्रदेश के सिकन्दराबाद जिले के पिकेट ग्राम में छिपे हुए अपराधी यादगिरि को ५ नवम्बर को गिरफतार किया गया तथा उसके पास चोरी गया माल बरामद हुआ, अपराधी विज्ञान अंगुल—मुद्राओं के अंकित होने का कारण जिस अदृश्य और सूक्ष्म द्रव को मानते हैं, बताया जाता है, कि वह द्रव किसी संगीन अपराध के समय अपराधी के हाथों से अनजाने हो बड़ी तेजी से बहने लगता है।

ऐसे कितने ही अपराध हुए हैं जिनमें अपराधी ने अपना कोई सूत्र घटना स्थल पर नहीं छोड़ा किन्तु वे अंगुल मुद्रा के कारण पकड़ में आ गये।

२ जून १९४८ को वर्कशयर (इंग्लैंड) में ९४ वर्षीय श्रीमती फ्रीमैन की हत्या हुई। अपराधियों ने हत्या करने के बाद अपनी पहचान के सूत्र बड़ी सफाई से मिटा दिये थे। अपराधियों को खोजने के लिए चैम्मैन तथा हिशलैम्प नामक पुलिस अधिकारियों को नियुक्त किया गया। पुलिस अधिकारी जब घटना स्थल पर पहुंचे तो उन्हें ऐसा कोई सूत्र न मिला जिसे लेकर जांच को आगे बढ़ाया जा सके।

बहुत बारीकी से पड़ताल करने के बाद फिंगर प्रिण्ट ब्यूरो के प्रधान एफ० आर० चैरिल ने सब ओर से निराशा व्यक्त की, १७ कमरे वाले इस आलीशान मकान में दुबारा खोज की गयी, तो मृत महिला के बिस्तर पर एक छोटा सा कार्ड-बोर्ड

का टुकड़ा मिला। इस कार्ड बोर्ड पर बड़े हल्के निशान दिखाई दिये। बड़ी सावधानी से उन निशानों को रसायन द्वारा उभार कर फोटो लिया गया। यह कार्ड बोर्ड का टुकड़ा एक ऐसे कागज के डिब्बे का था, जिसे पचासों बार खोला व बन्द किया गया था। पता नहीं वे निशान किसके थे। फिर भी जो निशान मिले वो किसी व्यक्ति के दाएं अंगूठा तथा मध्यमा के निशान थे।

इस निशानी को स्काटलैंड यार्ड के फिंगर प्रिण्ट रिकार्ड से मिलाया गया तो पता चला कि वे निशान कुख्यात सेंधमार जार्ज रिसेल की उंगलियों के थे। वह वर्षों से अपराधी जीवन व्यतीत कर रहा था। इस हत्याकाँड में जार्ज रिसेल के फिंगर प्रिण्ट के अलावा अन्य कोई व्यक्ति न तो प्रत्यक्षदर्शी था और नहीं अन्य कोई दूसरे प्रमाण थे, जो उसे अपराधी सिद्ध करा सकते थे। परन्तु गुप्तचर अधिकारियों ने सारे काण्ड को इस प्रकार सूत्र दर सूत्र मिलाया, कि जार्ज रिसेल को अपराधी घोषित किया गया, और उसे सजा दे दी गयी।

घटनास्थल पर अपराधी की अंगुल मुद्राऐं कैसे अंकित हो गयी, इस संदर्भ में अपराध वैज्ञानिकों का कहना है, कि मनुष्य के हाथ में से एक अदृश्य द्रव निरन्तर द्रवित होता रहता है व्यक्ति जब अपराध करता है तो उसकी मात्रा बढ़ जाती है। मात्रा बढ़ जाने का कारण अपराधी में चलते रहने वाला मानसिक द्वन्द, पकड़े जाने का डर तथा आत्मा की फटकार के कारण उत्पन्न हुई घबराहट ही बताया जाता है इसलिए अपराधी की अंगुल मुद्राएं उस स्राव के कारण अधिक स्पष्टतः अंकित हो जाती है इसी आधार पर सैकड़ों व्यक्तियों के अंगुल

मुद्राओं के बीच भी अपराधी की अंगुल मुद्राएं पहचानी जा सकती है।

अभी कुछ ही वर्ष पूर्व की घटना है, कि अर्जनटाइना के ग्रामीण क्षेत्र में, किसी व्यक्ति ने एक ग्रामीण को गोली मार कर हत्या कर दी, गोली इतनी नजदीक से मारी गई थी कि मृत व्यक्ति की खोपड़ी को छेदते हुए वह पीछे खड़े वृक्ष के तने में जा घुसी। हत्यारा पकड़ा गया, प्रत्यक्षदर्शी गवाह साक्षात् और प्रमाणों के बावजूद भी वकीलों ने कुछ ऐसे कानूनी पेच निकाल दिये कि अपराधी को सन्देह का लाभ मिल गया, और वह बरी हो गया। इस घटना के बाद वही व्यक्ति अपने खेत पर खड़ा होकर मेंड पर लगे वृक्ष कटवा रहा था, वृक्ष वही था, जिसके नीचे उस मजदूर को गोली मार कर हत्या की गई थी जब वृक्षको काटा जा रहा था, तो वृक्ष कट कर कुछ इस प्रकार जमीन पर गिरा, कि उसमें तीन वर्ष पूर्व फंसी गोली बंदूक से छुटी गोली की तरह उसी खेत मालिक की कनपटी पर लगी, जिसने कि मजदूर को गोली मार कर हत्या की थी।

पेड़ से छूटी गोली के कारण, वो व्यक्ति घटना स्थल पर ही मर गया, जिसने भी इस घटना का वर्णन सुना, उसे निर्विवाद मानना पड़ा, कि शासन कर्त्ता विचित्र न्याय करता है। चाहे अपराधी को समाज दण्ड न दे, चाहे कानून व पुलिस न दे, परन्तु जिसके प्रति अपराध किया गया है, उनकी आत्मा, स्वयं अपनी आत्मा, और ईश्वरीय नियम, अपराधी को बड़ी विलक्षणता से उसके किये का दण्ड देते हैं।

एडीन्बरा में १९०५ में एक अद्भुत हत्याकाण्ड हुआ। वहाँ की एक मकान मालकिन मिस जूली की हत्या, उसी मकान में

रह रहे किरायेदार चारली ने कर दी थी। चारली एक पुलिस अधिकारी था और उसी थाने का इन्चार्ज था, जिसमें कि जूली की हत्या की रिपोर्ट दर्ज करायी गई थी। अत: चारली ने इस रिपोर्ट पर कोई कार्यवाही नहीं की, और केस फाइल कर दिया। यह घटना क्रम मार्च १६०५ का है। तत्पश्चात् उस मकान में जो भी किरायेदार आता, जूली की आत्मा उस केस को पुन: चालू कराने तथा अपराधी को दण्ड दिलवाने के लिए कहती। परन्तु लोग जूली की आकांक्षा को पूरा कराने के स्थान पर डर के मारे मकान छोड़कर चले जाते। वर्ष १६२० का लगा, जब मि० डिक्सन पुलिस अधिकारी ने उस मकान में रिहायश ली। जूली की आत्मा ने डिक्सन से भी वही कुछ कहा जो दूसरे किरायेदारों से कहती रहती थी। मि० डिक्सन ने इन मानसिक वेदनाओं को गम्भीरता से पकड़ा।

उन्होंने एन्डबिरा के उस थाने में दबा दी गई १५ वर्ष पुरानी फाईल फिर निकलवाई, उसमें जूली के नौकर द्वारा यह शिकायत दर्ज करायी थी कि किसी ने उसकी मालकिन को गला घोंट कर मार डाला है। इस रिपोर्ट पर उस समय के थाना अध्यक्ष ने यह टिप्पणी लिखवायी थी कि जिस समय जूली की हत्या हुई थी, उस समय चारली गश्त पर गया हुआ था। अनुमान यह किया गया कि मिस जूली ने अपने अकेलेपन से ऊब कर स्वयं आत्म हत्या कर ली है। मि० डिक्सन भी तो पुलिस अधिकारी थे, उनकी जांच का ढंग अपना था। सारे ग्रामीण इकट्ठे किये गये और एकत्र किये गये प्रमाण चारली के विरुद्ध जाते थे, जिनके आधार पर चारली को गिरफ्तार किया गया। तुरन्त ही चारली ने अपना अपराध स्वीकार किया, और यह कह डाला कि जूली के साथ उसके अवैध

सम्बन्ध थे, इसलिए उसनें ही उसकी हत्या की थी। प्रेम ढोंग रच कर चारली नें जूली से विवाह का निर्णय कर रखा था।

इस सम्बन्ध में जूली गर्भवती हो गयी थी और विवाह के लिए दबाव डाल रही थी। इस सारे काण्ड को निपटा देनें की खातिर चारली नें जूली का काम तमाम कर दिया था और अपनें पुलिस अफसर होनें का फायदा उठा लिया।

अपराधी जब पाप करता है उसके अपकर्म उसके लिए भूंत बनकर उसका पीछा करते हैं जब तक अपराधी दण्ड पा न ले, किया हुआ दुष्कर्म, भूत की शक्ल में आमने-सामने आगे-पीछे रहता है। २४ जनवरी ७६ की घटना है मझगवां बिहार के सोनपुर गांव में एक बनिये के यहां नौकरी कर रहे थे—२६ वर्षीय युवक भवानी जिसने १६ वर्षीय दुलारी के साथ मौका देखकर अपनी पाश्विक बासना पूरी की, जिसके बाद दुलारी की हत्या करके, लाश नदी में फैंक दी, सारा कांड बड़ी सफाई से किया, न पुलिस को हत्या का सुराग मिल सका, न कोई और साधन रहस्य उद्घाटन कर सका। परन्तु भवानी के कानों में उस निर्दोष व्यक्ति की चीत्कार हमेशा गूंजती रहती। मूक याचना भरी निगाहें, चेहरे पर विवशता के भाव, आतंक की काली छाया, भवानी की आँखों में घूमती रहती। यह वेदना भवानी अधिक काल तक न झेल सका। मार्च ७६ में मम्मगांव वासियों ने भवानी को सड़कों पर पागलों की तरह चिल्लाते-चीखते देखा और कुछ दिन बाद उसने अपने गले में फांसी लगा ली।

भारत की स्वतन्त्रता के बाद एक स्वतन्त्रता दिवस पर ढाका से एक विदेशीय युवती हवाई जहाज से पालम हवाई अड्डे पर उतरी। युवती युवती थी, एक टैक्सी वाले ने आगे

बढ़ करके उसे उसके निश्चित स्थान पर ले जाने के लिए टैक्सी आगे की, कार पालम अड्डे से बाहर निकली और टैक्सी ड्राईवर के भी होशोहवास बाहर निकल पड़े। टक्सी ड्राईवर यात्री को बयाना की ओर ले गया, उससे दुष्कृत किया, और रात पड़े; एक सुनसान स्थान पर उसे जला दिया। साफ का साफ, वो अपने काम पर लौट आया। उधर से ढाका दिल्ली से बोला, जहां उस युवती को पहुंचना था, वहां से उस युवती के न पहुंच पाने की सूचना घूम निकली। पुलिस ने बड़ी जाँच-पड़ताल की, युवती का दिल्ली पहुंचना, एक टैक्सी पर चढ़ना, और शहर को रवानगी का प्रमाण तय पाया। टैक्सी ड्राईवर साफ साफ अपराध का इनकार करता हुआ मजे में घूमता रहा। दो-चार दिन के पश्चात्, जंगल में रात के समय, एक आग की कहानी सुनने में आयी, पुलिस ने वहां पहुंच करके किसी के वहां जलाये जाने की घटना का वर्णन पाया परन्तु वह युवती का दाह था और इस टैक्सी ड्राईवर ने दाह किया था, प्रत्यक्ष प्रमाण पुलिस को साहस नहीं दें रहे थे कि वो टैक्सी ड्राइवर को हाथ डालें। पुलिस पीछे लगी रही—एक दिन एक कोट की छोटी से कतर दाह स्थान पर उलकें हाथ लगी वे कतर जलने वाले कें पहनें हुये कपड़ों की करार दी गई, परन्तु निर्जीव कतर, क्या बोलती वे बेजान चुप्पी की व्याख्या मात्र थी।

पुलिस यदि सच्चे हृदय से किसी अपराध को परिणाम तक पहुंच जाने में लग जाये, तो लक्ष्य दूर नहीं हुआ करता। पुलिस ने फिर टैक्सी की जांच पड़ताल की बड़े ध्यान से कोनाकीना और अंग प्रत्यङ्ग छाँट डाले। आखिर युवति के काटे की एक और कार को कतर डिक्की के दरवाजे के कब्जों में धंसी

हुई पायी गई। मालूम यह होता था कि शीघ्रता से उस युवती का सामान निकाला गया अड़े हुए कपड़ों को जोर से खींचते हुए, एक लीर कब्जों में अटक गयीं और अन्त में वही लीर अब उधर दाह स्थान पर मिली हुई लीर दोनों मिलकर बोल पड़ीं कि लीरें उसी युवती के कोट की थीं, जिसकी हत्या की गई थी।

छोटे से यह निशान बड़े से जुर्म की साक्षी बन गयीं, टैक्सी ड्राइवर पकड़ा गया। उसने अपना अपराध मान लिया, और सजाये मौत का भागीदार बना। ये छोटी छोटी बातें बड़ी-बड़ी बातों की साक्षी लेती हैं कि अपराध छिपा नहीं करते, छिपाने पर भी एक तरफ हो जाते है और भविष्य की गोद में शनैः शनैः पलते हुए, एक ब्योरा बना लेने का स्थान लेते हैं, और मेरी भेंट का एक प्रमाण देते हैं कि मानव मानव है भगवान भगवान है, मानव अपना काम करता है भगवान अपना दाम देता है, संसार अपना निशान लेता है।

हिटलर अपने समय का माना हुआ व्यक्ति सिद्ध हुआ है। वक्त की अंग्रेज सरकार, हिटलर के नाम से जहाँ डरती थी, वहां रेडियो पर उसका नाम सुनने की आज्ञा नहीं देती थी। हिटलर यद्यपि जर्मन नहीं था परन्तु यहूदियों का माना जाना एक शत्रु था। यहूदियों को नस्ल को मिलिया मेट कर देने के लिए हिटलर गर्म था, ईसाई धर्म की कब्र पर नाजी धर्म की स्थापना उसका एक स्वप्न था। हिटलर ईसा का स्थान लेना चाहता था, उसके स्थान पर वक्त पाकर लाखों करोड़ों लोग हिटलर का नाम लेने वाले बनें। हिटलर धर्म की पालना करेंगे, इसलिए उसने अपनी लायब्रेरी में वेद बाइबल कुरान और दूसरे धर्मों की किताबों को बन्द कर डाला था!

ईसा का स्थान लेने वाले हिटलर ने १० हजार वक्तियों का खून पिया जो खून उसके गले में वंध चुका था और इतिहास को नया रंग देने की पूरी तैयारी हो रही थी। लाखों लोगों की खुदाई लेने वाला हिटलर स्वयं २५ प्रकार के रोगों का शिकार था, जिसमें आतशिक जैसा रोग भी शामिल था। उसके विशेष विश्वासपात्र हिमला से एक दस्तावेज मिला है जो कि २५ पृष्ठों की एक रिपोर्ट है, जिसमें हिटलर के तमाम रोगों का विस्तार पूर्वक वर्णन है।

संकल्प कितना, माल कितना, अपना जर कितना, मालिक की रजा कितनी, आखिर जिस मालिक ने धरती की रक्षा करनी है, वो इतने रोगों के स्वामी को ईसा जैसे महान व्यक्ति का स्थान कैसे लेने देता, चुनाचे हिटलर बड़े प्रभुत्व का स्वामी, नये धर्म का नाखुदा, नये युग का व्यक्तित्व, अपनी मौत आप मरा, नया धर्म भी गया, नया ख्वाब भी गया, सफाई आखिर निखर पड़ी, जो हिटलर अनेक भाग्यों का निर्माता बन रहा था, अपने आप को अपनी ही गोली का शिका करने में सत्कृत हुआ। ये एक जिन्दामिसाल है, कि अपने ही कुकर्म अपना ही सफाया किस सफाई से कर पाते हैं, यही अद्भुत लीला हमारे जानने और पहचानने की है।

ईश्वर है वो शक्ल में नहीं आता मगर गुप्त रीति से अपनी सत्ता बनाये रखता है, यह एक बड़ी अद्भुत लीला का प्रमाण हैं। २० अप्रैल को हिटलर का जन्म दिन पड़ता था। १६४१ के वर्ष में हिटलर के जन्म दिन पर, उसके सम्मानित जनरल के द्वारा यही तोफा पेश होता था, कि ३० लाख लोग पैदल चला कर पोलैंड को भेजे जायेंगे, उनके परिवारों को रेलगाड़ियों और समुद्री जहाजों में ठूंस ठूंस कर बन्द करके पीड़ित किये

जायेंगे, लाखों लोगों का सकड़ों मीलों का सफर एक अपने में भयानकता थी, जिसकी सूचना—पत्र हिटलर को उसके जन्म दिवस पर, तोफा के रूप में पेश किया जाना था। हिटलर का हुकुम था परन्तु लाखों व्यक्तियों का एक ही भगवान चुपके से सब देख रहा था, जमाना वो था, जब हिटलर का हुकुम न टलने वाली एक घटना हुआ करती थी, परन्तु हिटलर का हुकुम टलपाया, ये पाप करने वाले हिमलर ने अपने भाग्य में एक नया रंग और नया ढ़ंग देखा। हिम्लर को पेट का दर्द हुआ करता था, अनेक उपचारों से उसे निरोगता नहीं मिली, एक विदेशिय डा० क्रिस्टन की ख्याति हिमलर के कानों तक पहुंची, डा क्रिस्टन कभी अपने भाग्य को टटोलता-२ चीन और तिब्बत के क्षेत्रों में मानव रोगों का उपचार मालिश, रगों की पहचान, और रगों के कंट्रोल की कला द्वारा सीख चुका था, अपने रोग से अत्यन्त निराश हिमलर डा० क्रिस्टन के हाथ पड़ा। रग सम्भाली गई, हिमलर की नब्ज-रग हाथ आ गयी, जो उसे सताती गई, डा० क्रिस्टन को भगवानका सन्देश मिला, निरापराधी यहूदियों की दुआएँ मिलीं, और ये मर्दे-खुदा अपने इस संकल्प में इतना सफल हुआ कि उसने हिटलर के जुल्मों, अपराधों, हत्याओं, काण्डों की, पूर्ति जो केवल हिमलर द्वारा ही होती थी, बदलवा डालीं, वे तीस लाख लोगों का सफाया भी बच गया, कई हजार यहूदियों को गोली का निशाना बनाया जाना था, वो भी हुकम बदल दिया गया।

अवसर के अनुसार २०.१.४५ को हिमलर के हाथों ये भी हुकम सादर हुआ कि उन्हें गोली से नहीं उड़ाया जायेगा। एक पर एक भगवान के रंग बदलते गये, और हत्याओं का काण्ड बदलता गया। न ही हिमलर को पेट का दर्द हुआ होता.

न क्रिस्टन की मुलाकात हुई होती, और न इस तरह हिटलर के आंतक बदले जा सकते। लाखों की जानें बच गयीं, हिटलर का अपना सफाया हो गया, हिम्लर जो सारे काण्डों का नेता था, अपने व्यथित जीवन से बेजार हुआ। हमारे ही समय के ये दृष्टान्त कि अपराधी अपराधों से नहीं बचता, बेगुनाह बच जाया करते हैं, भगवान जिंदा है, जो अपनी प्रजा की स्वयं देखभाल करता है यह अद्भुत सत्य, हमारे अद्भुत जीवन में, एक अद्भुत चमत्कार, ज्योति की साक्षी लेते हैं, ताकि यदि सौभाग्य हो हमारे, तो हम मान जाने वाले मान जायें, कि यह संसार किसी सर्व व्यापक प्रजापति के नियन्त्रण में, अत्यन्त सफलता और सहजता से चलता है। यदि मान जायें, यही अद्भुत कथाओं का अद्भुत सारांश है, ताकि हमारा अद्भुत जीवन अद्भुत साक्षी द्वारा अद्भुत प्रगति का, अद्भुत दृष्टान्त बनें।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिटलर ने लाखों निरपराधियों का खून पिया परन्तु वह भी तो जीवन भर चैन से नहीं बैठ पाया। कहते हैं वह इतना सशंकित रहता था कि रात में चार-पाँच घंटे से अधिक नींद नहीं ले पाता था, इस दौरान में भी वह तीन चार बार उठ बैठता और अपने सिरहाने रखी रिवालवर तथा अन्य सुरक्षा सम्बन्धी प्रबन्धों की जांच करके देखता, सतत संशय, भय, त्रास भी तो बड़ा अभिशाप है—दण्ड है—लाखों की बददुआएं भी तो एक अपने ढंग की मौत है, लानत है तथा असत्पात्रता का प्रमाणपत्र है।

यही हाल मुसोलिनी का है, वह शासक था, अरबों रुपए की सम्पत्ति का स्वामी, सोने की छड़ें, हीरे जवाहारात, पौण्ड, पैन्स और डालरों के अम्बारों से घिरा हुआ अपने नरपिशच,

युद्ध से हारने के पश्चात्, जान बचाकर स्विटजरलैंड की ओर भागा, पर सफलता न पाकर, कम्युनिस्ट सेनाओं द्वारा गोली से उड़ा दिया गया।

यह तो हुई बाहरी दण्ड व्यवस्था, जिससे बच निकलने की सम्भावना मानी भी जा सकती है, परन्तु परमात्मा ने एक ऐसा न्यायाधीश इसी शरीर में बिठा दिया है जो व्यक्ति के कर्मों को देखता रहता है और यथा समय दण्डित भी करता है। कहते हैं मृत्यु के समय अपने जीवन भर के कर्मों की याद आती है और वह स्मृतियां व्यक्ति को दग्ध करने लगती हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि पराभव के समय व्यक्ति को अपने सारे क्रूर कर्म याद आते हैं और वह अपने कर्मों के भय से डरकर अपने आप का उत्पीड़न करने लगता है।

१६२० से १६६६ तक जर्मनी के सैशन कोर्ट का न्यायाधीश कार्पेज बड़ेकठोर और क्रूरप्रगति का स्वामी था—४६ वर्ष इस सीट पर उसने ३० हजार पुरुषों तथा २२ हजार स्त्रियों को फांसी चढ़ाया इस तरह औसतन पांच व्यक्ति प्रतिदिन उस द्वारा फांसी की सजा प्राप्त करते। फांसी चढ़ा ने वाले स्थान वह स्वयं जाता, जहां उसे रस मिलता। इतना ही उसके संतोष का स्थान न था अपितु वह स्वयं यह भी तसल्ली करता कि शिकारी कुत्ते तथा अन्य पशु-पक्षी मृतक के मांस के टुकड़े नोंच पाते। समय आया—वही न्यायाधीश कुछ ऐसे लोगों से पकड़ा गया जिनके सम्बन्धियों को उसने निरापराध पकड़ा तथा फांसी पर लगाया था। उन लोगों ने कार्पेज़ को एक ऐसे कमरे में बन्द किया जहाँ हजारों बिच्छू पहले ही रख दिये थे। बिच्छुओं ने उसकी महफल मनाई, तीन दिन में सब ने काट-काट

कर उसकी जान ली। उसके शरीर पर कोई ऐसा स्थान नजर न आता था जहां बिच्छू के डंक न लगे हों।

१९१८-१९ में रूस में कम्यूनिस्ट क्रान्ति के युग में ज़ार-शाही के स्तम्भ एक २ करके भाग रहे थे तथा सुरक्षित स्थान पर छिपने का प्रयास कर रहे थे। इन भागने वालों में से एक था इवान, जो अपनी पत्नी, अन्ना बेटी काल्या और पुत्र कोल्या के साथ भागता हुआ सेंट पीटर्स वर्ग के समीप एक ग्रेनाइट पत्थरों से बनी काटेज में शरण ले पाया, उसके साथ उसका पुराना बूढ़ा मल्लाह भी था। इवान ने अपने वैभव काल में सैंकड़ों महिलाओं से अपनी वासनापूर्ति की थी। उन देवियों में से अनेक ने इस क्रूर कर्म से बचने की खातिर आत्म-हत्या कर ली थी, अनेक अबोध बालिकाएं केवल इस क्रूर कर्म के भय से मर भी गई थीं। अन्ना का हाल यही, कहीं उसके चरित्र पर धब्बा न पड़े, उसने अपने भाई और बाप को मरवा भी डाला था। काटेज में रहते उनको अपने दुष्कृत्य याद आने लगे, प्रत्येक पत्थर मृतकों की आत्मा का स्वरूप, उनको भयानक लगने लगा। आखिर अन्त में ताड़ना से व्यथित, इवान ने अपनी धर्मपत्नी तथा बच्चों को बूढ़े मल्लाह के साथ दूर रवाना कर दिया ! रास्ते में अन्ना इतनी क्षुब्ध हो उठी कि उसने अपने कपड़े फाड़ डाले, बाल नोंच लिए और नदी पार करते उसमें कूद पड़ी और मर गई ! उधर इवान अपनी ही आत्मा से पीड़ित नेवा झील में कूद कर आत्महत्या का भागीदार हुआ। स्मरणीय यह कि इसी झील ने इवान तथा अन्ना को क्रूरता के शिकार अनेक लोगों को शरण दी थी आखिर आतंक नेता को भी उसने अपनी गोद में स्थान देकर इतिहास का पन्ना पूरा किया।

६ अगस्त १९४५ को जापान के हिरोशिमा नगर पर, इसके पश्चात् नागासाकी पर दूसरा अणुबम अमेरिका ने गिरवाया जिससे ६० हजार व्यक्ति तत्काल मर गए, इनके परिणामस्वरूप कम से कम डेढ़ करोड़ बच्चे शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से विकृत हुए। हजारों वर्ग मील भूमि अनोपजाऊ हो गई, २० लाख व्यक्तियों को कैंसर ल्यूकोमिया हृदय रोग-टी० बी० इत्यादि से मरना पड़ेगा, और निशाना दागने वाला अत्यन्त वीभत्स हत्याकाण्ड का वोझा अपने ऊपर लिया है। कहने को उनके हक में कहा जाता है कि ऐसे विशाल हत्याकाण्ड के प्रवर्तक, अपनी सरकार की आज्ञा बजा लेने में बद्ध थे पर निकृष्ट कार्य करने को जिम्मेदारी से वह छूट नहीं सकते थे, तर्क के लिए यह रूप स्वीकारा जा सकता है। पर इस बात से भी तो इन्कार नहीं होता कि वह मारक लोग अपने में शर्मिन्दा, मन व आत्मी के दुष्चरित के साक्षी, बड़े बेचैन, जैसे उनके अपने भीतर आग लग रही हो, तूफान उठ रहा हो, उनका मस्तिष्क ठीक रहा हो, नकारा नहीं जा सकता, जो स्वयं में उन्हें जिन्दा जलाती रही, दाह करती रही, अपनें में आप भयानक ताण्डव का रूप प्रस्तुत करती रही।

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में जहां रोगों की औषधि उपचार का वर्णन है, वहां उनकें मूल कारणों में यह भी बताया गया है कि धर्मोनुष्ठानों के माध्यम से पवित्र जीवन क्रम भी रोग निवारण का आवश्यक अंग है। चरक संहिता में एक प्रसंग में छात्र अग्निवेश आचार्य चरक से पूछते हैं, भगवन् संसार में पाए जाने वाले अनेक रोगों का मूल कारण क्या है? आचार्य उत्तर देते हैं लोगों के दुष्कर्म जिस स्तर के होते हैं उसी के अनुरूप उन्हें पापों का प्रतिफल शारीरिक व मानसिक

व्याधियों के रूप में प्राप्त होता हैं, नैपोलियन के पास साधनों की होड़ थी, यश प्रतिभा तथा विजय उसकी सतत कामना व लक्ष्य था, पर सेंटहेलना के कारावास में उसने अपने साथियों से स्वयं कहा था। बीती जिन्दगी के इतिहास पर नजर डालने पर मुझे कुल मिलाकर छः दिनों की ऐसी स्मृति है जब मैं प्रसन्नता का अनुभव करसका, शेष दिन आवेग व आक्रोश के स्वागतगार थे। वास्तव में विचार शक्ति, निर्मल मन, बलवान आत्मा, ईश्वरीय विश्वास ही ऐसे अचूक पतवार हैं जो जीवन नैय्या को पार लगाते हैं। पाश्चात्य देश उन परीक्षणों में बढ़ रहे हैं। खास तौर पर जब वहाँ वीभत्सकाण्ड भी भयानकता ता ताडण्व नृत्य देख चुका है। विग्स आफ हींलिग, मार्च आफ फेथ संस्थाओं द्वारा नया युग लाया जाने के प्रयास किये जा रहे हैं। इन प्रयोगों में वहाँ के नार्थ केरोलिना प्रान्त के हेब्रान आश्रम की बहुत ख्याति सुनी गई है। इनके संस्थापक डा० दिलाई आरोग्य प्राप्ति के लिए प्रभु चिन्तन तथा प्रभु प्रार्थना को मुख्य स्थान देते हैं। आगन्तकों को तत्काल शान्ति मिलती है, कष्ट हल्का होता है। क्षय से पीड़ित एक लंगड़े व्यक्ति चार्ल्स फिल्मोर को सब ओर से निराशा मिली, जब उसका रोग क्षय घोषित कर दिया गया, तब उसने केवल प्रार्थना का मार्ग पकड़ा, इतने जोर, सतत प्रयास से कि सफलता उसके समीप आने को उत्सुक हो उठी। एक छोटे से किरायें के मकान इसी माध्यम का निर्णय हुआ प्रार्थनामय जीवन की प्रयोगशाला लगाई गई अन्य रोगियों को भी ज्ञान हुआ, आश्रम का विस्तार हुआ, अब वहां की रूपरेखा यह है कि १२०० एकड़ भूमिमें उनका एक आश्रम बन गया है जहाँ हजारों की संख्यामें रोगी निवास कर रहे हैं। सात सौ कर्मचारी काम करते हैं, दो साप्ताहिक तथा

सात मासिक पत्र २० लाख की संख्यामें प्रतिमास प्रकाशित होती हैं। प्रतिदिन वहां ६ हजार पत्र आते हैं,वहां से छपने वाले प्रार्थना पत्र (साहित्य) संसार की १४० प्रमुख भाषाओं में प्रकाशित होते हैं। प्रार्थना ही प्रार्थना उनका मौलक सिद्धान्त है। वहां प्राप्त हुई सफलता एक अद्भुत जीवित दृष्टान्त है। यह वास्तविकता हमारी इस अन्तिम भेंट की सही साक्षी है। अद्भुत से अद्भुत हो जाने की प्रतिमा है, एक प्रयोग है, एक पूर्ति है, विराम है, समाप्ति है, तथा प्रेम व श्रद्धा से हरी भरी एक उत्कण्ठा हैं, उप्सुकता है, शुभ प्रयास को बोलती तस्वीर है यदि किसी के मनमें स्थान ले सके तो मैं अपने को सन्तुष्ट तथा सम्मानित मान लेने में प्रसन्नता अनुभव करूँगा भगवान का बड़ा धन्यवाद है जो तनिक परिश्रम को किसी दिशा में ले जा सका हूं।

———